AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

SYLLABUS

पर्यावरण अध्ययन
(ENVIRONMENT STUDIES)

Rationale

A diploma holder must have knowledge of diffeent types of pollution caused due to industries and construction activities so that he may help in balancing the ecosystem and controlling plllution by various control measures. He should also be aware of environmental laws related to the control of pollution. He should know how to manage the waste. Energy conservation is the need of hour. He should know the concept of energy management and its conservation.

DETAILED CONTENTS

1. **Introduction**
   - 1.1 Basics of ecology, eco system—concept, and sustainable development, Resources renewable and non renewable.

2. **Air Pollution** *(04 Periods)*
   - 2.1 Source of air pollution. Effect of air pollution on human health, economy, plant, animals. Air pollution control methods.

3. **Water Pollution** *(08 Periods)*
   - 3.1 Impurities in water, Cause of water pollution, Source of water pollution. Effect of water pollution on human health. Concept of dissolved O_2, BOD, COD. Prevention of water pollution—Water treatment processes, Sewage treatment. Water quality standard.

4. **Soil Pollution** *(06 Periods)*
   - 4.1 Sources of soil pollution
   - 4.2 Types of Solid waste—House hold, Hospital, From Agriculture, Biomedical. Animal and human, excreta, sediments and E-waste
   - 4.3 Effect of Solid waste
   - 4.4 Disposal of Solid Waste—Solid Waste Management.

5. **Noise Pollution** *(06 Periods)*

   Source of noise pollution, Unit of noise, Effect of noise pollution, Acceptable noise level, Different method of minimize noise pollution.

6. **Environmental Lagislation** *(08 Periods)*

   Introduction to Water (Preventiona nd Control of Pollution) Act 1974. Introduction to Air (Prevention and Control of Pollution) Act 1981 and Environmental Protection Act 1986. Role and Function of State Pollution Control Board and National Green Tribunal (NGT), Environmental Impact Assessment (EIA).

7. **Impact of Energy Usage on Environment** *(06 Periods)*

   Global Warming. Green Houe Effect, Depletion of Ozone Layer, Acid Rain. Eco-friendly Material. Recyycling of Material, Concept of Green Buildings.

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

अध्याय

1

परिचय (Introduction)

पारिस्थितिकी (Ecology)—विज्ञान की वह शाखा, जिसके अन्तर्गत पर्यावरण एवं जीवों के परस्पर सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है, पारिस्थितिकी (Ecology) कहलाती है। Ecology शब्द दो ग्रीक शब्दों Oikos तथा logos से मिलकर बना है, जिसमें Oikos का अर्थ है 'रहने का स्थान' तथा logos का अर्थ है 'विज्ञान'। इन दोनों शब्दों को मिलाकर Ecology नामक नया शब्द बनाया गया, जिसका अर्थ है वह आवास, जहाँ जीव बसता है।

थीयोफ्रेस्टस को विज्ञान (पारिस्थितिकी विज्ञान) का जन्मदाता माना जाता है। Ecology के अन्तर्गत समुद्र, मरुस्थल, जंगल आदि सभी क्षेत्र आते हैं, जिसमें मानव-जाति, पेड़-पौधे, जीव-जन्तु आदि एक-दूसरे पर निर्भर होकर भोजन, आवास तथा अन्य कार्यों के लिए पर्यावरणीय सम्बन्ध बनाते हैं।

पारिस्थितिकी को मुख्यत: दो भागों में बांटा गया है—

(i) स्वपारिस्थितिकी (Autoecology) (ii) संपारिस्थितिकी (Synecology)

स्वपारिस्थितिकी (Autoecology)—इसके अन्तर्गत किसी वातावरण विशेष में एक ही प्रजाति के जीवों का पोषण, वृद्धि, जनन, परिवर्धन एवं जीवन-चक्र आदि का अध्ययन किया जाता है।

अत: यह एक जाति के लिए ही उपयुक्त होता है।

संपारिस्थितिकी (Synecology)—इसके अन्तर्गत किसी एक विशेष वातावरण में रहने वाले विभिन्न जीव समुदायों, समष्टियों एवं पारितन्त्र (Ecosystem) में सजीवों के आपसी सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है।

मानव भी पारितन्त्र (Ecosystem) का ही एक भाग है क्योंकि यह भी किसी न किसी प्रकार से पर्यावरण में उपस्थित सभी जीव-जन्तुओं, पेड़-पौधों आदि पर निर्भर करता है।

पारिस्थितिकी तन्त्र (Ecosystem)—Ecosystem, English भाषा के दो शब्दों से मिलकर बना है।

Ecosystem = Eco (परि या चारों ओर)
+ System (तंत्र या व्यवस्था)

अत: पारिस्थितिक तन्त्र एक अन्त:क्रियात्मक एवं आत्मनिर्भर प्राकृतिक व्यवस्था है।

Ecosystem के अन्तर्गत Biotic तथा Abiotic दोनों वातावरण सम्मिलित हैं और ये दोनों एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं। इनमें पारस्परिक सम्बन्ध इतना है कि एक के बिना दूसरे का कोई महत्त्व नहीं है।

Components of Ecosystem —

(1) अजैव घटक (ABIOTIC) (2) जैव घटक (BIOTIC)

(1) अजैव घटक (ABIOTIC)

(a) अकार्बनिक पदार्थ (Inorganic Matter)—इसके अन्तर्गत N_2, O_2, P, S, H_2 व H_2O हैं। वातावरण में इनका चक्रण होता रहता है, जो जीवन के लिए आवश्यक है।

(i) जलीय चक्र—भूमण्डल पर पानी लगभग 73% है। इसका 97% समुद्र में है तथा शेष भाग पृथ्वी के अन्य भागों में निहित है।

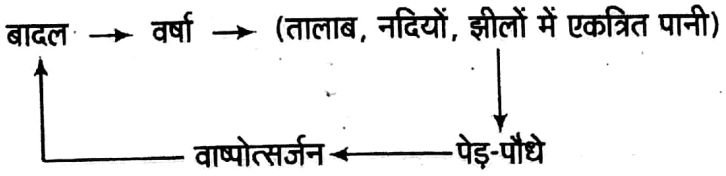

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

(ii) **नाइट्रोजन चक्र**—शरीर में नाइट्रोजन, प्रोटीन के रूप में जीवन दायक है। पेड़-पौधों तथा जानवरों द्वारा इसका अनुपयोगी भाग पृथ्वी पर आता है, जिसका एक चक्र बनता है।

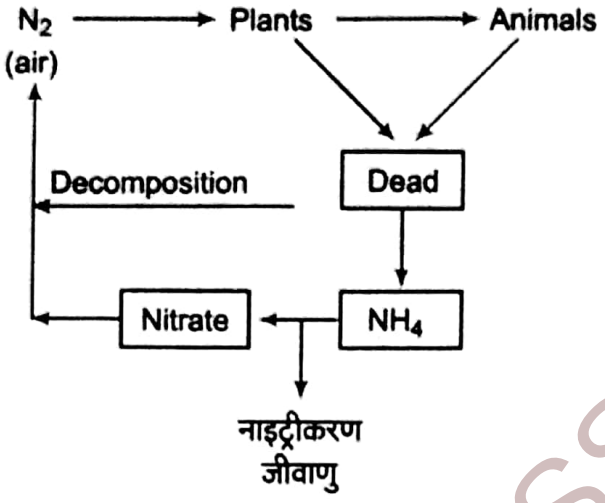

(iii) **कार्बन चक्र (C चक्र)**—वायुमण्डल में C, CO_2 के रूप में लगभग 0·039% है। यह मानवीय क्रियाओं, औद्योगीकरण (Industrialisation), जंगलों के कटाव, ज्वालामुखी आदि से निकलकर वायुमण्डल में मिल जाता है।

जैविक अपघटन से ही लगभग 95% CO_2 gas प्राप्त होती है।

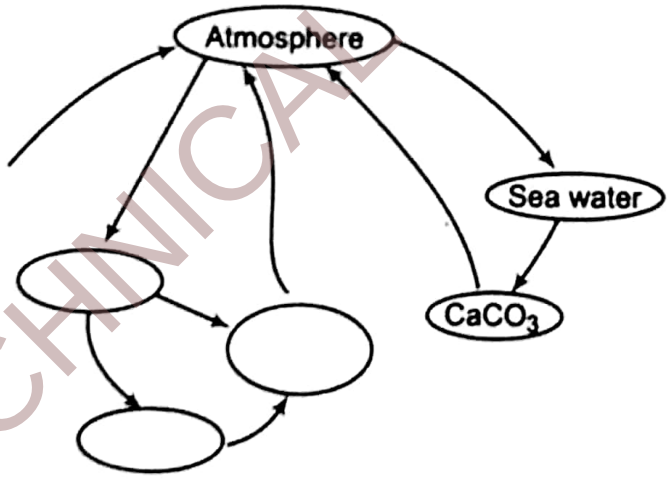

(b) **कार्बनिक घटक** (Organic Matter)—इनमें Carbohydrate व Protein आदि पदार्थ सम्मिलित हैं। विभिन्न कार्बनिक पदार्थ चक्रण द्वारा जीवीय घटक में प्रवेश कर सरल कार्बनिक पदार्थों में बदल जाते हैं तथा जीव की मृत्यु के पश्चात् पुन: कार्बनिक पदार्थ वातावरण में मिल जाता है।

(c) **जलवायुवीय तथा भौतिक घटक** (Climatic Components)—इनमें ताप, जल, प्रकाश, वायु, आर्द्रता व मृदा आदि शामिल होते हैं।

2. **जैव घटक** (BIOTIC)

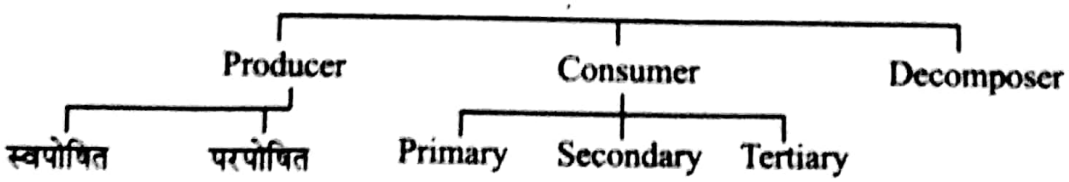

(a) **उत्पादक** (Producer)

(i) **स्वपोषित**—ये हरे पादप एवं बैक्टीरिया हैं, जो सूर्य के प्रकाश में अकार्बनिक पदार्थों द्वारा जटिल कार्बनिक पदार्थ बनाते हैं, इसलिए हरे पादपों को स्वपोषित कहते हैं।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

(ii) **परपोषित**—जंतु परपोषित होते हैं और पौधों द्वारा निर्मित कार्बनिक पदार्थों को अपना भोजन बनाते हैं। अत: इन्हें परपोषित कहते हैं।

(b) **उपभोक्ता** (Consumer)

(i) **प्राथमिक उपभोक्ता** (Primary Consumer)—वनस्पति का सेवन करने वाले जन्तुओं को शाकाहारी प्राणी कहते हैं। ये Ecosystem के Primary Consumer हैं।
Examples—मृग, शावक, चूहा व कीट।

(ii) **द्वितीयक उपभोक्ता** (Secondary Consumer)—ये माँसभक्षी जन्तु होते हैं जो शाकाहारी प्राणियों का भक्षण करते हैं।
Examples—साँप, लोमड़ी, बिल्ली।

(iii) **तृतीयक उपभोक्ता** (Tertiary Consumer)—ये दूसरे मांसभक्षी प्राणी होते हैं, जो द्वितीय उपभोक्ताओं या प्राथमिक उपभोक्ताओं का भक्षण करते हैं।
Examples—शेर, गिद्ध व उल्लू।

(c) **अपघटक** (Decomposer)—ये Ecosystem के सूक्ष्म जीव हैं, जैसे—मृतजीवी कवक व बैक्टीरिया, जो मृत व क्षय होते हुए उत्पादकों व उपभोक्ता का संक्रमण करके जटिल कार्बनिक पदार्थों को सरल यौगिक में अपघटित कर देते हैं।

पारिस्थितिक तन्त्र के कार्य (Functions of Ecosystem)

पारिस्थितिक तन्त्र में जैविक व अजैविक घटक आपस में सम्बन्धित होते हैं। पारिस्थितिक तन्त्र में एक ही समय में मुख्य रूप से दो प्रक्रियाएँ चल रही होती हैं—

1. ऊर्जा का प्रवाह (Energy Flow)
2. जैव-भू-रासायनिक चक्र (Bio-Geo-Chemical Cycle)

ऊर्जा का प्रवाह एक दिशा में और जैव भू-रासायनिक प्रवाह चक्र के रूप में होता है।

1. **ऊर्जा का प्रवाह**—ऊर्जा को अनन्त काल तक बारम्बार उपयोग नहीं किया जा सकता क्योंकि हर स्तर पर ऊर्जा का ह्रास व उपयोग होता है। जैसे—सौर ऊर्जा (Solar Energy) को हरे पादप (इन्हें Producers यानि उत्पादक कहेंगे) प्रकाश संश्लेषण द्वारा रासायनिक ऊर्जा (Chemical Energy) में बदल देते हैं (पादप कार्बोहाइड्रेट्स के रूप में)।

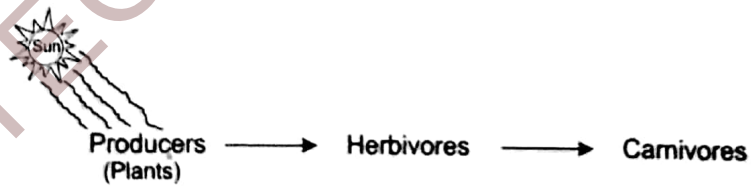

अब शाकाहारी जीव (Herbivores) इन पादप कार्बो० का उपभोग करते हैं जिससे रासायनिक ऊर्जा उन तक चली जाती है। शाकाहारी को माँसाहारी (Carnivores) उपभोग करते हैं, जिससे ऊर्जा का प्रवाह अगले स्तर तक हो जाता है। इस बीच में ऊर्जा का ऊष्मा के रूप में या कार्य करने में यान्त्रिक ऊर्जा के रूप में उपयोग/ह्रास हो जाता है। सामान्यतया कुल ऊर्जा का 90% हर स्तर पर उपयोग हो जाता है और 10% अगले स्तर तक स्थानान्तरित होता है।

2. **जैव भू-रासायनिक चक्र** (Bio Geo-chemical Cycle)—जो कार्बनिक (Organic) पदार्थ उत्पादकों द्वारा संश्लेषित किये जाते हैं, वे उपभोक्ता द्वारा खा लिये जाते हैं। अब पृथक करने वाले (Decomposers) द्वारा उपभोक्ता के शरीर में सारा कार्बनिक पदार्थ अकार्बनिक (Inorganic) में तोड़ दिया जाता है जो फिर से उपभोक्ता की संश्लेषण क्रियाओं द्वारा कार्बनिक पदार्थ में बदल दिया जाता है। इस प्रकार द्रव्य (Matter) प्रकृति में घूमता रहता है। इसका रूप परिवर्तन हो सकता है।
इस प्रकार पोषक पदार्थों का निर्जीव वातावरण (जैसे मृदा, पत्थर, वायु, जल) से सजीव (Living Organisms) के बीच चक्रीय प्रवाह को जैव-भू-रासायनिक चक्र कहते हैं।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

पारिस्थितिक तन्त्र की प्रकृति (Nature of Ecosystem)

किसी भी जीव समूह को निरन्तर अस्तित्व में रहने के लिये ऊर्जा की निरन्तर पूर्ति और आवश्यक रासायनिक तत्त्वों का चक्रीय प्रवाह आवश्यक होता है। इस प्रकार जैविक व अजैविक वातावरण आपस में निरन्तर प्रतिक्रिया करते हैं। इन सबको ही पारिस्थितिक तन्त्र की प्रकृति कहा जाता है। किसी भी Ecosystem की प्रकृति में निम्न तत्त्व होते हैं—

1. जैव समूह।
2. जन्तु व वनस्पति समुदाय।
3. जैव समूह का समाप्त होना और नये जैव समूह द्वारा उसका स्थान ग्रहण करना।
4. ऊर्जा का निरन्तर प्रवाह।
5. रासायनिक तत्त्वों का निरन्तर चक्रीय प्रवाह।

पारिस्थितिकी और पारिस्थितिक तन्त्र में अन्तर (Difference between Ecology & Ecosystem)

	पारिस्थितिक तन्त्र (Ecosystem)	पारिस्थितिकी (Ecology)
1.	किसी समुदाय और उसके वातावरण के अध्ययन को Ecosystem कहते हैं।	जीवों के आपसी व भौतिक वातावरण के सम्बन्धों के वैज्ञानिक अध्ययन को Ecology कहते हैं।
2.	जैविक व अजैविक तत्त्वों की आपसी निर्भरता को देखा जाता है।	जीवों व पर्यावरण के आपसी सम्बन्धों व प्रभावों का विश्लेषण किया जाता है।
3.	Ecosystem में जीव पर्यावरण व ऊर्जा का प्रवाह होते हैं।	इसमें जीव व पर्यावरण होते हैं।

पारिस्थितिक तन्त्र में ऊर्जा—Ecosystem में हर स्तर पर ऊर्जा का ह्रास व उपयोग होता है। हरे पौधे सौर ऊर्जा को रासायनिक ऊर्जा में बदलते हैं। इस ऊर्जा का लगभग 90% भाग विभिन्न कार्यों (जैसे—श्वसन, गति आदि) में उपयोग कर लिया जाता है, कुछ ऊष्मा के रूप में व्यय हो जाता है। यह उपयोग/व्यय प्रत्येक स्तर पर होता है। शेष लगभग 10% ऊर्जा अगले स्तर तक पहुँचती है।

पारिस्थितिक तन्त्र में खाद्य शृंखला (Food Chain in Ecosystem)

एक जीव का दूसरे जीव द्वारा उपभोग करना एक क्रमबद्धता से होता है, जिसे खाद्य शृंखला कहते हैं, जैसे—हरे पौधे (उत्पादक) सौर ऊर्जा द्वारा प्रकाश संश्लेषण करते हैं और भोजन का निर्माण करते हैं। हरे पौधों को शाकाहारी जन्तु (प्राथमिक उपभोक्ता) भोजन के रूप में खा लेते हैं। अब शाकाहारी जन्तुओं को मांसाहारी जन्तु (द्वितीय उपभोक्ता) खा लेते हैं। कुछ मांसाहारी जन्तु (तृतीयक उपभोक्ता) इन (द्वितीयक उपभोक्ता) को खा लेते हैं। इस प्रकार यह खाने (उपभोग) की प्रक्रिया एक शृंखला (Chain) के रूप में होती है, जिसे खाद्य शृंखला कहते हैं। इसमें विभिन्न स्तरों (उत्पादक, प्रा०उप०, द्वि०उप०, तृ०उप०) को पोषण स्तर (Trophic Level) कहते हैं।

उदाहरण—

घास (उत्पादक)
↓
टिड्ढा (प्रा० उपभोक्ता)
↓
मेढ़क (द्वि० उपभोक्ता)
↓
साँप (तृतीय उपभोक्ता)
↓
मोर (सर्वोच्च उपभोक्ता)

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

खाद्य शृंखलाओं के प्रकार (Types of Food Chains)

(A) ये मुख्यत: तीन प्रकार की (चरणों के आधार पर) होती हैं—

(i) तीन चरण वाली खाद्य शृंखला (3 Steps Food Chain)

(ii) चार चरण वाली खाद्य शृंखला (4 Steps Food Chain)

(iii) पाँच चरण वाली खाद्य शृंखला (5 Steps Food Chain)

उदाहरण—

(i) 3 Steps

शाकीय पौधे → हिरन → शेर

(ii) 4 Steps

घास → टिड्ढा → मेढ़क → पक्षी

(iii) 5 Steps

घास → टिड्ढा → मेढ़क → साँप → मोर

(B) उत्पादक—उपभोक्ता की प्रकृति के आधार पर खाद्य शृंखला दो प्रकार की होती है—

(i) शिकार-शिकारी/शाकवर्त्ती खाद्य शृंखला (Prey-Predator/Grazing Food Chain)

(ii) मृत-जीवी/अपरदी खाद्य शृंखला (Saprophytic/Detritus Food Chain)

(i) Prey-Predator/Grazing Food Chain—इस प्रकार की खाद्य शृंखला हरे पौधों (Producers) से आरम्भ होती है। इन्हें चरने वाले शाकाहारी जन्तु उपभोग करते हैं और ये स्वयं (शाकाहारी जन्तु) मांसाहारी जन्तुओं का शिकार बनाते हैं। इस प्रकार की Food Chain सौर ऊर्जा पर निर्भर होती है।

(ii) Saprophytic/Detritus Food Chain—इस प्रकार की Food Chain मृत कार्बनिक पदार्थ (मृत जीव) से आरम्भ होती है और सूक्ष्म जीव (Micro-Organisms) द्वारा पूर्ण होती है। इस प्रकार की Food Chain सौर ऊर्जा पर निर्भर नहीं होती।

खाद्य जाल (Food Web)

किसी खाद्य शृंखला में प्राथमिक या द्वितीयक उपभोक्ता एक से अधिक के लिये खाद्य बन सकता है, जिससे अलग-अलग खाद्य शृंखलायें बीच-बीच में आपस में जुड़ जाती हैं, जिससे एक जाल बन जाता है और इसे ही खाद्य जाल (Food Web) कहा जाता है, जैसे—

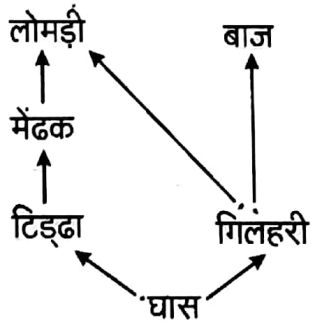

खाद्य-शृंखला और खाद्य जाल में अन्तर

	खाद्य-शृंखला	खाद्य-जाल
1.	यह उत्पादक व उपभोक्ताओं के बीच एक शृंखला के रूप में होती है।	यह जाल-नुमा संरचना बनाती है।
2.	इसमें जीव सीमित संख्या में होते हैं।	इसमें जीवों की संख्या असीमित भी हो सकती है।
3.	इसमें पाये जाने वाले Trophic Level एक प्रकार के जीवों से जुड़े होते हैं।	इसमें यह एक से अधिक प्रकार के जीवों से जुड़ा होता है।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

पर्यावरण (Environment)

पर्यावरण शब्द दो शब्दों (परि + आवरण) से बना है अर्थात् दूसरी वस्तुएँ जो हमें प्रभावित करती हैं तथा जो चारों ओर वितरित हैं, पर्यावरण कहलाता है।

या जीवों को सामूहिक रूप से प्रभावित करने वाले सभी कारक पर्यावरण कहलाता है। कारक, वह बल, पदार्थ या दशा है, जिससे किसी आवास में रहने वाले सभी जीव प्रभावित होते हैं।

पर्यावरण मुख्यत: दो भागों में बांटा गया है—

1. **भौतिक पर्यावरण** (Physical Environment)—इसके अन्तर्गत जल, सूर्य, ऊर्जा, प्रकाश, खनिज, लवण, आर्द्रता, पृथ्वी और वायु आदि भी सम्मिलित हैं। इसकी अनिरंतरता से ही मृदा कटाव, अपघटन, अवसादीकरण, भूकम्प और अन्य आपदाएँ जन्म लेती हैं।
2. **जैव पर्यावरण** (Biotic Environment)—इस वातावरण का सम्बन्ध जीवों के आपसी सम्बन्ध से है। जीवों का आपसी सम्बन्ध उनकी संस्कृति, व्यवहार, आचार-विचार, प्रतिस्पर्धा, दृष्टिकोण, धर्म, जाति और व्यक्तिगत आवश्यकता आदि के आधार पर सम्भव है।

पर्यावरण की आवश्यकता (Necessity of Environment)

स्वच्छ एवं शुद्ध वातावरण सम्पूर्ण मानव एवं जीव-जंतु हेतु अति आवश्यक है। कई दशकों पूर्व जब भारतीय संस्कृति पूर्ण विकसित नहीं थी तो अपव्यय कम होने के कारण हमारा पर्यावरण स्वच्छ था लेकिन जनसंख्या विस्फोट ने अपव्यय में कई गुना वृद्धि कर दी है। इसे दूर करने के लिए नये-2 उपाय सोचे जा रहे हैं। वातावरण को शुद्ध बनाने के लिए पूरे विश्व के वैज्ञानिकों को नये शोध करने होंगे जो हमारे वातावरण को शुद्ध करने में उपयोगी साबित होने चाहिएँ।

जैवमण्डल (Biosphere)

सम्पूर्ण पृथ्वी पर पाये जाने वाले जीव समुदाय व अजैव घटकों के साम्राज्य को जीवमण्डल कहते हैं। जीव पृथ्वी तल से केवल 6 km ऊँचाई तक तथा समुद्र में 8 km गहराई तक ही मिलते हैं। कुल 19 km का यह क्षेत्र ही जीवमण्डल या जैवमण्डल कहलाता है। यह तीन भागों में बाँटा गया है—

1. **स्थलमण्डल (Lithosphere)**—पृथ्वी की ऊपरी पर्त को, जिसमें खनिज पदार्थ एवं मृदा पायी जाती है, Lithosphere कहते हैं। इस मृदा पर ही पेड़-पौधे आते हैं जिसके उपभोग से जीवधारी जीवित रहते हैं।
2. **जलमण्डल (Hydrosphere)**—इसके अन्तर्गत सभी प्रकार के जलस्रोत आते हैं, जैसे—समुद्र, नदी, झील, तालाब, हिमनद एवं भौमजल आदि। सम्पूर्ण पृथ्वी का 97% भाग, समुद्र भाग 2% भाग, हिमनदी व ध्रुव पर मिलते हैं जिसमें 1% भाग ही जीवधारियों के काम में आता है। यह जल भी पर्यावरण प्रदूषण के कारण दूषित एवं जहरीला हो जाता है, जिसका प्रयोग जल उपचार व परीक्षण के बाद ही किया जाता है।
3. **वायुमण्डल (Atmosphere)**—यह जलमण्डल एवं स्थलमण्डल के चारों ओर लगभग 6000 m ऊपर तक फैला हुआ है जिसमें N_2, O_2, CO_2, O_3 एवं Water vapours उपस्थित हैं।

वायुमण्डल पृथ्वी की ऊष्मा को संतुलित रखता है। जीवन के लिए आवश्यक ऑक्सीजन तथा पेड़-पौधों के लिए CO_2 व N_2 उपलब्ध कराता है। यह समुद्री जल वाष्प को स्थल की ओर ले जाने में सहायक होता है।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

वायुमण्डल संरचना (Atmospheric Structure)

वायुमण्डल समुद्र तल से 500 km. ऊँचाई तक पाया जाता है। इसे चार भागों में बांटा गया है—

	Height	Temp.	Mainge
1.	Troposphere → पृथ्वी तल से 11 km क्षोभमण्डल	15 to –56° C	N_2, O_2, CO_2, H_2O
2.	Stratosphere → 11 km to 60 km समतापमंडल	–56 to –2° C	O_2
3.	Mesosphere → 60 km to 95 km मध्यमंडल	–2 to –92° C	O_2, NO
4.	Thermosphere → 95 km to 500 km आयनमंडल बाह्यमंडल	–90 – 1200° C	O_2^+, O^+, NO^+

पारिस्थितिक तन्त्र के प्रकार
(Types of Ecosystem)

1. स्थलीय पारितन्त्र 2. जलीय पारितन्त्र 3. आकाशीय पारितन्त्र

1. स्थलीय पारितन्त्र (Terrestrial Ecosystem)

स्थलीय पारितन्त्र के अन्तर्गत स्थल पर पाये जाने वाले पारितन्त्र आते हैं, जैसे—रेगिस्तान, मरुस्थल, घास का मैदान, टुण्ड्रा प्रदेश तथा वन आदि। इन क्षेत्रों को मुख्यत: तीन प्रकार से विभाजित कर सकते हैं—

(i) **वायु** (Air)—स्थलीय जीवों के लिए O_2 व CO_2 का स्रोत वायु है। O_2 को जीव तथा CO_2 को पेड़-पौधे ग्रहण करते हैं तथा CO_2 जीव व O_2 पेड़-पौधे उत्सर्जित करते हैं।

(ii) **जलवायु** (Climate)—इसके तीन भाग हैं—

(a) **तापमान** (Temperature)—पृथ्वी की सतह एवं वायु की निम्न विशिष्ट ऊष्मा के कारण भिन्न-भिन्न जगहों पर भिन्न-भिन्न ऊष्मा उत्पन्न होती है।

(b) **नमी** (Moisture)—अलग-अलग स्थानों पर यह अलग-अलग होती है।

(c) **प्रकाश** (Light)—सूर्य का प्रकाश जो पृथ्वी पर आता है, उसमें विभिन्न तरंगदैर्ध्य वाली किरणें होती हैं। पर्यावरण प्रदूषण के कारण कहीं पर सूर्य की रोशनी कम तथा कहीं पर अधिक आती है।

(iii) **मृदा** (Soil)—पृथ्वी की ऊपरी सतह, जिसमें कार्बनिक पदार्थ, खनिज पदार्थ उत्पन्न होते हैं या मिलते हैं, मृदा कहलाती है।

2. जलीय पारितन्त्र (Aquatic Ecosystem)

इसे मुख्यत: दो भागों में बांटा जा सकता है—

(i) स्वच्छ जल पारितन्त्र (Fresh water ecosystem)

(ii) समुद्री पारितन्त्र (Marine ecosystem)

स्वच्छ जल पारितन्त्र (Fresh Water Ecosystem)—इसके अन्तर्गत, प्रवाहित स्वच्छ जल पारितंत्र और स्थिर स्वच्छ जल पारितंत्र होते हैं, जैसे झरना, जलधारायें, नदियाँ, झीलें, पोखरें आदि।

समुद्री पारितन्त्र (Marine Ecosystem)—यह एक विशाल पारितन्त्र है जो, पृथ्वी के तीन चौथाई भाग पर फैला हुआ है। इसमें सैंकड़ों जीव व वनस्पतियाँ पायी जाती हैं। पर्यावरण की क्रियाएं इसी के द्वारा नियंत्रित होती हैं। इसके अन्तर्गत महासागर, मुहाने, खाड़ी आदि आते हैं।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

इसकी मुख्यत: तीन चीजें मनुष्य को प्रभावित करती हैं—

(a) **लवणता** (Salinity)—समुद्र जल की लवणता मुख्यत: समुद्र की गहराई, पानी के वाष्पन की दर, हिमखण्डों के पिघलने, नदियों की संख्या, जो समुद्र में आकर मिलती हैं, पर निर्भर करती है।

ऐसा अनुमान है कि 80% Na, 20% Cl के लवण सागर के पानी में घुले होते हैं। अन्य तत्त्वों में Na, Ca, K, S तथा Mg आदि होते हैं।

(b) **तरंग (Waves)**—समुद्री तरंग से बड़े-2 पत्थर उलट-पलट जाते हैं, जिससे इन पत्थरों से अनेक जीव-जंतु मर जाते हैं। इससे केवल नुकसान नहीं होते हैं। इसके द्वारा Oxygen पानी में मिल जाती है, जो जलीय जीवों के लिए महत्वपूर्ण है।

(c) **ज्वार (Tides)**—समुद्र में जब भी ज्वार-भाटा आता है तो इसके द्वारा ऊँची-ऊँची लहरें उठती हैं। ज्वार-भाटा के आने का मुख्य कारण चंद्रमा तथा सूर्य का गुरुत्वाकर्षण है। इससे मुख्यत: दो लाभ होते हैं।

इसके कारण जीव पानी की अधिकता महसूस करते हैं, जो उनके लिए लाभदायक है तथा इसके द्वारा मानव बिजली का उत्पादन भी कर सकता है।

3. आकाशीय पारितन्त्र (Skyral Ecosystem)—स्थलीय व जलीय पारितन्त्र के अतिरिक्त आकाश में भी कई प्रकार के पारितंत्र होते हैं। वायुमण्डल भी एक ऐसा ही पारितन्त्र है, जिसका पीछे वर्णन किया जा चुका है।

सम्पूर्ण अंतरिक्ष भी एक पारितन्त्र है, यह वायुमण्डल के आस-पास फैला हुआ है जहाँ वायु नहीं है। इसमें पृथ्वी के अलावा अन्य ग्रह भी सम्मिलित हैं जिनका प्रभाव हमारे ऊपर नहीं पड़ता है या आकाशीय पारितन्त्र जिससे प्रभावित होता है। ये सभी पारितन्त्र, आकाशीय पारितन्त्र कहलाते हैं।

पर्यावरण के अवयव (Elements of Environment)—पर्यावरण का क्षेत्र बहुत विस्तृत है। इसके अध्ययन के लिए पर्यावरण को मुख्यत: निम्न भागों में विभाजित कर सकते हैं—

(i) पृथ्वी (ii) जल

(iii) हवा (iv) ऊर्जा

(v) स्थान

(i) पृथ्वी (Earth)—मनुष्य पृथ्वी का ही उत्पाद है, पृथ्वी ने ही उसे माँ की तरह पाला-पोसा है। मनुष्य की सारी क्रियाएँ पृथ्वी पर ही सम्पन्न होती हैं। पृथ्वी पर ही जीवनदायिनी जल मिलता है। इस पर अनेक खनिज पदार्थ, तेल, कोयला, प्राकृतिक गैस, खनिज आदि दिये हुए हैं। इस प्रकार हमारे पर्यावरण का एक महत्वपूर्ण भाग (तत्त्व) पृथ्वी है क्योंकि जल तथा वायु इसी पर स्थित हैं। अन्य जीव-जंतु, कीड़े-मकोड़े, पेड़-पौधे आदि यहीं पर मिलते हैं। इस प्रकार पर्यावरण के परिवर्तन द्वारा ही पृथ्वी प्रभावित हो रही है।

(ii) जल (Water)—पर्यावरण का दूसरा महत्वपूर्ण तत्त्व जल है। पृथ्वी के लगभग तीन चौथाई भाग पर समुद्री पानी है जिसका उपयोग मनुष्य नहीं करता है क्योंकि यह बहुत खारा है। पृथ्वी पर उपस्थित सतही जल ही इसके काम आता है परन्तु प्रदूषण के कारण यह भी प्रदूषित हो गया है।

जल सूर्य के वाष्पीकरण द्वारा वाष्पित हो जाता है तथा पुन: जब वह पृथ्वी पर गिरता है, तो वायुमण्डल में उपस्थित धूल, धुआँ तथा अन्य हानिकारक गैसें इसमें घुल जाती हैं, जो मनुष्य के लिए हानिकारक होती हैं। इस वर्षा का जल अम्लीय हो जाता है। यह वर्षा पेड़-पौधों, जलधारी जीवों आदि को नष्ट कर देती है।

(iii) हवा (Air)—पृथ्वी के चारों ओर वायुमण्डल की एक परत है जिसके distribution का वर्णन पीछे किया जा चुका है। हमारे वायुमण्डल में ही हमारी प्राण वायु आक्सीजन उपस्थित है जिसके बिना हम जी नहीं सकते हैं परन्तु बढ़ती जनसंख्या, पेड़-पौधों की अंधाधुंध कटाई, औद्योगिक क्रांति आदि से वायुमण्डल इतना प्रदूषित हो गया है कि सांस लेना भी दूभर हो गया है।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

प्रतिवर्ष प्रदूषण के कारण बहुत सारे रुपयों की बर्बादी हो रही है। वायुमण्डल में कई प्रदूषक गैस मौजूद हैं। नीदरलैण्ड में CO, N_2O, फार्मेल्डिहाइड, धुएँ की मात्रा निर्धारित सीमा से अधिक है। कुवैत और इराक के युद्ध में खनिज तेल के जलने से इतना अधिक धुआँ उत्पन्न हुआ कि भारतवर्ष के पहाड़ी क्षेत्रों में काली बर्फ के रूप में गिरा।

अत: हमें वायु को शुद्ध करने के लिए प्रदूषण कम करना होगा।

(iv) ऊर्जा (Energy)—हम जानते हैं कि ऊर्जा न तो उत्पन्न होती है न ही समाप्त बल्कि केवल इसे एक रूप से दूसरे रूप में परिवर्तित किया जा सकता है।

आज इस प्रतिस्पर्धी युग में ऊर्जा पैदा करने से बहुत ही अधिक मात्रा में पर्यावरण प्रदूषित करने वाले कारक उत्पन्न होते हैं। ऊर्जा के कुछ स्रोत निम्न हैं—

(i) ईंधन के रूप में Coal, Wood एवं Mineral oil आदि।

(ii) Electric production के लिए Water energy, thermal energy and nuclear energy आदि।

(iii) मानव और पशुओं की शक्ति का उपयोग।

(iv) सौर ऊर्जा का उपयोग।

इनमें से Coal, wood, mineral oil प्रदूषण के कारण माने जाते हैं लेकिन अब सबसे अधिक उपयोग होने वाली Nuclear energy प्रदूषण का महत्वपूर्ण कारक है क्योंकि इसमें से खतरनाक किरण निकलती है जो भारत के लिए घातक है।

अत: हमें इसे प्रयोग न करने की कोशिश करनी होगी तथा Pollution रहित सौर ऊर्जा (Solar energy), वायु ऊर्जा (Wind energy) तथा जल ऊर्जा (Water energy) का अधिकाधिक प्रयोग करना होगा।

स्थान (Space)

रंक से लेकर राजा तक, चींटी से लेकर हाथी तक एवं सूक्ष्म जीवाणुओं से लेकर विशालकाय प्राणियों तक, सभी के रहने के लिए स्थान की आवश्यकता होती है। लेकिन बढ़ती हुई जनसंख्या तथा औद्योगीकरण के कारण आज जगह की कमी महसूस हो रही है।

एक मंजिला से लेकर बहुमंजिला इमारतें बनती चली जा रही हैं जिसके कारण जगह (space) समाप्त हो रही है। ऊपर से इस विशालकाय जनसंख्या द्वारा उत्पादित कूड़ा-करकट, गंदगी फैलती जा रही है।

अत: जगह (space) को बचाने के लिए Industrialisation, वनों के कटान तथा सबसे महत्वपूर्ण, जनसंख्या-वृद्धि, को रोकना होगा अन्यथा पैर रखने भर का भी स्थान (space) नहीं बचेगा।

पर्यावरणीय सन्तुलन
(Environmental Balance)

पर्यावरण में अनेक पदार्थ एक अवस्था से दूसरी अवस्था में परिवर्तित होते रहते हैं। इनमें से कोई भी पदार्थ एक ही स्थान पर एकत्रित हो जाने पर किसी न किसी रूप में पर्यावरण को हानि पहुँचाता है। ये पदार्थ प्रदूषणकारी होते हैं।

प्रकृति ने स्वयं ऐसी व्यवस्था बनाई है कि प्रत्येक हानिकारक पदार्थ स्वत: ही विलुप्त या रूपान्तरित होता रहता है। इनमें से कुछ चक्र निम्न हैं—

(1) Hydrological Cycle
(2) Carbon Cycle
(3) Oxygen Cycle
(4) Nitrogen Cycle
(5) Calcium Cycle
(6) Sulphur Cycle
(7) Phosphorus Cycle
(8) Hydrogen Cycle

(1) हाइड्रोलोजिकल चक्र (BIF)—सूर्य तालाब, गड्ढों, झीलों आदि के पानी का वाष्पीकरण तथा वृक्ष से वाष्पोत्सर्जन करता है। इस प्रक्रिया द्वारा बादल का निर्माण होता है और जब दो बादल टकराते हैं तो वर्षा होती है।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

इस प्रकार जलीय प्रक्रम पूर्ण होता है।

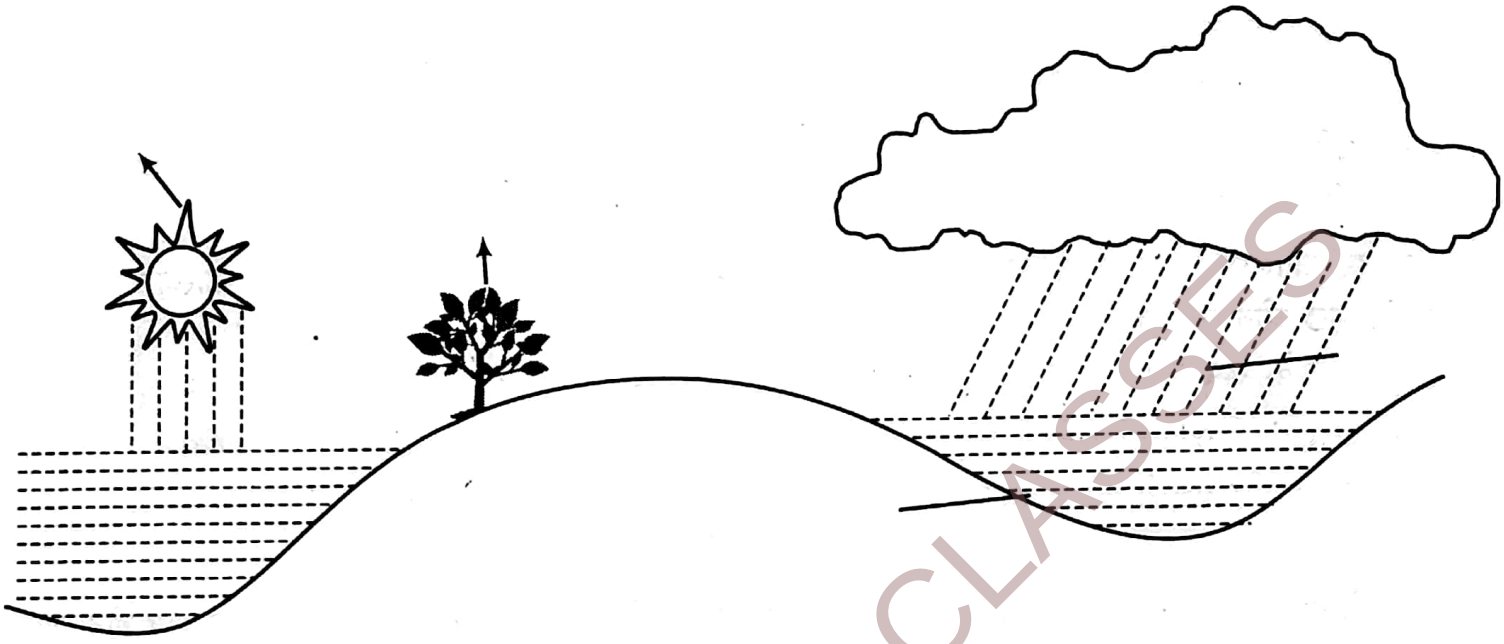

कार्बन चक्र (Carbon Cycle)—पौधे वायुमण्डल से CO_2, प्रकाश संश्लेषण द्वारा ग्रहण करते हैं और जब ये मरते हैं तो इनका अपघटन होता है फिर इन्हें जलाया जाता है जिससे CO_2 प्राप्त होती है, जो वायुमण्डल में मिल जाती है।

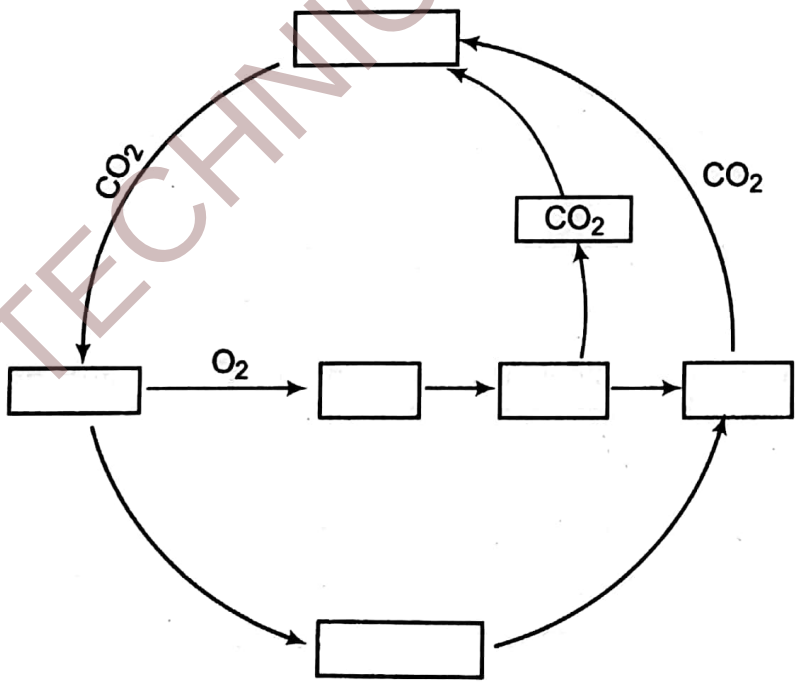

पौधों द्वारा उत्सर्जित O_2 को जीवधारी ग्रहण करते हैं और श्वसन के द्वारा CO_2 निकालते हैं जो वायुमण्डल में मिल जाती है और CO_2 का संतुलन बना रहता है।

ऑक्सीजन चक्र (Oxygen Cycle)—जीव-जंतु वायुमण्डल से O_2 लेते हैं और CO_2 निकालते हैं। इस CO_2 को पेड़-पौधे ग्रहण करके पुन: O_2 को निकालते हैं। इस प्रकार O_2 का संतुलन बना रहता है।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

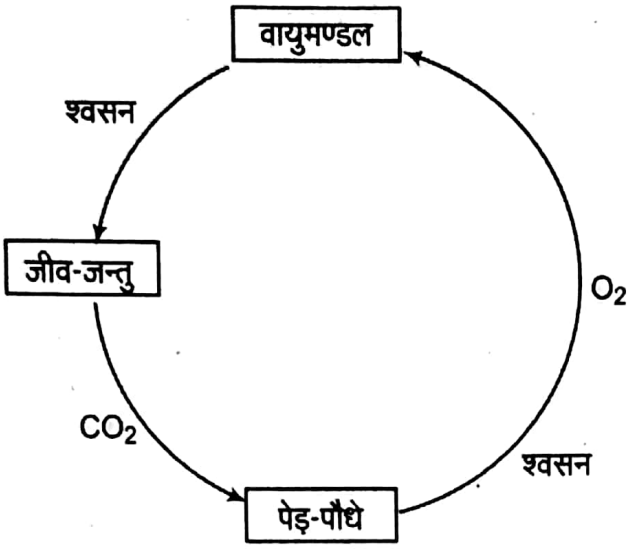

नाइट्रोजन चक्र (BIF)—वायुमण्डल से N_2 को पेड़-पौधे लेते हैं, पेड़-पौधों के पत्तों तथा फलों द्वारा N_2 का प्रसार animals में होता है। जब जीव-जन्तु (animals) तथा पौधे (plants) मृत होते हैं तो अमोनिया बनता है जिसे जीवाणु नाइट्रेट में परिवर्तित कर देते हैं। नाइट्रेट का Decomposition होता है और N_2 बनता है जो पुन: वायुमण्डल में मिल जाता है। इस प्रकार एक चक्र (Cycle) पूर्ण होती है।

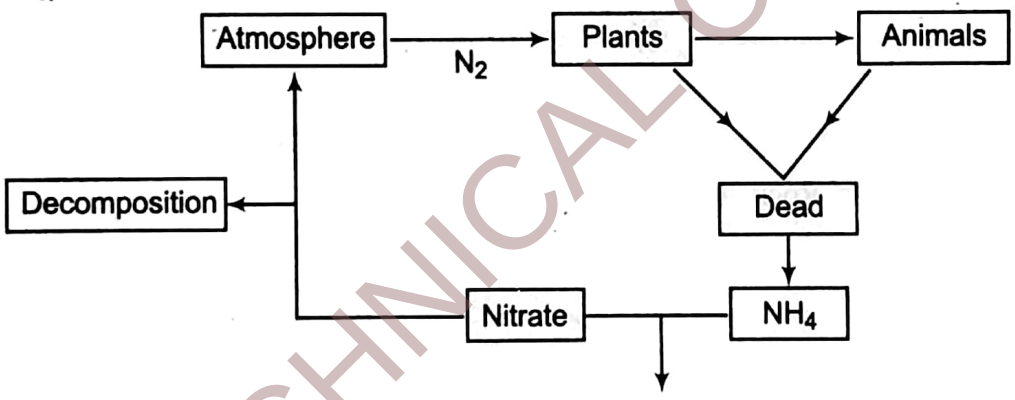

कैल्शियम चक्र (Calcium Cycle)—सर्वप्रथम पृथ्वी पर उपस्थित पत्थर का अपक्षय होता है तो वह Ca के चूर्ण में परिवर्तित होता है, जिसे पेड़-पौधे ग्रहण करते हैं। पेड़-पौधे की पत्तियों व फलों को खाने से यह जीव-जंतु में चले जाते हैं तथा जब भूगर्भीय उथल-पुथल होती है तो यह पुन: Rock में परिवर्तित हो जाते हैं।

इस प्रकार इसका संतुलन बना रहता है।

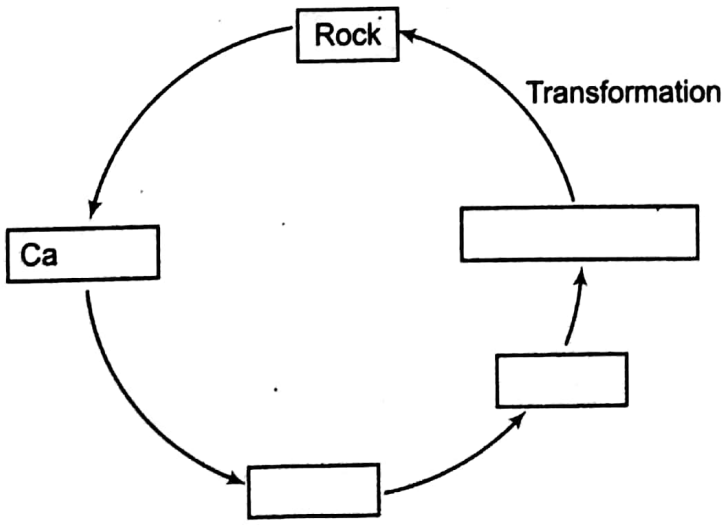

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

सल्फर चक्र (Sulphur Cycle)—वायुमण्डल में उपस्थित सल्फर को पेड़-पौधे लेते हैं, जिन्हें बाद में जीव-जन्तु लेते और जब भौगोलिक उथल-पुथल होती है, तो जीवाश्म ईंधन में बदल जाता है जिसके जलने से Sulphur उत्पन्न होता है, पुनः वायुमण्डल में मिल जाता है।

इस प्रकार यह चक्र पूर्ण होता है।

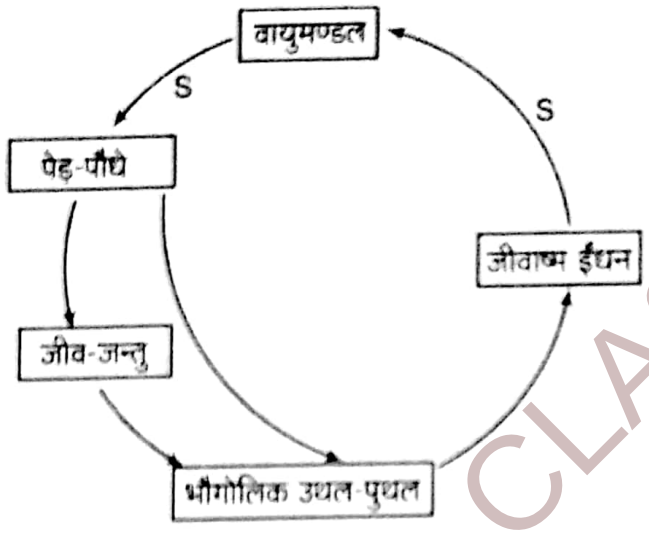

फास्फोरस चक्र (Phosphorus Cycle)—चट्टान (Rock) का अपक्षय हुआ जो मिट्टी में मिलकर खाद बनी। इसे पेड़-पौधों ने ग्रहण करके जीव के लिए भोजन बनाया, जब जीवों की मृत्यु हुई तो वह जल में बहकर नदियों में मिला, नदियों से वर्षा जल के द्वारा सीधे भी Phosphorus चला आता है जिसके कारण समुद्र मे इसका जमाव होता है और भूगर्भीय उथल-पुथल होने पर पुनः यह Rock के रूप में परिवर्तित हो जाता है।

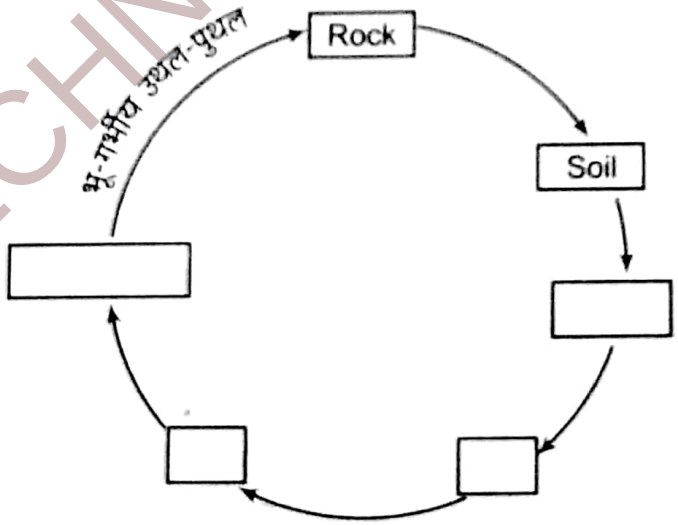

हाइड्रोजन चक्र (Hydrogen Cycle)—जल के अणु के घटक के रूप में हाइड्रोजन (H_2) का स्रोत जलमण्डल है। प्रकाश-संश्लेषण (Photo-Synthesis) के द्वारा हाइड्रोजन (H_2) सजीव जगत में आती है, यह क्रिया निम्न प्रकार होती है

$$2H_2O \longrightarrow 2H_2 + O_2 \uparrow$$

यह हाइड्रोजन (H_2), ग्लूकोज ($C_6H_{12}O_6$) अणु की रचना करती है। यही सीधे ग्लूकोज में सजीव जगत में चली जाती है। श्वसन (Respiration) क्रिया के समय ग्लूकोज के अणु टूट जाते हैं, जिससे मुक्त हाइड्रोजन का ऑक्सीकरण होता है और यही H_2 जल में बदल जाता है।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

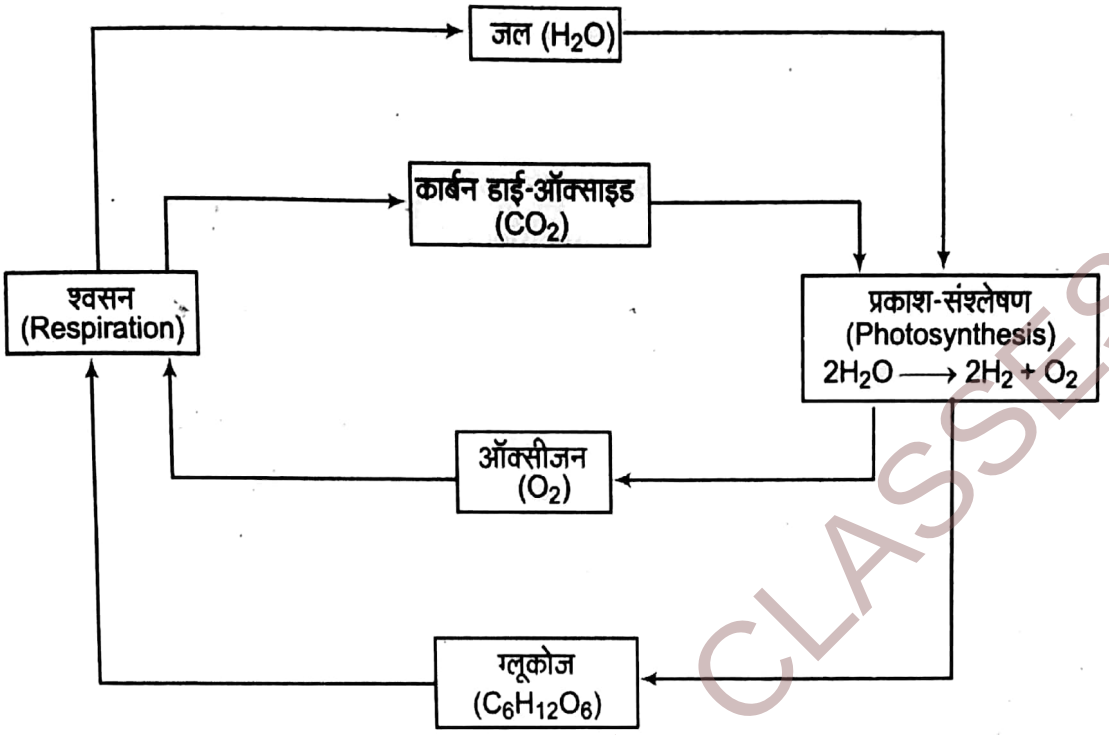

चित्र-हाइड्रोजन चक्र (ऊर्जा चक्र)

मृत जीवों, पेड़-पौधों एवं अपशिष्ट पदार्थों के कार्बनिक यौगिकों में अपघटन क्रिया से हाइड्रोजन (H_2) बनती है, जिसका ऑक्सीकरण होता है और जल प्राप्त हो जाता है। मुक्त हुई ऑक्सीजन (O_2) श्वसन क्रिया से CO_2 में तथा CO_2 प्रकाश संश्लेषण क्रिया द्वारा O_2 का निर्माण करती है। चूँकि कार्बन (C), O_2 एवं H_2 चक्रों का आपस में घनिष्ठ सम्बन्ध है, अत: इस संयुक्त चक्र को ऊर्जा चक्र की संज्ञा दी जाती है। इसे चित्र में दर्शाया गया है।

पारिस्थितिक तंत्र पर मानवीय क्रियाओं का प्रभाव

1. सिंचाई (Irrigation)— भारतदेश कृषि प्रधान देश है। यहाँ के लोगों का मुख्य व्यवसाय खेती करना है। खेती के लिए उत्तम बीज, खाद, अच्छी मृदा व सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। अच्छी खाद, अच्छे बीज व उपजाऊ मृदा से ही कृषि उत्पादन बढ़िया नहीं हो सकता है वरन् उचित समय पर पेड़-पौधों को आवश्यक मात्रा में पानी मिलना जरूरी है। इसके अलावा कृषि उत्पाद को खरपतवार, फंगस, व कीटों से बचाना आवश्यक है। कृषि कार्य पानी/सिंचाई पर निर्भर करता है। वर्षा का पानी पूरे खेत में सिंचाई करता है परन्तु वर्षा का समय अनिश्चित है। वर्ष में मात्र दो माह ही वर्षा के हैं। इन दो माहों के अलावा खेत में छमाही या तिमाही फसल लेने के लिए खेत में पानी की आवश्यकता की पूर्ति हेतु अपनाये गये कृत्रिम साधन सिंचाई कहलाता है। पहले खेतों में पानी पहुँचाने के लिए टोकरी द्वारा, ढ़ेकली द्वारा, डून, घिरनी बाल्टी, चरखा-बाल्टी, चरम, रहट या आर्केमीडियन स्क्रू की सहायता से कूएँ से पानी निकालकर खेतों तक पहुँचाया जाता था। आज ट्यूबवेल द्वारा जमीन से पानी निकालकर Flood अथवा Sprinkler द्वारा सिंचाई की जाती है। नदियों की चौड़ाई में बांध बनाकर, हैड बर्क्स बनाकर, नहरों का जाल पूरे क्षेत्र में फैलाया जाता है तथा इन नहरों का पानी मोखे (out let) द्वारा जल गूलों (water courses) की सहायता से खेत में पानी दिया जाता है जिससे फसलों की सिंचाई की जाती है।

नहरों का निर्माण अंग्रेजी शासन काल में 19 वीं शताब्दी में शुरु हुआ। 1817 में पश्चिमी यमुना नहर, 1954 में ऊपरी गंग नहर, पूर्व यमुना नहर, ऊपरी दोआब नहर, 1880 में निचली गंग नहर, 1884 में सरहिंद नहर व 1930 में शारदा नहरें निकाली गईं। सन् 1947 के बाद सिंचाई एवं पन बिजली परियोजनाऐं (Hydroelectric) शुरु हुई। इनमें नागार्जुन सागर (A.P.),कांसी तथा गंडक (बिहार), हीराकुण्ड (ओड़ीसा), तुंगभद्रा (कर्नाटक), रामगंगा (U.P.), व्यास सतलुज लिंक (हिमाचल प्रदेश), भाखड़ानागल (पंजाब), शारदा सहायक (U.P)., दामोदर घाटी (पश्चिमी बंगाल) व कोटा बैराज (राजस्थान) प्रमुख हैं। इनके अनुरक्षण निर्माण हेतु प्रत्येक राज्य में, सिंचाई अनुसन्धान केन्द्र स्थापित किये गये। केन्द्रीय स्तर पर केन्द्रीय सिंचाई परिषद व

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

केन्द्रीय जल आयोग (CWC) का गठन किया गया। भारत का भूक्षेत्र 3288 लाख हेक्टेअर है जिसमें 1860 लाख हेक्टेअर भूमि कृषि योग्य है। भारत की नदियों में लगभग 1780 लाख हेक्टेअर-मीटर पानी प्रतिवर्ष आता है जिसका 105 लाख हेक्टेअर मीटर पानी सिंचाई में प्रयोग में आता है। पंजाब में अन्य राज्यों की तुलना में सिंचाई का प्रतिशत 87% है।

कृषि कार्य हेतु भूमि जल का सर्वाधिक दोहन ट्यूबेल के पानी से सिंचाई किये जाने के कारण हो रहा है। नहर परियोजनाओं से काफी मात्रा में जमीन का अधिग्रहण (Aquision) हो रहा है जिससे स्थलीय इकोतन्त्र प्रभावित हो रहा है। जंगलों, मरुस्थलों आदि से गुजर रही नहरों से हालाँकि भूमि उपजाऊ हो रही है एवं अधिग्रहण से उसी क्षेत्र का इकोतन्त्र बदल रहा है। नदियों पर बड़े-2 व ऊँचे बांध बनाये जा रहे है जिससे काफी बड़ा भू-भाग जलाशय द्वारा घेर लिया जाता है जिससे जानवर, पशु, पक्षी एवं इंसान भी विस्थापित होकर अलग जगह शरण लेता है जिससे इकोलॉजी Change होना लाजिमी है।

2. शहरीकरण (Urbanisation)—कृषि के प्रति अरुचि, शहरों में उद्योग-धन्धों की प्रचुरता, यातायात के साधनों की सुलभता, शहरी चकाचौंध, ग्रामीण क्षेत्र में जल प्रदाय का अव्यवस्था व रोजगार के साधन न होने के कारण, ग्रामीण जनता शहरों की ओर पलायन कर रही है। यह पलायन ही शहरीकरण है अर्थात् ग्रामीण क्षेत्र के लोगों का शहर में आकर बस जाना, शहरीकरण है। चूँकि शहरों में शिक्षा, चिकित्सा, सुरक्षा, मनोरंजन, विद्युत, सड़कों, वाहनों, आदि का सुविधाऐं उपलब्ध रहती है। साथ ही नगरीय शैली, विकसित शहरों, राज्यों राजधानियों से जुड़ाव सीधे ही शहरों से आसानी से हो जाता है अत: ग्रामीणों का शहरों में आकार बस जाना सम्भव हो रहा है।

(a) शहरी जनसंख्या का बढ़ना—पहले शहरों में प्रतिवर्ग किलोमीटर में कम लोगों के रहने से शहरी घनत्व कम था परन्तु वर्तमान में मेरठ, दिल्ली, कानपुर, लखनऊ, मुम्बई, कोलकाता, चेन्नई, मैसूर, हैदराबाद, पुडुचेरी आदि शहरों में जनसंख्या घनत्व अत्यधिक हो गया है जिससे वहां भीड़-भाड़ होने से वाहनों, उद्योगों, आदि का अत्यधिक प्रदूषण हो गया है।

(b) नैतिक मूल्यों में कमी—ग्रामीण क्षेत्रों के मुकाबले शहरों में महिला/पुरुष करा अनुपात यानि कि लिंगानुपात कम रहने का वजह से शहरों में नैतिक मूल्यों का पतन हुआ है। एकाकी परिवार होना, छोटे-छोटे मकान होना, स्वार्थी होना, आदि सब नैतिक पतन के कारक है।

(c) व्यक्तिवाद में वृद्धि—शहरों में चूँकि एकाकी परिवार होते हैं जिनमें प्रत्येक व्यक्ति स्वतन्त्र रूप से निर्णय लेने की क्षमता रखता है। जिससे शहरों में Individualism बढ़ रहा है। **यहाँ सामूहीकरण** (Groupism) समाप्त हो रहा है।

(d) विषमताएँ—शहरी वातावरण में आलीशान, VIP, क्षेत्र हैं तो गंदी बस्तियाँ (Slums) भी है। ऊँचे अच्छे-बड़े एवं कोठी युक्त मकान शहरों में हैं तो उनके आस-पास झुग्गी-झोपड़ियाँ भी हैं। आलीशान मकानों में प्रतिव्यक्ति आय अत्यधिक होती है तथा उनके रहने का तौर-तरीका, फैशन परस्त आदि अवयव होते हैं जबकि गरीब तबके के लोग उनका छोटा व्यवसाय, खराब रहन-सहन का स्तर आदि गरीबी के अवयव है। अत: अमीरी-गरीबी, उच्च वर्ग-निम्न वर्ग, अधिकारी वर्ग-कर्मचारी, चपरासी व मजदूरी वर्ग, नौकरी पेशा वर्ग-व्यवसाय वर्ग, आदि वर्गों में असमानता के अवयव शहरों में पनपते हैं लिहाजा लड़ाई-झगड़े, तोड़-फोड़, लूट-पाट, चोरी-चकारी, आदि बुराइयाँ शहरों में ज्यादा पनपती है। इन सबका कारण आर्थिक विषमताऐं ही है। गाँवों में सभी के आर्थिक पक्ष लगभग एक से ही होते है। अत: वे मिल-जुलकर आपस में सामुदायिक रूप से रहते हैं।

उक्त के अलावा शिक्षा, सामाजिक, राजनैतिक, प्रतिबद्धता, कर्तव्यता आदि प्रभाव शहरों में अलग व ग्रामीण परिवेश में अलग-अलग है।

3. सड़कों का विकास (Road Development)—प्राचीन काल में मनुष्य समूह में रहता था तथा उसका आना जाना भी सामूहिक होता था। खेतों, खलिहानों, जंगलों आदि से जब मानव श्रृंखला, लगातार गुजरती (Pass) रहती है तो उनके लगातार चलते रहने से पगडंडियाँ बन जाती है। धीरे-धीरे ये पगडंडियाँ चौड़ी होती चली जाती है और अच्छी सड़क का रूप ले लेती हैं। धीरे-धीरे जब सभ्यता का विकास हुआ और पहिए का आविष्कार हुआ, तब इन कच्ची सड़कों को कंक्रीट, अथवा तारकोल से बनाया जाने लगा, जिन पर रिक्शा, तांगे, पैदल, स्कूटर, मोटर साइकिल, ट्रक, बस, व कारें आदि वाहन दौड़ने लगे। सड़कों के निर्माण में जमीन का अधिक्रहरण होने लगा, तथा विभिन्न निर्माण पदार्थों को प्राप्त करने की प्रक्रिया की जाने लगी।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

परिणामस्वरूप बड़े-बड़े खेत एवं जमीन के भूभाग सड़कों के लिए अधिगृहीत होते चले गये, जिससे पर्यावरण असंतुलित होने लगा।

भारत में सड़कों के विकास के लिए, भारतीय सड़क काँग्रेस, नागपुर प्लान, केन्द्रीय, सड़क अनुसंधान मुम्बई, प्लान व लखनऊ प्लान बनाकर सड़कों को राष्ट्रीय, राजमार्ग, मुख्य जिला सड़कें, अन्य जिला सड़कें व ग्रामीण सड़कों के रूप में विकसित किया गया। 1947 के बाद भारतीय राष्ट्रीय महामार्ग प्राधिकरण द्वारा सड़कों के निर्माण एवं उनके चौड़ीकरण की योजना लागू कर गई। इससे सड़कों के निर्माण एवं उनके चौड़ीकरण का कार्य तेजी से बढ़ रहा है। इसके अन्तर्गत स्वर्णिम सचतुर्भुज परियोजना (Golden Quardrilateral Project) व उत्तर दक्षिण व पूर्व पश्चिम कोरीडोर परियोजना भी सम्मिलित कर ली गई। स्वर्णिम चतुर्भुज परियोजना में दिल्ली-मुम्बई, चेन्नई-कोलकाता को सीधे 4 लेन या 6 लेन वाली अन्तर्राष्ट्रीय मानकों वाली सड़कों से जोड़े का प्रस्ताव है। इसमें कुल लगभग 5850 km लम्बी सड़कों (दिल्ली मुम्बई-1419 km, मुम्बई-चेन्नई-1290 km, चेन्नई-कोलकाता 1684 km तथा कोलकाता-दिल्ली 1457 km का संरेखक्षण सुधार (Alignment)/निर्माण/चौड़ीकरण/उद्धार/सुन्दरी/सुन्दरीकरण किया गया है।) 7300 km लम्बे कोरीडोर सड़क योजना के अन्तर्गत श्रीनगर (कश्मीर) को कन्याकुमारी से और सिल्चर को पोरबन्दर (पूर्व-पश्चिम) को विश्वस्तरीय चार छः लेन की सड़कों से जोड़ा गया है। स्वर्णिम चतुर्भुज व कोरीडोर मार्गों पर आने वाले रेल व नहरों के ऊपर Flyovers का निर्माण किया गया। एक अनुमान के अनुसार इंग्लैण्ड में प्रति 100 वर्ग किमी० क्षेत्र में 210 km लम्बी सड़के, फ्रांस में 1951 km तथा भारत में कुल लगभग 40 km लम्बी मुख्य सड़के हैं।

भारत में सड़कों के निर्माण, विकास मरम्मत आदि के लिए केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकार, स्थानीय निकायें, (Local Bodies) जिला परिषद (District Boards), नगर पालिकाऐं (Municipalities) व पंचायतों द्वारा प्रशासनिक एवं वित्तीय व्यवस्था संभाली जाती है। केन्द्रीय लोक निर्माण विभाग (PWD) व राज्य लोक निर्माण विभाग (State PWD) का गठन कर देश में सड़कों के विकास का जिम्मा उक्त दोनों विभागों के हाथ में होता है। इन विभागों को बजट के लिए केन्द्रीय राज्य सरकारें, अनुदान देती हैं। इन विभागों को आय, Road, Tax, मोटर तेल कर, यात्री -कर, माल-कर चालन लाइसेंस फीस, मोटर वाहनों के पुर्जे, टायर-ट्यूब व वाहनों के रजिस्ट्रेशन आदि से होती है। भारी पुलों पर टोल टैक्स लगाकर भी इन विभागों को आय होती है। यह आय केन्द्र व राज्य सरकारें राज्य सड़कें, जिला परिषद-जिला सड़कों व पंचायत ग्रामीण सड़कों का कार्य देखती हैं। नगर पालिकायें शहर सीमा में स्थित सड़कों का कार्य देखती हैं।

निर्माण कार्यों की वित्तीय कठिनाइयों को देखते हुऐ अब सरकार बड़ी-बड़ी परियोजनाओं को सम्पन्न कराने के लिए निजी क्षेत्र के उद्यमियों (Enterpreneurs) की साझेदारी स्वीकार कर रही है। इसे Build operate and Transfer (BOT) का नाम दिया गया है। इसके अन्तर्गत सड़कों एवं पुलों का निर्माण निजी उद्यमियों द्वारा अपने खर्चे पर किया जाता है और इनका संतोषजनक संचालन की भी जिम्मेदारी इन्हीं के हाथ में होती है। ये उद्यमी 20-30 वर्षों: तक इन पुलों/सड़कों पर चलने वाले वाहनों से टोल टैक्स वसूल कर अपने खर्चे की भरपाई करते हैं। ठेका अवधि समाप्त होने पर संतोषंजनक स्थिति रहने पर ये कार्य सरकार को हस्तान्तिरित हो जाते हैं। सड़क निर्माण एवं तत सम्बन्धित गतिविधियों से प्रदूषण होता है जिससे पारिस्थितिकी (Ecology) पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

4. अन्य इंजीनियरिंग गतिविधियाँ—यहाँ यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि देश में निर्माण सम्बन्धी गतिविधियों बढ़ रही है। आज पूरे विश्व में विभिन्न क्षेत्रों में निर्माण कार्य सम्पन्न हो रहे हैं। जिनमें आवययक निर्माण सामग्रियों के उत्पादन हेतु बड़े-2 उद्योग स्थापित हो रहे हैं। जिसके कारण सभी क्षेत्रों यथा वायु, जल, भू व ध्वनि, प्रदूषण आदि बढ़ रहा है। साथ-साथ तत्सम्बन्धित क्षेत्रों में ईकोलॉजी प्रभावित हो रही। जल प्रदूषण से जलीय परितन्त्र, वायु प्रदूषण से वायुवीय पारितन्त्र, ठोस पदार्थ व्यर्थ से स्थलीय परितन्त्र आदि बुरी तरह प्रभावित हो रहे हैं। भविष्य में विभिन्न निर्माण गतिविधियों में पर्यावरण के साथ समरसता (Harmony) विकसित करनी होगी, तभी देश की उन्नति होगी एवं देश सही रूप में उन्नत (Advance) होगा।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

मृदा अपरदन

मिट्टी एक अमूल्य प्राकृतिक संसाधन है, जिस पर सम्पूर्ण प्राणि जगत निर्भर है। भारत जैसे कृषि प्रधान देख में, जहाँ मृदा अपरदन की गम्भीर समस्या है मृदा अपरदन की प्रक्रिया में मृदा की ऊपरी सतह टूट जाती है और एक-स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँच जाती है। भूक्षरण या मृदा-अपरदन का अर्थ है मृदा कणों का बाह्य कारकों जैसे वायु, जल या गुरूत्वीय-खिंचाव द्वारा पृथक होकर बह जाना। वायु द्वारा भूक्षरण मुख्यत: रेगिस्तानों क्षेत्रों में होता है, जहाँ वर्षा की कमी तथा हवा की गति अधिक होती है, परन्तु जल तथा गुरूत्वीय बल द्वारा भूक्षरण पर्वतीय क्षेत्रों में अधिक होता है। जल द्वारा भूक्षरण के दो मुख्य चरण होते हैं। पहले सतही भूमि से मृदा कणों का पृथक होना, तथा दूसरे इन मृदा कणों का सतही अपवाह के साथ बहकर दूर चले जाना। मृदा का प्राकृतिक अपरदन जल और वायु के कारण होता है। मृदा का प्राकृतिक अपरदन होने के निम्नलिखित कारण हैं।

1. निर्वनीकरण—वन पानी के बहाव की तीव्रता तथा वायु की गति को कम करता है। वह मिट्टी को जड़ों से जकड़कर रखता है। किन्तु वनों के अविवेकपूर्ण विदोहन तथा कटाई अपरदन की तीव्रता बढ़ाती है।

2. अनियन्त्रित पशुचारण—इससे मिट्टी का गठन ढीला हो जाता है। फलत: जलीय तथा वायु-अपरदन तीव्र होता है।

3. कृषि का अवैज्ञानिक ढंग—अत्यधिक जुताई, गहन कृषि, फसल चक्र की अनुपस्थिति आदि कारणों से मिट्टी अपना प्राकृतिक गुण खो देती है, जिससे उसका विघटन होने लगता है। यह जलीय तथा वायु अपरदन को सुगम बना देती है।

4. भूमि की ढ़ाल—भूमि का तीव्र ढाल गुरुत्वाकर्षणीय प्रभव में मृदा को नीचे लाने में सहायक होती है।

5. अतिवृष्टि तथा अनावृष्टि

6. झूमिंग कृषि प्रणाली—इससे वनों का विनाश होता है तथा मिट्टी के पोषक तत्व बह जाते हैं।

7. नदी बहाव की गति—नदी की गति यदि दोगुनी हो जाए तो अपरदन क्षमता चार गुनी तथा बहन क्षमता 64 गुनी बढ़ जाती है।

8. नदियों द्वारा मार्ग परिवर्त—नदी मार्ग परिवर्तन कर उपजाऊ भूमि को जलमग्न कर देती है।

मृदा अपरदन का प्रभाव (राष्ट्रीय योजना समिति के अनुसार)

1. भूमि की उर्वरशक्ति का नष्ट होगा,
2. जोतदार भूमि में कमी,
3. आकस्मिक तथा भयंकर बाढ़ का प्रकोप,
4. शुष्क मरूभूमि का विस्तार,
5. बीहड़ तथा बंजर भूमि में वृद्धि, जो असमाजिक तत्वों का शरणस्थल बनता है।
6. स्थानीय जलवायु पर विपरीत प्रभाव,
7. नदियों को मार्ग परिवर्तन,
8. भू-जलस्तर का नीचे जाना, फलस्वरूप पेयजल तथा सिंचाई के लिए की कमी,
9. खाद्यान्न उत्पादन में कमी, फलस्वरूप आयात में वृद्धि भुगतान सन्तुलन का बिगड़ना आदि।

अभिस्थलीय प्रभाव (On-site Effects)

जब किसी स्थान पर मृदा अपरदन होता है तो इससे फसलों के विकास तथा फसलों के उत्पादन पर प्रभाव पड़ता है। इसका कारण यह है कि मृदा अपरदन के कारण मृदा में कमी हो जाती है जिससे फसलों के लिए पौषिक तत्वों की कमी हो जाती है इसके साथ मृदा में जैविक पदार्थों की भी कमी हो जाती है जिसके कारण फसलें बढ़ नहीं पाती जिसके फलस्वरूप उत्पादन में कमी आती है। मृदा के अपरदन से मृदा सरंचना भी प्रभावित होती है।

AYC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

अपस्थलीय प्रभाव (Off-site Effects)

मृदा के अपरदन के कारण जब मृदा के कण स्थानांतरित होकर किसी एक स्थान पर एकत्र हो जाते हैं तब उस स्थान पर मृदा की ऊपरी परत मोटी हो जाती है इससे बीजों के अंकुरण पर प्रभाव पड़ता है क्योंकि अब अंकुरित होने के लिए बीजों को मृदा की मोटी परत को भेदना पड़ेगा।

पारिस्थितिक सन्तुलन पर पर्यावरणीय प्रदूषण का प्रभाव
(Effect of Environment Pollution on Ecological Balance)

आज मनुष्य ने इतनी प्रगति कर ली है कि वह कुछ भी कर सकता है परन्तु मृत्यु पर उसका नियंत्रण नहीं हो पाया है परन्तु इस प्रगति के लिए उसने प्रकृति का किस हद तक दोहन किया है, इसका कोई उत्तर नहीं है।

विज्ञान एवं तकनीकी प्रगति, उद्योगों की अंधाधुंध वृद्धि एवं जनसंख्या विस्फोट ने पर्यावरण सन्तुलन को अत्यधिक प्रभावित किया है। जीवाश्म ईंधन जलाने से, ज्वालामुखी से, उद्योगों से एवं श्वसन क्रिया से CO_2 का प्रतिशत लगातार बढ़ता जा रहा है। इस क्रिया को Green house effect कहते हैं। इसके कारण समुद्री जल स्तर उठ जायेगा, सागरीय तटीय क्षेत्र जलमग्न हो जायेंगे, ध्रुवीय बर्फ पिघल जायेगी, गर्मी के दिन बड़े तथा सर्दियों के दिन छोटे हो जायेंगें, वर्षा की कमी आयेगी तथा फसलों की पैदावार घट जायेगी।

जैव विविधता (Biodiversity)

जीव मण्डल में विविध प्रकार के जीव पाये जाते हैं। इसी विविधता को जैव विविधता कहा जाता है।

पृथ्वी के किसी भी भाग में जैसे वन में अनेकों प्रकार के पौधे व जन्तु मिलते हैं, यह सब जैव विविधता है।

जैव वैज्ञानिक दीर्घ काल से विभिन्न जीवों की खोज में लगे हैं। कुछ जीवों की अनुमानित संख्या तालिका 1.1 में दी गयी है—

तालिका 1.1

समूह	प्रजातियों की संख्या
शैवाल	40,000
कवक	72,000
विषाणु	1,550
जीवाणु	4,000
उच्च पौधे	2,70,000
प्रोटोजोआ	40,000
निमेटोड्स	25,000
मोलस्क	70,000
कीट	10,25,000
उभयचर	4,780
सरीसर्प	7,150
मछलियाँ	26,959
पक्षी	9,700
स्तनधारी	4,650

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

जैव विविधता के स्तर (Levels of Biodiversity)

जैव विविधता को तीन भागों में बाँटा गया है—

1. प्रजाति विविधता (Species Diversity)
2. आनुवंशिक विविधता (Genetic Diversity)
3. समुदाय एवं पारितन्त्र विविधता (Community & Ecosystem Diversity)

1. **प्रजाति विविधता**—प्रजातियों की भिन्नता को प्रजाति विविधता कहते हैं। इसमें एककोशिकीय जीव से लेकर बहुकोशिकीय जीव तक सभी आते हैं।
2. **आनुवंशिक विविधता**—सभी प्रजातियों में जीन्स (Genes) पाये जाते हैं। ये प्रत्येक प्रजाति के लिये नियत संख्या में होते हैं, जैसे—मनुष्य में 35,000 – 45,000, Drosophite fly में 13000 आदि।

   यह जीन्स की विवधता निम्न प्रकार मिलती है—

   (A) एलीलों में (Alleles)

   (B) गुण सूत्र की संरचना में (Chromosomes)

   (C) पूर्ण जीन्स में
3. **समुदाय एवं पारितन्त्र विविधता**—जैव समुदाय में पायी जाने वाली विविधता को समुदाय विविधता कहा जाता है। यह तीन प्रकार की होती है—

   (i) अल्फा विविधता (Alpha diversity)

   (ii) बीटा विविधता (Beta diversity)

   (iii) गामा विविधता (Gamma diversity)

   (i) Alpha—एक समुदाय में ही पाई जाने वाली विविधता को अल्फा विविधता कहते हैं।

   (ii) Beta—अलग-अलग समुदाय में पाई जाने वाली विविधता को बीटा विविधता कहते हैं।

   (iii) Gamma—एक विशेष क्षेत्र की पूरी विविधता को गामा विविधता कहते हैं।

जैव विविधता के लाभ—प्रकृति में जीवों की विविधता अत्यन्त लाभदायक होती है, जैसे—

1. **औषधियों की प्राप्ति**—पौधों से बहुत प्रकार की औषधियाँ प्राप्त होती हैं। विभिन्न प्रकार के पौधे विभिन्न प्रकार की औषधि का स्रोत होते हैं। यह जैव-विविधता के कारण ही सम्भव है।
2. **भोजन की प्राप्ति**—मनुष्य को अनेकों प्रकार के भोजन की प्राप्ति जैव-विविधता के कारण होती है। अन्यथा किसी एक ही प्रकार के भोजन पर मनुष्य को निर्भर रहना पड़ता है।
3. **सौन्दर्यता**—चिड़ियाघरों में विभिन्न प्रकार के जीव, पक्षियों के प्रकार, बागवानी आदि जैव-विविधता के कारण ही सम्भव है।
4. **Ecosystem में सहायक**—जैव विविधता के कारण ही Ecosystem चल पाता है। नहीं तो यदि कोई एक प्रकार के जीव होते तो वे कभी के समाप्त हो चुके होते।
5. **भविष्य में सम्भावनायें**—कुछ जीव आज अनुपयोगी लग सकते हैं परन्तु आने वाले कल में सम्भव है कि उनसे कोई अति उपयोगी चीज बनाई जा सके। यह भी जैव-विविधता के कारण ही सम्भव होगा।

AKS TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

जैव विविधता की आवश्यकता के लिए वैज्ञानिक स्पष्टीकरण
(The Scientific Explanation for the need of Biodiversity)

जैव विविधता की आवश्यकता का वैज्ञानिक स्पष्टीकरण निम्नलिखित है—

1. सभी प्रकार के मानव जीवन, पशुओं, जीव-जन्तुओं तथा पौधों का पारस्परिक सम्बन्ध है। इनमें पारस्परिक निर्भरता भी होती है जिससे पारिस्थितिकी सन्तुलन बना रहता है। जैसे-जैसे आन्तरिक सम्बन्ध कम होने लगता है, पारिस्थितिकी में असन्तुलन होने लगता है। पृथ्वी के समस्त जीवों में आन्तरिक निर्भरता होती है। इन संवेदनशील सम्बन्धों हेतु मनुष्य ही एक महत्वपूर्ण कड़ी है। जब यह कड़ी टूट जाती है, तब मनुष्य के स्वयं के लिए समस्या पैदा होने लगती है।
2. जैव विविधता का विस्तार अधिक व्यापक होता है, जो पर्यावरण के आर्थिक एवं सामाजिक लाभ के दृष्टिकोण से उपयोगी है।
3. जैव विविधता का संरक्षण तथा अनुरक्षण वर्तमान तथा भावी पीढ़ी के लिये अधिक उपयोगी एवं लाभदायक है।
4. जैव विविधता का सीधा सम्बन्ध जीवन की गुणवत्ता से होता है।
5. उच्च कोटि की फसल हेतु उत्तम प्रकार का बीज तथा खाद चाहिए होती है। नवीन फसल के सृजन के लिए आनुवंशिक विषमता (Genetic Diversity) की आवश्यकता होती है। नयी फसल की उत्पादकता तथा उच्च कोटि की फसल का सृजन भी पारिस्थितिक तन्त्र पर निर्भर करता है। उसी के अनुरूप फसल का चयन किया जाना चाहिए।
6. यदि जैव विविधता का अनुरक्षण प्रकृति के अनुरूप किया जाए तो पर्यावरण की भौतिक एवं भौगोलिक परिस्थितियों जैसे वायुमण्डल, भूमण्डल का विकास तथा अनुरक्षण जैविक विषमता या जैव विविधता की सहायता से किया जा सकता है।
7. मानव को विकास की प्रक्रिया तथा जीव विज्ञान के पारिस्थितिक तन्त्र का ज्ञान होना अति आवश्यक है। जैव विविधता अथवा जैविक विषमता का ज्ञान विकास की प्रक्रिया को समझने में बहुत सहायक होता है। जीवमण्डल (Biosphere) तथा मानव जीवन के अनुरक्षण हेतु तथा विकास की प्रक्रिया के लिए इसका ज्ञान अति आवश्यक है।

शहरीकरण (Urbanization)—बढ़ती हुई आबादी गरीबी एवं बेरोजगारी के कारण ग्रामीण जीवन छोड़कर लोग रोजगार, सुविधाओं एवं आराम के लिये शहरों की ओर पलायन कर रहे हैं जिससे शहरों की आबादी तेजी से बढ़ती जा रही है। शहरों में वाहनों का शोर, उनसे निकला धुआँ, उद्योगों से निकला धुआँ एवं गन्दा बहिस्राव, कूड़े करकट का ढेर एवं अपर्याप्त सीवर तथा जल आपूर्ति व्यवस्था ही परिलक्षित होती है। इन सभी कारणों से शहरीकरण ने भी प्रदूषण को बढ़ाया है। सन् 2000 में भारत के प्रमुख चार शहरों की आबादी निम्न प्रकार थी—

तालिका 1.2

		वर्ष 1975	वर्ष 2000
1.	नई दिल्ली	7·2 मिलियन	17·2 मिलियन
2.	चेन्नई	7·8 मिलियन	12·9 मिलियन
3.	कोलकाता	8·5 मिलियन	16·7 मिलियन
4.	मुम्बई	9·3 मिलियन	17·0 मिलियन

राजमार्ग अथवा सड़क विकास (Highway Development)

भारत में यातायात की सुविधाओं को बढ़ाने, गाँवों को शहरों से जोड़ने तथा अन्य औद्योगिक आवश्यकताओं के लिये सड़कों का विकास अति आवश्यक है। पूरे देश में सड़कों का जाल बिछा हुआ है। परन्तु सड़कों की गुणवत्ता पर विशेष ध्यान

Scanned with CamScanner

AKC TECHNICAL CLASSES

नहीं दिया जा सका है। कुछ समय से हॉट मिक्स प्लान्ट द्वारा सड़कों का निर्माण किया जा रहा है। इसके लिए विश्व बैंक आदि से अनेक बार ऋण लिये गये हैं। भारत में फैली मुख्य सड़कों को राष्ट्रीय राजमार्ग का दर्जा दिया गया है। इन सड़कों की गुणवत्ता को विश्व स्तरीय बनाने के लिये दो महत्त्वपूर्ण परियोजनायें तैयार की गयी हैं—

(i) राष्ट्रीय राजमार्ग विकास परियोजना (NHDP) वर्ष 1996

(ii) प्रधानमन्त्री भारत जोड़ो परियोजना (PMBJP) वर्ष 2003 – 2004

(i) राष्ट्रीय राजमार्ग विकास परियोजना (National Highway Development Project)

(देखें तालिका—1.3) **इस परियोजना का निर्माण कार्य सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र की सहभागिता से किया जा रहा है,** जिसकी कुल लागत 60,000 करोड़ रुपये की है। इस परियोजना का निर्माण **तीन चरणों में किया जा रहा है। प्रथम चरण के अन्तर्गत स्वर्णिम चतुर्भुज के रूप में देश के चार महानगरों दिल्ली, मुम्बई, चेन्नई तथा कोलकाता को जोड़ने वाले राष्ट्रीय राजमार्गों का 4 या 6 लेन वाले विश्वस्तरीय राजमार्गों के रूप में निर्माण किया जा रहा है। दूसरे चरण में कश्मीर से कन्याकुमारी तक** उत्तर-दक्षिण गलियारा एवं सिलचर से पोरबन्दर तक पूरब-पश्चिम गलियारा, **कुल मिलाकर 14846 किमी० लम्बे राष्ट्रीय राजमार्गों को 4 या 6 लेन का बनाया जा रहा है।** इसी तरह **तीसरे चरण** में **दस प्रमुख बन्दरगाहों को** प्रथम दो चरणों में निर्माणाधीन **राष्ट्रीय राजमार्गों से जोड़ने का कार्य किया जा रहा है। इस परियोजना का** विशालकाय **निवेश** पैट्रोल तथा डीजल पर उपकर लगाकर अव-संरचना (Infrastructure) विकास बॉण्ड जारी करके **विश्व बैंक एवं एशियाई विकास बैंक से ऋण लेकर बजटीय सहायता देकर तथा "निर्माण करो–परिचालन करो–हस्तान्तरित करो" (B.O.T.) नीति अपनाकर सम्पन्न किया जा रहा है।** इस परियोजना के अन्तर्गत तीनों चरणों में कुल 14846 किमी० लम्बे राष्ट्रीय राजमार्ग का निर्माण किया जा रहा है। यह राजमार्ग **देश के 11 राज्यों की राजधानियों को दिल्ली से जोड़ देता है।** दिल्ली से जुड़ने वाले **ये राज्य हैं—जम्मू कश्मीर, राजस्थान, गुजरात, कर्नाटक, महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश, तमिलनाडु, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, असम** एवं **उत्तर प्रदेश।** यह राजमार्ग तन्त्र पंजाब, हरियाणा, बिहार, केरल, मध्य प्रदेश और मेघालय से गुजरते हुए भी इनकी राजधानियों से होकर नहीं गुजरता।

(ii) प्रधानमन्त्री भारत जोड़ो परियोजना (Prime Minister Bharat Joro Pariyojna or PMBJP)

राष्ट्रीय राजमार्ग परियोजना के राजमार्ग तन्त्र में न जुड़ सकने वाले राज्यों की राजधानियों एवं अन्य प्रमुख औद्योगिक शहरों को उक्त राजमार्ग तन्त्र से जोड़ने हेतु वर्ष 2003 – 2004 में प्रधानमन्त्री भारत जोड़ो परियोजना तैयार की गई। इसके अन्तर्गत प्रथम योजना में शामिल न हो सके लगभग 10000 किमी० लम्बे राष्ट्रीय राजमार्गों का उच्चीकरण किया जायेगा, जिसकी कुल लागत 40000 करोड़ रुपये है। यह परियोजना प्रथम परियोजना की भाँति ही लागू की जा रही है। **वर्तमान में इस परियोजना को परिवर्तित करके राष्ट्रीय राजमार्ग विकास परियोजना चरण III (NDHP Phase III) कर दिया गया है।**

परियोजना के लाभ—राष्ट्रीय राजमार्ग की लम्बाई सम्पूर्ण सड़कों की कुल लम्बाई का मात्र 2% है, किन्तु आज भी कुल यातायात का लगभग 40% इन्हीं राजमार्गों से गुजरता है। इन **परियोजनाओं के पूर्ण हो जाने पर अनुमानतः कुल यातायात का 60% इन्हीं से होकर गुजरेगा।** भावी समय में **सकल घरेलू विकास दर 8 से बढ़कर 10 हो जाने की प्रबल सम्भावना है।** इस योजना से **भारतीय अर्थव्यवस्था में विकास एवं पर्यटन उद्योग में विकास की काफी सम्भावनाएँ हैं।** विश्व बैंक की रिपोर्ट के अनुसार **वाहनों के ईंधन में बचत, टूट-फूट एवं मरम्मत में बचत तथा समय में बचत से लगभग 8000 करोड़ रुपये तक की बचत प्रतिवर्ष होगी।**

AK TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

ऊर्जा के स्त्रोतों को बताइये।

उत्तर: ऊर्जा के स्त्रोत (Sources of Energy): ऊर्जा के स्त्रोतों को वर्गीकरण की दृष्टि से निम्नलिखित तीन प्रकार से बांटते हैं–

1. प्रयोग के अनुसार (According to their use):

(क) वाणिज्यिक ऊर्जा (Commerical energy): इसमें कोयला, तेल और प्राकृतिक गैसें, जल विद्युत तथा आणविक ईंधन आते हैं

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

(ब) गैर-वाणिज्यिक ऊर्जा इसमें मुख्यत: वन स्त्रोत से प्राप्त ईंधन, चारकोल सम्मिलित होते हैं। अन्य प्रकार के ईंधन जिनमें उपले, कृषि अपशिष्ट तथा अन्य वनों, कपड़ा उद्योग, घरूल अथवा उद्योगों का कूड़ा-करकट, आदि भी इसमें शामिल किए जा सकते हैं।

2. प्राप्ति के अनुसार (According to their sources):

(अ) परम्परागत स्त्रोत (Conventional sources): इसमें जीवाश्म ईंधन (Fossil Fuels) ही मुख्य हैं, जिनमें कोयला, तेल गैस तथा लकड़ी को सम्मिलित किया जाता है।

(ब) गैर-परम्परागत स्त्रोत (Non-conventional sources): इसमें सौर ऊर्जा, आणविक ऊर्जा, जल ऊर्जा, भू-तापीय ऊर्जा, पवन ऊर्जा, बायो गैस, समुद्रीय ऊर्जा, पशु तथा कृषि अपशिष्ट से प्राप्त ऊर्जा आदि सम्मिलित हैं।

3. पुन: पूर्ति के प्रकार से (According to their Replenishment):

(अ) पुन: नवीन न होने वाले (Non-renewal sources): इस श्रेणी में लगभग सभी परम्परागत स्त्रोतों से प्राप्त तेल, कोयला और गैस आते हैं। लकड़ी परम्परागत ईंधन स्त्रोत होते हुए भी इस प्रकार के स्त्रोत में सम्मिलित नहीं की जाती है, क्योंकि यह पुन: उत्पादन किए जा सकने वाली वस्तुओं की श्रेणी में आती है।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

(ब) पुनः नवीन हो सकने वाले (Renewal sources): इस विभाजन के अन्तर्गत शेष सभी स्त्रोत जिनमें सौर ऊर्जा, आणविक ऊर्जा, विद्युत ऊर्जा, जल ऊर्जा, भू-तापीय ऊर्जा एवं अन्य इसी प्रकार से उत्पादित हो सकने वाली ऊर्जा को शामिल किया जा सकता है।

प्रश्न 17. परम्परागत ऊर्जा संसाधन कौन-कौन से हैं? बताइये।

अथवा

ऊर्जा के परम्परागत स्त्रोतों का वर्णन कीजिए।

उत्तर: ऊर्जा के परम्परागत स्त्रोत (Conventional sources of energy): वाणिज्यिक ऊर्जा के स्त्रोत, जो कोयला, तेल व गैस तथा लकड़ी तक सीमित हैं, इस इतने भार को उठा पाएंगे यह सम्भावना बहुत कठिन है; क्योंकि विशेषज्ञों के अनुसार इनमें से प्रथम तीन संसाधन जो पुनः नवीनीकरण नहीं (Non-renewable) की श्रेणी में आते हैं, बहुत निकट भविष्य में समाप्त होने वाले हैं। निम्नांकित सारणी देखें।-

भारत में खनिज स्त्रोतों से प्राप्त ऊर्जा का भण्डार एवं व्यय विवरण

संसाधन (स्त्रोत)	कुल भण्डारण	वार्षिक उत्पादन	उपलब्धता का अधिकतम समय	विशेष विवरण
कोयला (मिलियन टन में)	80,950 mt	100-150 mt	500 वर्ष	400 फीट तक ही वर्तमान में निकाला जा रहा है और नीचे और अधिक सम्भावना।
लिग्नाइट (मिलियन टन में)	2,000 mt	6 mt	350 वर्ष	
पेट्रोलियम (मिलियन टन में)	200 mt	6-7 mt	50 वर्ष	एक सर्वे के अनुसार लगभग 3,000 mt भारत भूमि पर तथा 1,000 mt समुद्र में और मिलने की सम्भावना।
प्राकृतिक गैस (मिलियन घन मीटर)	65 bm^3	1.5 से 1.6 bm^3	50 वर्ष	प्रतिवर्ष लगभग 1.0 bm^3 का उपयोग हो पाता है, शेष गैस नष्ट हो जाती है। भविष्य में और प्राप्त होने की सम्भावना

इस सारणी से हम बड़े मोटे रूप से यह जान सकते हैं कि देश में परम्परागत ईंधन का वर्तमान स्टॉक बहुत सीमित है और इसी कारण कुछ अन्य वैकल्पिक स्त्रोत खोजने ही होंगे। लकड़ी का वाणिज्यिक ऊर्जा के रूप में उपयोग देश के गिरते वन प्रतिशत को देखते हुए बहुत उपयुक्त नहीं है। अतः नवीनतम स्त्रोतों में जल शक्ति (Hydro power) तथा आणविक ईंधन (Nuclear Fuel) अन्य ईंधन स्त्रोत का उपयोग उचित एवं श्रेष्ठ रह सकता है। वर्तमान में भी काफी मात्रा में इन स्त्रोतों से ऊर्जा प्राप्त हो रही है तथा निकट भविष्य में कई अधिक गुनी वृद्धि सम्भव है। सौर ऊर्जा (Solar energy) तथा अन्य कई स्त्रोत भी वैकल्पिक रूप में उपयोग में लाए जा सकते हैं।

प्रश्न 18. पृथ्वी पर पाये जाने वाले ऊर्जा के गैर-परम्परागत अथवा गैर-अक्षप संसाधन (Resources) कौन-कौन से हैं? बताइये।

उत्तर: ऊर्जा के गैर-परम्परागत तथा वैकल्पिक स्त्रोत (Non-conventional and alternate sources of energy)

(A) वाणिज्यिक उपयोग हेतु

1. जल शक्ति (Hydro power): भारत में 'जल विद्युत ऊर्जा' की अधिकतम सम्भावनाओं की अधिकृत जानकारी ज्ञात करने के लिये केन्द्रीय जल एवं ऊर्जा आयोग (Central Water and Power Commission) ने एक विशाल सर्वेक्षण वर्ष 1953-60 के मध्य किया। इसमें देश की विभिन्न नदियों अथवा उसके समूहों के संग्रहण क्षेत्र में बनाए जा सकने वाले 'जल विद्युत केन्द्र' पानी की उपलब्धता और अन्य सम्बन्धित बिन्दुओं को दृष्टिगत रखते हुए जल-विद्युत ऊर्जा की मात्रा के सम्भावित किलोवाट (41 mKW)

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

जल विद्युत का दैनिक उत्पादन किया जा सकता है, जो 60% गुणांक भार (Load factor) से 216 ट्रिलियन वाट प्रति घण्टा (216 TWh) होती है। वर्ष 1980 में हो रहे उत्पादन 27 TWh की तुलना में यह 8 गुनी है। अत: इस बहुत भारी मात्रा में 'जल ऊर्जा' का उत्पादन कर इसे वाणिज्यिक उपयोग में लाया जा सकता है।

इस ऊर्जा के उत्पादन की सर्वाधिक चर्चित विशेषता यह है कि इसमें बहुत ही सीधे-सीधे तरीके से जल को ऊपर से नीचे तक एक टरबाइन पर गिराने से ही जेनेरेटर का चालू कर विद्युत का उत्पादन किया जा सकता है। अधिकांश स्थानों पर जहां पानी स्वत: ही ऊंचाई से गिरता है, वहां कोई अतिरिक्त ऊर्जा संयन्त्र की भी आवश्यकता नहीं होती है, पर जहां बहते पानी को ऊपर उठाकर नीचे गिराने की प्रक्रिया विशेष प्रकार से बनाए गए ढलानों (Hydraulic Ramps) से करनी होती है, वहां कार्य प्राकृतिक वायु दबाव से चलने वाले पम्पों के उपयोग से किया जा सकता है और जिस पर कोई आवर्तक व्यय नहीं होगा। इसके अतिरक्त यह केन्द्र प्रतिदिन पूरे चौबीसों घण्टे महीनों तक बिना किसी रख-रखाव के चलते रह सकते हैं तथा इनसे प्रदूषण की तो कोई सम्भावना ही नहीं होती।

2. आणविक ऊर्जा (Nuclear energy): भारत में आणविक ऊर्जा का उत्पादन कुल देश की उत्पादन का लगभग 2.6% है। प्रतिवर्ष के उच्च लक्ष्य निर्धारण पर कुल उत्पादन में वृद्धि होती है। सन् 1996-97 में यह लक्ष्य 250 बिलियन यूनिट था जिसमें आणविक ऊर्जा का भाग लगभग 6.76 बिलियन यूनिट (अर्थात् लगभग 2.7%) था।

भारत आज विश्व के उन तेरह गिन-चुने देशों (संयुक्त राज्य अमेरिका, रूस, यू. के. फ्रांस, कनाडा के बाद) में आता है जिन्हें 'आणविक ऊर्जा केन्द्र' डिजाइन करने, बनाने, स्थापित करने और चलाने की स्वतन्त्र रूप से जानकारी हासिल है। अत: इसी विश्वास पर देश में ऊर्जा की कमी को पूरा करने के लिए इस क्षेत्र में सन् 2,000 तक 10,000 MWe ऊर्जा उत्पादन का लक्ष्य निर्धारित किया गया था जिसे हम अभी तक भी पूरा नहीं कर पाए हैं।

राजस्थान–2 × 235, और काइगा (कर्नाटक)–2 × 235 = 1,645 MWe निर्माणाधीन हैं। इसके अतिरिक्त 16 आणविक केन्द्रों (काइगा–4 × 235, तारापुर–2 × 500, राजस्थान–4 × 500 और कुदानकुलम–2 × 1000 + 6 × 500 = 8,940 MWe) शक्ति की यासेगना को अन्तिम रूप दिया जा रहा है। यह आशा है कि निकट भविष्य में 12,050 MWe ऊर्जा इस क्षेत्र में बनने लगेगी।

आणविक ऊर्जा के लिए इस समय 'यूरेनियम' (U^{237}) का प्रयोग किया जा रहा है जिसका देश में कुल भण्डारण 22,000 टन आंका गया है जो अत्यन्त सीमित है, लेकिन दूसरे चरण में प्लूटोनियम तथा यूरेनियम (U^{238}) का प्रयोग होगा (प्लूटोनियम, U^{237} के उपयोग के बाद निकाला गया तत्त्व है)। तीसरे और अन्तिम चरण में U^{233} थोरियम का उपयोग किया जाना है जिसका देश में विशाल भण्डार है। एक सर्वे के अनुसार केरल, राँची (पश्चिमी बंगाल) तथा बिहार में 4,50,000 टन थोरियम उपलब्ध है। इससे असीमित ऊर्जा उत्पादन सम्भव है जो 5 मिलियन TWh (पांच मिलियन ट्रिलियन वाट प्रति घण्टा) तक हो सकती है। यह वर्तमान ईंधन (यूरेनियम) से सन् 2,000 तक निर्धारित लक्ष्य 500 THw से दस हजार गुना है।

इस ऊर्जा पर व्यय अधिक है जो भारत जैसे देश के लिए सामान्यत: बहुत कठिन कार्य है तथा इसके विकिरण से होने वाले शारीरिक विकार के कारण भी इसे अधिक उत्साह नहीं मिल सकेगा।

(B) गैर-वाणिज्यिक उपयोग हेतु (For non-commercial use)

1. सौर ऊर्जा (Solar energy): भारत जैसे देश में जहां वर्ष के अधिक समय में प्रचण्ड गर्मी पड़ती है, अर्थात् सूर्य का तेज प्रकाश मिलता है, सौर ऊर्जा का बहुत व्यापक उपयोग किया जा सकता है। वैसे भी वैकल्पिक ऊर्जा के स्रोत के रूप में सूर्य एक ऐसा असीमित प्रकाश भण्डार है जो पृथ्वी के जन्म के साथ ही (कई अरब वर्ष पूर्व) जन्मा और तब से आज तक निरन्तर प्रतिक्षण अपनी 40 लाख टन हाइड्रोजन को जलाकर इतने ही टन हीलियम में परिवर्तित कर प्रकाश पुंज बना हुआ है तथा विशाल ऊर्जा उत्पन्न कर रहा है। इस विशाल ऊर्जा का कुछ भाग विकिरण द्वारा पृथ्वी पर पहुंचता है जिसका उपयोग उपकरणों की सहायता से ताप ऊर्जा तथा विद्युत ऊर्जा के रूप में किया जा रहा है।

भारत को सौर ऊर्जा 5,000 ट्रिलियन kWe प्रतिवर्ष मिल रही है, जो पूरे देश की अगली कई शताब्दियों तक की आवश्यकता से भी अधिक है (प्रतिदिन का औसत 4-7 kWe प्रति वर्ग मीटर होता है)।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

अपने देश में सौर ऊर्जा को तापीय ऊर्जा में बदल कर सोलर कुकर, सोलर वाटर हीटर, सौर वायु-तापक, सौर हरित गृह, सौर प्रशीतन, सौर पम्पन, सौर-औद्योगिक प्रक्रिया तापन आदि में काम लिया जा रहा है। विद्युत ऊर्जा के रूप में परिवर्तित कर विद्युत प्रकाश, रेडिया तथा टी.वी. चलाने में भी देश ने काफी सफलता पाई है। भारत में इन उपयोगों को जनता तक पहुंचाने हेतु 20 गांवों में सोलर गांव का रूप दिया है, जहां जल पम्प, घरेलू प्रकाश, सड़कों के खम्भों की लाइटें सामुदायिक टी.वी. सौर विद्युत के सहारे चल रहे हैं। शैन: शनै: इसकी आम आदमी द्वारा रुचिपूर्वक प्रयोग किए जाने की सम्भावना बहुत बढ़ रही है।

इस ऊर्जा के सबसे मुख्य लाभ में–(1) प्रकाश ऊर्जा का अथाह भण्डार तथा (2) प्रदूषण रहित ऊर्जा है। सौर ऊर्जा से चलने वाले उपकरण महंगे हैं और प्रारम्भिक व्यय भी कुछ अधिक ही है, लेकिन इसके बाद फिर कोई व्यय न होना भी कम लाभप्रद नहीं है।

नए प्रयोगों में अन्नामलाई विश्वविद्यालय, IIT खड़गपुर तथा बम्बई और कृषि विश्विद्यालय लुधियाना ने सौर ड्रायर के प्रयोग से धान, मिर्चे, गोला आदि अनेक वस्तुओं को कम समय में सुखाकर व्यापार के लिए नई दिशा खोली है।

खारे पानी को सौर ऊर्जा से मीठे पानी में परिवर्तन के प्रयोग भी सफल हो रहे हैं और यदि व्यापक रूप से इसमें सफलता प्राप्त हुई तो पीने के पानी की उपलब्धता की बहुत बड़ी परेशानी से छुटकारा मिल जाएगा। सबसे बड़ी यह बात होगी कि इसके लिए कोई बड़े संयन्त्र की समस्या न होकर केवल गांव स्तर पर स्वनिर्मित उपकरण (Improvised Apparatus) से ही यह कार्य सम्भव हो सकेगा।

इस ऊर्जा से गांवों में परम्परागत ऊर्जा की कमी का अहसास भी नहीं होगा और वहां के अधिकांश लोगों की सभी आम जरूरतें पूरी होंगी, ऐसा विश्वास किया जा सकता है। अभी समस्या सौर ऊर्जा के भण्डारण की है जिस पर निरन्तर शोध कार्य चल रहे हैं।

2. लहरो से ऊर्जा (Energy from waves): अब तक सैद्धान्तिक रूप से केवल जानकारी रखने वाले देश भारत ने अपने पहले 'लहरों से ऊर्जा' प्रोजेक्ट के संचालन में सफलता प्राप्त कर विश्व में अपनी प्राथमिकता दर्ज करा दी है। 'समुद्री विकास के केन्द्रीय विभाग' (Union Government of Ocean Development) के तत्वावधान में 'समुद्री इंजीनियरिंग केन्द्र, आई. आई. टी. मद्रास' (Ocean Engineering Centre, IIT, Madras) के वेव इनर्जी ग्रुप (Wave Energy Group) ने 150 MW शक्ति के इस प्रोजेक्ट का कार्य 'स्टेट हार्बर इंजीनियरिंग डिपार्टमेन्ट त्रिवेन्द्रम' (State Harbour Engineering Deparmtnet, Trivandrum) में सम्पन्न किया है।

इस ऊर्जा स्रोत के दो मुख्य लाभ हैं- (1) इससे कोई प्रदूषण की सम्भावना नहीं है और (2) यह निरन्तर चलने वाली अथकनीय लहरों के संचालन पर आधारित है; अत: इससे वर्षपर्यन्त ऊर्जा प्राप्त हो सकती है।

इस उत्पादन में संयन्त्र का व्यय भी बहुत अधिक नहीं है, पर चूंकि यह समुद्र अथवा विशाल जल संग्रह केन्द्र पर ही सम्भव है; अत: देश में व्यापक रूप से यह लाभप्रद नहीं है।

3. पवन ऊर्जा (Wind power): वायु द्वारा संचालित पवन संयन्त्र (Wind mills) का उपयोग बहुत पुराना होने पर भी भारत में बहुत अधिक लोकप्रिय नहीं बना है, लेकिन जब वैकल्पिक ऊर्जा के स्रोत की बात चली है तो यह एक अच्छा स्रोत हो सकता है। गुजरात, महाराष्ट्र, केरल, तमिलनाडु, ओडिशा के समुद्री किनारों के पास जहां वायु वेग अधिक है, वहां यह अत्यन्त सफल हो सकती है (यह उल्लेखनीय है कि वायु ऊर्जा अपने वेग की घनीय मात्रा के तुल्य होती है, लेकिन 16 किमी प्रति घण्टे से कम वेग वाली वायु पर ऊर्जा की मात्रा नगण्य है।)

वर्तमान में मध्य भारत के गंगा-सिंधु के मैदानी क्षेत्र में पवन ऊर्जा की सहायता से अनेक जगह 30 मीटर तक की गहराई से पानी खींचने तथा छोटे घरेलू आवश्यकता की पूर्ति कर देने वाले 2 kWh के विद्युत संयन्त्र काम कर रहे हैं।

अपने देश में किए गए एक सर्वेक्षण के अनुसार, पवन ऊर्जा का उत्पादन 45,000 MWe तक सम्भव है, जबकि वर्तमान में केवल 1,080 MWe का ही उत्पादन हो रहा है जो 1% से भी कम है।

इस ऊर्जा की भी विशेषता यही है कि किसी प्रकार का रख-रखाव सहित, कोई व्यय नहीं है और प्रदूषण मुक्त है। अपने देश में इस ऊर्जा के अधिकाधिक उपयोग की सम्भावनाओं पर विचार करना चाहिए।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

अध्याय

2

वायु प्रदूषण (Air-Pollution)

परिचय (Introduction)

वायु सभी मनुष्यों, जीवों एवं वनस्पतियों के लिए अत्यन्त आवश्यक है। इसकी महत्ता का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि मनुष्य भोजन के बिना हफ्तों तक, जल के बिना कुछ दिनों तक ही जीवित रह सकता है किन्तु वायु के बिना उसका जीवित रहना असम्भव है। मनुष्य दिनभर में जो कुछ लेता है उसका 80% भाग वायु है। ध्यातव्य है कि मनुष्य प्रतिदिन 22000 बार सांस लेता है। इस प्रकार वह प्रत्येक दिन 16 kg या 35 गैलन वायु ग्रहण करता है। वायु विभिन्न गैसों का मिश्रण है जिसमें नाइट्रोजन की मात्रा सर्वाधिक अर्थात् 78% होती है जबकि 21% ऑक्सीजन तथा 0·03% कार्बनडाई ऑक्साइड पायी जाती है तथा शेष में 0·97% में हाइड्रोजन, हीलियम, आर्गन, निओन, क्रिप्टन, जीनोन, ओजोन एवं जल वाष्प होती है। वायु में विभिन्न गैसों की उपरोक्त मात्रा उसे सन्तुलित बनाये रखती हैं। इनमें जरा सा भी अन्तर आने पर यह असन्तुलित हो जाती है और स्वास्थ्य के लिए हानिकारक साबित होती है। श्वसन के लिए ऑक्सीजन जरूरी है। जब कभी वायु में कार्बनडाई-ऑक्साइड, कार्बन-मोनोऑक्साइड, सल्फर-डाईऑक्साइड, नाइट्रोजन के ऑक्साइडों की वृद्धि हो जाती है तो ऐसी वायु को प्रदूषित वायु तथा इस प्रकार के प्रदूषण को वायु प्रदूषण कहते हैं। अतः इसकी परिभाषा हम निम्न प्रकार दे सकते हैं—

"प्राकृतिक तथा मानव जनित स्त्रोतों से उत्पन्न बाहरी तत्वों के वायु में मिश्रण के कारण वायु की असन्तुलित दशा को वायु प्रदूषण कहते हैं तथा जिन कारकों से वायु प्रदूषित होती है, उन्हें वायु प्रदूषक कहते हैं।"

इस प्रकार असन्तुलित वायु की गुणवत्ता में ह्रास हो जाता है और वह जीव-जन्तुओं एवं पादपों के लिए हानिकारक हो जाती है।

वायु प्रदूषण की परिभाषा (Definition of Air Pollution)—हेनरी परकिन्स (Henry Perkins) ने वायु प्रदूषण की एक स्वीकार्य परिभाषा निम्न प्रकार दी—"बाह्य पर्यावरण में धूल, धुआँ, गैस, तुषार, गन्ध एवं वाष्प में से एक या अधिक प्रदूषकों की हानिकारक मात्रा एवं दीर्घ अवधि तक उपस्थिति जो मनुष्य, जानवरों, पेड़-पौधों एवं सम्पत्ति के लिए घातक हो अथवा तर्कहीन ढंग से जीवन और सम्पत्ति के आन्नदमय उपभोग में बाधक हो, वायु प्रदूषण कहलाता है।"

विश्व स्वास्थ्य संगठन (W.H.O.)—"वायु प्रदूषण एक ऐसी परिस्थिति है जिसमें बाह्य वायुमण्डल में ऐसे पदार्थ एकत्र हो जाते हैं जो मनुष्य एवं उसके पर्यावरण के लिए हानिकारक होते हैं।"

प्रदूषण मुक्त वायु का संगठन (Composition of Pollution Free Air)

वायु में पायी जाने वाली गैसों की प्रतिशत मात्रा दी गई तालिका के अनुसार निम्नवत है—

क्रमांक	घटक	प्रतिशत में	ppm (आयतन में)
1.	नाइट्रोजन (Nitrogen)	78·08	780800·00
2.	ऑक्सीजन (Oxygen)	20·94	209400·00
3.	ऑर्गन (Organ)	0·934	9340·00
4.	कार्बन डाईऑक्साइड (CO_2)	0·0315	315·00
5.	निओन (Neon)	0·0018	18·00
6.	हीलियम (Helium)	0·0005	5·00
7.	मीथेन (Methane)	0·0001 – 0·00015	100 – 1·50
8.	क्रिप्टन (Krypton)	0·00011	1·10

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

9.	नाइट्रस ऑक्साइड (NO_2)	0·00005	0·50
10.	हाइड्रोजन (Hydrogen)	0·00005	0·50
11.	कार्बन मोनोऑक्साइड (CO)	0·00001	0·10
12.	जीनोन (Zenon)	0·000008	0·08
13.	ओजोन (Ozone)	0·000002	0·02
14.	अमोनिया (Ammonia)	0·000001	0·01
15.	नाइट्रोजन डाई-ऑक्साइड (NO_2)	0·000001	0·01
16.	सल्फर डाई-ऑक्साइड (SO_2)	0·00000002	0·0002
17.	रेडान (Radon)	$0·06 \times 10^{-8}$	$0·06 \times 10^{-14}$

वायु गुणवत्ता सूचकांक के मुताबिक पीएम 2.5 का स्तर और प्रभाव

सूचकांक	स्तर	स्थिति	स्वास्थ्य पर प्रभाव
0-50	हरा	अच्छी	स्वास्थ्य के लिए हानिकारक नहीं
51-100	पीला	संतोषजनक	संवेदनशील लोगों के लिए नुकसानदायक
101-150	नारंगी	मध्यम प्रदूषित	बुजुर्गों और बच्चों के लिए घातक
151-200	लाल	कमजोर गुणवत्ता	सभी के स्वास्थ्य के लिए नुकसानदायक
201-300	बैंगनी	गंभीर हालत	सभी के स्वास्थ्य के लिए गंभीर समस्या
301-500	गहरा भूरा	बेहद गम्भीर हालत	जीना दूभर

(आंकड़े माइकोग्राम प्रति क्यूबिक मीटर में)

वायु प्रदूषकों के प्रकार (Types of Air-pollutants)

वायु प्रदूषकों को निम्न दो वर्गों में बाँटा गया है—

(1) प्राकृतिक वायु प्रदूषक (Natural Air-pollutant)

(2) कृत्रिम वायु प्रदूषक (Artificial Air-pollutant)

(1) प्राकृतिक वायु प्रदूषक (Natural Air-pollutant)

प्राकृतिक स्रोतों से उत्पन्न वायु के प्रदूषकों को निम्न वर्गों में बांटा गया है—

(i) ज्वालामुखी के उद्‌गार से निकली राख, धूल, धुँआ, कार्बन डाई-ऑक्साइड, हाइड्रोजन तथा अन्य गैसें।

(ii) आँधी तूफान के समय उड़ती धूल।

(iii) तनों में लगी आग से उत्पन्न धुँआ तथा कार्बन डाई-ऑक्साइड गैस।

(iv) दलदलों तथा अनूपों में अपघटित होने वाली पदार्थों से निकली मीथेन गैस।

(v) बैक्टीरिया से निर्मुक्त कार्बन डाई-ऑक्साइड।

(vi) कवक से उत्पन्न जीवाणु एवं वायरस आदि।

(vii) फूलों के परागकण से निर्मुक्त कार्बन डाई-ऑक्साइड।

(viii) धूमकेतु, क्षुद्रग्रह एवं उल्काओं आदि के पृथ्वी से टकराने के कारण उत्पन्न कास्मिक धूल।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

(2) कृत्रिम वायु प्रदूषक (Artificial Air-pollutant)

मानवीय क्रिया-कलापों से उत्पन्न होने वाले प्रदूषक कृत्रिम वायु प्रदूषक कहलाते हैं। ये निम्न तीन प्रकार के होते हैं—

(i) कार्बन डाई-ऑक्साइड
(ii) कार्बन मोनो-ऑक्साइड
(iii) सल्फर के ऑक्साइड
(iv) नाइट्रोजन के ऑक्साइड
(v) क्लोरीन
(vi) सीसा
(vii) अमोनिया
(viii) कैडमियम
(ix) बेंजीपाइस
(x) हाइड्रोकार्बन
(xi) धूल।

ये कृत्रिम वायु प्रदूषक निम्न मानवीय क्रिया-कलापों के कारण उत्पन्न होते हैं—

(i) दहन प्रक्रिया द्वारा
(ii) कृषि कार्यों द्वारा
(iii) औद्योगिक निर्माणों द्वारा
(iv) विलायकों के उपयोग द्वारा
(v) आणविक ऊर्जा सम्बन्धी परियोजनाओं द्वारा
(vi) अन्य कारणों द्वारा।

(i) दहन प्रक्रिया द्वारा

ऊर्जा आज के जीवन की महती आवश्यकता है। ऊर्जा के बिना वर्तमान के क्रिया-कलाप सम्भव नहीं। खाना पकाने से लेकर ईंट-सीमेन्ट आदि के निर्माण में ऊर्जा की आवश्यकता होती है। वाहनों एवं मशीनों आदि के चालन में भी ऊर्जा की आवश्यकता होती है। यह ऊर्जा विभिन्न प्रकार के ईंधनों के दहन से प्राप्त होती है। दहन की प्रक्रिया को निम्न तीन वर्गों में बांटा सकते हैं—

(क) घरेलू कार्यों में दहन
(ख) वाहनों में दहन
(ग) ताप-विद्युत ऊर्जा हेतु दहन।

(क) घरेलू कार्यों में दहन—घरेलू कार्यों के लिए जो ऊर्जा प्रयोग की जाती है, वह कोयले, लकड़ी, कुकिंग गैस, मिट्टी के तेल आदि से प्राप्त होती है। इन ईंधनों के दहन से कार्बन डाई-ऑक्साइड, कार्बन मोनो-ऑक्साइड, सल्फर डाई-ऑक्साइड आदि गैसें उत्पन्न होती हैं। ईंधनों के अपूर्ण दहन से कई प्रकार के हाइड्रोकार्बन एवं साइक्लिक पाइरीन यौगिक उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार के दहन से वायुमण्डल में दो प्रकार का प्रभाव पड़ता है। एक तो यह कि अनेक हानिकारक गैसें वायु में मिलकर उसे प्रदूषित करती हैं और दूसरी तरफ वायु में उपस्थित ऑक्सीजन की मात्रा में कमी आती है, जो कि जीवन के लिए खतरनाक है। देश की कुल ऊर्जा का आधा भाग केवल रसोईघरों में खर्च होता है तथा देश के कुल प्रदूषण का 1/3 भाग केवल रसोईघरों में उत्पन्न होता है।

(ख) वाहनों में दहन—वायु प्रदूषण के लिए वाहन भी कम उत्तरदायी नहीं हैं। बसों, ट्रकों, कारों, मोटर साइकिल, स्कूटर, डीजल रेलों आदि सभी में दहन के लिए पेट्रोल अथवा डीजल ईंधन के रूप में प्रयोग किये जाते हैं। इनसे भारी मात्रा में

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

दम घुटने वाला काला धुँआ निकलता है, जो वायु को प्रदूषित करता है। डीजल वाहनों से जो धुँआ निकलता है, उसमें हाइड्रोकार्बन, नाइट्रोजन एवं सल्फर के ऑक्साइड एवं सूक्ष्म कार्बनमयी कणिकायें मौजूद रहती हैं। लेड एक वायु प्रदूषक पदार्थ है। ध्यातव्य है कि डीजल चालित वाहनों की अपेक्षा पेट्रोल चालित वाहनों में प्रदूषण अधिक होता है। एक अनुमान के अनुसार एक मोटरगाड़ी एक मिनट में इतनी अधिक मात्रा में ऑक्सीजन खर्च करती है, जितनी 1135 व्यक्ति सांस लेने में प्रयोग करते हैं। डीजल एवं पेट्रोल चालित वाहनों से होने वाले दहन में नाइट्रोजन ऑक्साइड व नाइट्रोजन डाई ऑक्साइड भी उत्पन्न होती हैं, जो सूर्य के प्रकाश में हाइड्रोकार्बन से क्रिया करके रासायनिक धूम कोहरे को जन्म देते हैं। यह रासायनिक धूम कोहरा मानव के लिए बहुत हानिकारक है। सन् 1952 में पाँच दिनों तक लंदन शहर धूम कुहरे से घिरा रहा, जिससे 4000 लोग मौत के शिकार हो गये तथा करोड़ों लोग हृदय रोग तथा ब्रोंकाइटिस के शिकार हो गये थे।

एक हजार गैलन पैट्रोल का प्रयोग करने वाले वाहनों द्वारा उत्सर्जित पदार्थ

क्रमांक	उत्सर्जी पदार्थ	मात्रा (किलोग्राम में)
1.	कार्बन मोनोऑक्साइड	1280
2.	कार्बनिक वाष्प	80 से 160
3.	नाइट्रोजन के ऑक्साइड	8 से 30
4.	विभिन्न एल्डिहाइड	7·2
5.	गन्धक के यौगिक	6·8
6.	कार्बनिक अम्ल	0·8
7.	अमोनिया	0·8
8.	जस्ता तथा अन्य धातुओं के ऑक्साइड	0·13

दिल्ली विश्व का तीसरा व भारत का सर्वाधिक प्रदूषित शहर है। इसकी गम्भीरता को देखते हुए उच्चतम न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश डॉ० ए० एस० आनन्द, न्यायमूर्ति श्री बी० एन० कृपाल और न्यायमूर्ति श्री ए० के० खरे की खण्डपीठ ने महेश चन्द्र मेहता की जनहित याचिका पर सुनवाई करते हुए 12 सितम्बर 1988 को दिल्ली सरकार को यह निर्देश दिया था कि सरकार लॉस एंजिल्स की तर्ज पर दिल्ली में ऑक्साइड स्तर को नियन्त्रित करे।

देश के प्रमुख शहरों में मोटर वाहनों द्वारा उत्सर्जित प्रदूषक (टन प्रतिदिन)

क्रमांक	शहर	सूक्ष्म कण	सल्फर डाई ऑक्साइड	नाइट्रोजन ऑक्साइड	कार्बन मोनो ऑक्साइड
1.	दिल्ली	8·58	7·4	105·38	452·51
2.	मुम्बई	4·66	3·36	59·02	391·6
3.	बेंगलुरू	12·18	1·47	21·85	162·8
4.	कोलकाता	2·71	3·04	45·58	156·87
5.	चेन्नई	1·95	1·68	23·91	119·35
6.	भारत (अनुमानित)	60	630	270	2040

देश में वाहनों से प्रतिदिन 60 टन सूक्ष्म कण, 630 टन सल्फर डाई-ऑक्साइड, 270 टन नाइट्रोजन ऑक्साइड तथा 2040 टन कार्बन डाई-ऑक्साइड उत्सर्जित होती है।

(ग) ताप-विद्युत ऊर्जा हेतु दहन—देश के अधिकांश ताप विद्युत गृहों में ईंधन के रूप में कोयला प्रयुक्त किया जाता है जिसके जलने से कार्बन डाई-ऑक्साइड, सल्फर डाई-ऑक्साइड, धुँआ तथा अन्य गैसें उत्पन्न होती हैं। भारतीय कोयले में अन्य देशों के कोयले की तुलना में 25% से 40% तक फ्लाई एश होता है और गन्धक की मात्रा सामान्य से एक प्रतिशत तक

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

कम होती है, जिसकी वजह से 200 मेगावाट का बिजली घर लगभग 50 टन सल्फर डाई-ऑक्साइड तथा 50 टन से अधिक कालिख बाहर फेंकता है। कोयले को जलाने पर अपशिष्ट के रूप में जो राख बाहर निकलती है, वह राख हवा के साथ उड़कर वायु को प्रदूषित करती है।

(ii) कृषि कार्यों द्वारा

कृषि कार्यों में कीटनाशी व जीवाणुनाशी का प्रयोग निरन्तर बढ़ता जा रहा है। विश्व में भारत सर्वाधिक पेस्टीसाइड उत्पादक देश है। एक अनुमान के अनुसार 1933 में देश में लगभग 84045 टन कीटनाशक दवाओं का प्रयोग किया गया था जब ये कीटनाशक दवायें छिड़की जाती हैं तो ये ऊपर उठकर हवा में मिल जाती हैं और वायु प्रदूषण का कारण बनती हैं। कभी-कभी इनका छिड़काव वायुयानों द्वारा भी किया जाता है।

(iii) औद्योगिक निर्माणों द्वारा

कलकारखानों से धुँआ, गैस तथा कुछ कणयुक्त पदार्थ निकलते हैं, जो वायु प्रदूषण का कारण बनते हैं। वायु प्रदूषण कपड़ा बनाने के कारखानों, तेल शोधक कारखानों, रासायनिक उद्योगों, चीनी बनाने के कारखानों, धातुकर्म एवं गत्ता निर्माण करने वाले कारखानों से सर्वाधिक होता है। इन कारखानों से कार्बन डाई-ऑक्साइड, सल्फर, सीसा, बेरिलियम, जिंक, कैडमियम पारा तथा धूल वायुमण्डल में पहुँचती है, जिससे वायु दूषित होती है।

पूर्वी अमेरिका तथा उत्तर पश्चिमी यूरोप में औद्योगिक क्षेत्रों के वायुमण्डल में इतनी मात्रा में सल्फर डाई-ऑक्साइड मौजूद है कि वर्षा के समय गिरने वाला जल, जल न होकर सल्फ्यूरिक अम्ल होता है। इसे ही तेजाबी वर्षा कहते हैं। वायु प्रदूषण की स्थिति इतनी गम्भीर है कि अन्य देशों में इसके घातक परिणामों से बचाव के लिए चेतावनी दी जा रही है। सं० रा० अमेरिका में लांस एंजिल्स की स्थिति इतनी भयावह थी कि वहाँ के स्कूलों के क्रीड़ा मैदानों में यह चेतावनी दी गयी थी कि 'सावधान अत्यधिक धुएँ की स्थिति में व्यायाम न करें और न ही गहरी सांस लें।' भारत में वायु प्रदूषण की स्थिति भयावह है। यहाँ के वायुमण्डल में सल्फर डाई-ऑक्साइड एवं धूल कणों की मात्रा बहुत अधिक है। देश के सर्वाधिक प्रदूषित शहरों में दिल्ली, अहमदाबाद, मुम्बई, कानपुर आदि हैं। दिल्ली की वायु में वायुकणों की सान्द्रता 700 माइक्रोग्राम/घन मी० आंकी गयी है जो देश के अन्य महानगरों की तुलना में सबसे अधिक है। अहमदाबाद में कपड़े की मिलें हैं, जिनसे अधिक कपास धूल निकलती है। इसके अतिरिक्त यहाँ धुँए के बादल छाये रहते हैं। यहाँ के लोग दमा एवं तपेदिक बीमारियों से अधिक पीड़ित रहते हैं। मुम्बई की अधिकांश औद्योगिक इकाइयाँ चेम्बूर ट्राम्बे में स्थित हैं। यहाँ के वायुमण्डल में धूल कणों की सान्द्रता 238 माइक्रोग्राम/घन सेमी है। कानपुर में चर्मशालायें, कपड़ा मिलें, रसायन एवं दवा बनाने वाले कारखाने अधिक हैं। एक सर्वेक्षण के अनुसार शहर के स्वच्छ वायु वाले क्षेत्रों की तुलना में वायु प्रदूषित वाले क्षेत्रों में एक बच्चे की लम्बाई 4 सेमी तथा वजन 3 kg कम पाया गया है।

(iv) विलायकों के उपयोग द्वारा

फर्नीचरों पर की जाने वाली पॉलिश एवं स्प्रे पेन्ट बनाने में विलायक इस्तेमाल किये जाते हैं और इनमें अधिकतर उड़नशील हाइड्रोकार्बन होते हैं। जब फर्नीचर पर स्प्रे पॉलिश अथवा पेन्ट किया जाता है तो ये हाइड्रोकार्बन उड़कर वायु में मिलकर वायु को प्रदूषित करते हैं।

(v) आणविक ऊर्जा सम्बन्धी परियोजनाओं द्वारा

परमाणु बमों एवं परमाणु विद्युत के उत्पादन में जिन समस्थानिकों का प्रयोग किया जाता है, इनकी स्थिति अस्थाई होती है। विस्फोट के समय ये समस्थानिक दूर-दूर तक वायुमण्डल में फैल जाते हैं तथा बाद में पृथ्वी पर अवपात के रूप में गिरते हैं, जो अपना घातक प्रभाव छोड़ते हैं। हिरोशिमा एवं नागसाकी पर गिराये गए परमाणु बमों का प्रभाव वहाँ लम्बे समय तक रहा।

(vi) वायु प्रदूषण के अन्य कारण

(क) जानवरों के शवों द्वारा—भारत में मृत जानवरों की खाल निकालने की परम्परा है। मृत जानवरों को बस्तियों से उठाकर लोग ले जाते हैं तथा खाल निकालकर उन्हें खुले में छोड़ देते हैं। जब ये शव सड़ते हैं तो अत्यधिक दुर्गन्ध निकलती है जो वायु प्रदूषण का कारण बनते हैं।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

(ख) शौचालयों की सफाई न होना—सार्वजनिक व व्यक्तिगत शौचालयों की सफाई न होने से क्षेत्र विशेष की वायु प्रदूषित होती है।

(ग) कूड़े-कचरे का सड़ना एवं नालियों की सफाई न होना—लोग बहुधा अपने घर के बाहर एवं सड़क पर कूड़ा कचरा फेंक देते हैं जो दुर्गन्ध फैलाता है व इसमें विभिन्न बीमारियों के विषाणु पनपते हैं जिससे मानव स्वास्थ्य प्रभावित होता है। धूम्रपान, धूल, कूड़े करकट का जलाया जाना आदि भी प्रदूषण के प्रमुख कारण हैं।

वायु प्रदूषण का प्रभाव (Effect of Air Pollution)

वैसे सभी प्रकार के प्रदूषणों का प्रभाव खराब होता है, परन्तु वायु प्रदूषण का प्रभाव काफी व्यापक है। अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से वायु प्रदूषण के प्रभाव को निम्न प्रकार से वर्गीकृत कर सकते हैं—

(1) मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव।
(2) जीव-जन्तुओं पर प्रभाव।
(3) पेड़-पौधों एवं वनस्पतियों पर प्रभाव।
(4) जलवायु एवं मौसम पर प्रभाव।
(5) द्रव्यता पर प्रभाव।
(6) इमारतों पर प्रभाव।
(7) अन्य प्रभाव।

(1) मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव (Effect on Human Health)

वायु प्रदूषण का मानव स्वास्थ्य पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। इससे मानव का श्वसन तन्त्र प्रभावित होता है, वायु प्रदूषण से दमा, ब्रोंकाइटिस, सिरदर्द, फेफड़े का कैंसर, खांसी, आँखों में जलन, गले का दर्द, निमोनिया, हृदय रोग, उल्टी, जुकाम आदि रोग हो सकते हैं। सल्फर डाइ-ऑक्साइड से एम्फायसीमा नामक रोग होता है। अमेरिका में प्रतिवर्ष 50000 लोग इस रोग से मर जाते हैं।

(2) जीव-जन्तुओं पर प्रभाव (Effect on Animals)

वायु प्रदूषण का प्रभाव जीव-जन्तुओं पर भी गंभीर रूप से पड़ता है। इसकी वजह से जीव-जन्तुओं का श्वसन तन्त्र एवं केन्द्रीय तन्त्रिका तन्त्र प्रभावित होता है। मोटर वाहनों से निकले धुएँ से प्रकाश की पराबैंगनी किरणों की मात्रा कम हो जाती है और जीव-जन्तु प्रभावित होते हैं। वायु प्रदूषण से शलफ, मधुमक्खी व कीटभक्षी स्तनपोषी बड़ी संख्या में मरते हैं। इसके अतिरिक्त जब घास आदि पशुओं के चारों ओर फ्लोराइड यौगिकों का अनुपात होता है और जब पशु इस प्रकार के चारे को खाते हैं तो उनके शरीर में फ्लोराइड यौगिकों की मात्रा बढ़ जाती है, जिससे उनके दाँतों व हड्डियों में फ्लोओरिसिस रोग हो जाता है। परिणामस्वरूप उनका वजन घटने लगता है और पैरों में लंगड़ापन आ जाता है।

(3) पेड़-पौधों एवं वनस्पतियों पर प्रभाव (Effect on Trees and Plants)

वायु प्रदूषण से वृक्ष, फल, फूल एवं सब्जियाँ व्यापक रूप से प्रभावित होती हैं। प्रदूषित वायु के कारण सूर्य के प्रकाश की मात्रा में कमी आ जाती है जिससे पौधों के प्रकाश संश्लेषण की क्रिया प्रभावित होती है। वायु प्रदूषित क्षेत्रों में जब वर्षा होती है तो वर्षा जल में विभिन्न प्रकार की गैसें एवं विषैले पदार्थ मिलकर धरती पर आ जाते हैं तथा पौधों की जड़ों में मिलकर उन्हें नष्ट कर देते हैं।

कार्बन मोनो-ऑक्साइड, सल्फर डाई-ऑक्साइड, फ्लोराइड व ओजोन जैसे प्रदूषक पौधों को बुरी तरह प्रभावित करते हैं। जब ओजोन का स्तर 0·02pH हो जाता है, तो टमाटर, मटर, तम्बाकू, चीड़ तथा अन्य प्रकार के पौधों पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। सल्फर डाई-ऑक्साइड की अधिकता से पौधों की पत्तियाँ रंगहीन होकर नष्ट हो जाती हैं। प्राय: देखा गया है कि जिन क्षेत्रों में ईंट के भट्टे होते हैं वहाँ आम की फसल बुरी तरह प्रभावित होती है क्योंकि उसकी चिमनियों से निकलने वाले धुँए पेड़-पौधों के लिए हानिकारक होते हैं। वायु प्रदूषण जहाँ एक ओर पेड़-पौधों की वृद्धि को प्रभावित करता है, वहीं फसलों के

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

उत्पादन पर भी अपना कुप्रभाव डालता है। इसी प्रकार मोटर वाहनों के धुँए में मौजूद इथीलीन से वृक्षों में गले की करोनेशन पंखुड़ियाँ अन्दर की ओर मुड़ जाती हैं जिससे ऑरकिड के बाह्य दल सूख जाते हैं और फूल नष्ट हो जाते हैं।

(4) जलवायु एवं मौसम पर प्रभाव (Effect on Climate and Weather)

वायु प्रदूषण से विश्व की जलवायु काफी प्रदूषित हुई है। कुछ वर्षों में ठण्डी जलवायु वाले क्षेत्र काफी गर्म हो गये हैं और गर्म स्थान ठण्डे हो गए हैं। बाढ़ एवं सूखे का एक प्रमुख कारण वायु प्रदूषण ही है।

वैज्ञानिकों के अनुसार वायुमण्डल में प्रतिवर्ष कार्बन डाई-ऑक्साइड की मात्रा 2% की दर से बढ़ रही है तथा पिछले 50 वर्षों में पृथ्वी के औसत तापमान में 10°C की वृद्धि हुई है। वैज्ञानिकों का कहना है कि यदि पृथ्वी का तापमान 3·6°C और बढ़ जाता है तो इसका परिणाम यह होगा कि अन्टार्कटिका तथा आर्कटिक ध्रुवों पर जमी बर्फ पिघल जायेगी और समुद्र की सतह 100 m ऊँची हो जायेगी परिणामस्वरूप सारी पृथ्वी जलमग्न हो जायेगी। यदि तापमान वृद्धि की यही दर विद्यमान रही तो जल प्रलय की स्थिति 108 वर्षों बाद आ जायेगी।

ऐसा महसूस किया जा रहा है कि पिछले कुछ वर्षों से जाड़ों में पहले की तुलना में अधिक ठण्ड व गर्मियों में अधिक गर्मी पड़ रही है। शहरी क्षेत्रों का दैनिक तापमान ग्रामीण क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक होता है। इसका एक कारण यह है कि वायु प्रदूषक तापमान का परावर्तन करते हैं।

(5) द्रव्यता पर प्रभाव (Effect on Liquidity)

वायु में उपस्थित प्रदूषक पदार्थों के छोटे-छोटे कण प्रकाश की किरणों को प्रकीर्णित कर देते हैं जिससे दृश्यता कम हो जाती है। ठण्डे प्रदेशों में वायुमण्डल की नमी एवं नम तापमान के कारण हाइड्रोकार्बन वायुमण्डल में जम जाते हैं जिससे धूम कुहासा बन जाता है। परिणामस्वरूप दुर्घटना की सम्भावना बढ़ जाती है।

(6) इमारतों पर प्रभाव (Effect on Buildings)

वायु प्रदूषण से ऐतिहासिक इमारतें प्रभावित होती हैं क्योंकि वे विशेषकर संगमरमर की बनी होती हैं अथवा उनमें कांसे का प्रयोग किया गया होता है। भारत में मथुरा रिफाइनरी की एसिड लपटों से ताजमहल एवं वहाँ के प्राचीन मन्दिर प्रभावित हो रहे हैं। इन्द्रप्रस्थ बिजलीघर में प्रयुक्त कोयले की राख से लाल किले के पत्थर प्रभावित हो रहे हैं।

ताजमहल पर विपरीत प्रभाव का कारण यह है कि मथुरा रिफाइनरी से जो धुँआ निकलता है उसमें सल्फर डाई ऑक्साइड (SO_2) की मात्रा अधिक होती है जो वर्षा के जल के साथ अभिक्रिया कर सल्फ्यूरिक अम्ल में परिवर्तित हो जाता है। सल्फ्यूरिक अम्ल का संगमरमर पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

(7) अन्य प्रभाव (Other Effects)

वायु प्रदूषण के कुछ अन्य प्रभाव निम्न हैं—

(i) प्रदूषित वायु में हाइड्रोजन सल्फाइड (SO_2) की मात्रा निर्धारित मात्रा से अधिक होती है, जिससे चाँदी की चमक कम हो जाती है और सीसे से बनी वस्तुएँ काली पड़ जाती हैं।

(ii) अम्लीय वायु प्रदूषकों से धातुओं की चमक कम हो जाती है एवं उनमें जंग लग जाता है, जिससे वे कमजोर हो जाती हैं।

(iii) प्रदूषित वायु का प्रभाव इस्पात पर भी पड़ता है। शहरी क्षेत्रों में प्रदूषण अधिक होने के कारण इस क्षेत्रों का इस्पात ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में अधिक घिसता है।

वायु प्रदूषण को नियन्त्रित करने के उपाय (Remedial Control of Air Pollution)

(1) कल-कारखानों की चिमनियों की ऊँचाई अधिक होनी चाहिए।

(2) रेल यातायात में कोयले एवं डीजल के इंजनों के स्थान पर बिजली के इंजनों का प्रयोग किया जाए।

AKG TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

(3) मोटर वाहनों का रख-रखाव ठीक रखा जाय। कार्बोरेटर की सफाई कर कार्बन मोनो-ऑक्साइड का उत्सर्जन कम किया जा सकता है तथा लेड रहित पेट्रोल का ईंधन के रूप में उपयोग किया जाय।

(4) पुराने वाहनों के संचालन पर प्रतिबन्ध लगाया जाय क्योंकि उनसे वायु प्रदूषण ज्यादा होता है।

(5) घरों में सौर ऊर्जा चालक कुकरों का प्रयोग किया जाय।

(6) यूरो-I व यूरो-II मानकों का कड़ाई से पालन कराया जाये।

यूरो मानक (EURO Standards)

वायु की गुणवत्ता को निर्धारित करने के लिए एवं उसमें सुधार करने के लिए यूरोपीय संघ द्वारा कुछ मानकों का निर्धारण किया गया है, जो यूरो मानक के रूप में जाने जाते हैं। यूरो "यूरोपियन यूनियन स्टैण्ड्डर्स ऑफ पैसेंजर" का संक्षिप्त रूप है। मोटर वाहनों से निकलने वाले धुएँ से वायु प्रदूषण होता है, जिसे रोकने के लिए यूरोपीय संघ ने 1992 में यूरो-I मानक और यूरो-II 1996 में तथा वर्ष 2000 में यूरो-III मानक लागू किया है। वायु प्रदूषण रोकने के लिए इन मानकों का पालन आवश्यक है।

यूरो-I में तीन तथा यूरो-II में चार प्रदूषक पदार्थों का वर्णन किया गया है। यूरो में चार वायु प्रदूषकों में कार्बन मोनो ऑक्साइड, हाइड्रोकार्बन, नाइट्रस ऑक्साइड व धूल कण का समावेश किया गया है। धूल कण की गणना यूरो-III में भी की जाती है और यह केवल डीजल चालित वाहनों के लिए है। यूरो-I और यूरो-II दोनों ही मानकों में सीसा रहित ईंधन का उपयोग किया जाना अनिवार्य है।

29 अप्रैल, 1999 को भारतीय उच्चतम न्यायालय ने एक लोकहित याचिका पर अपना निर्णय देते हुए यूरो मानकों को पूरा करने का आदेश दिया है। न्यायालय ने यह आदेश जारी किया था कि 1 अप्रैल 2000 से ऐसे गैर वाणिज्यिक वाहनों का रजिस्ट्रेशन राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली में नहीं किया जाना चाहिए जो यूरो मानकों को पूरा नहीं करते हैं। इसके अतिरिक्त न्यायालय ने यह भी आदेश दिया कि ऐसे प्राइवेट गैस वाणिज्यिक वाहन, जो यूरो-I मानकों को पूरा करते हैं, उनका रजिस्ट्रेशन 1 मई 1999 से 31 मार्च 2000 तक किया जाय। उच्चतम न्यायालय ने डीजल चालित वाहनों के लिए 250 वाहन प्रतिमाह की जो सीमा निर्धारित की थी, उसे हटा लिया गया है। इसके अतिरिक्त यह संपीडित प्राकृतिक गैस से चलने वाले वाहनों पर नहीं लगाया गया है।

मारुति उद्योग लिमिटेड के वाहन यूरो-I के मानकों को पूरा नहीं करते थे। इसलिए राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली में 1 मई 1999 से इनका रजिस्ट्रेशन प्रतिबन्धित हो गया। ध्यातव्य है कि यूरो-II के मानकों को पूरा करने के लिए उच्चतम न्यायालय द्वारा सन् 2005 निर्धारित किया गया था जिसे बाद में 1 अप्रैल 2000 निर्धारित कर दिया गया।

उल्लेखनीय है कि मॉटिज कारों का उत्पादन करने वाली देबू कम्पनी ने दावा किया था कि उसकी कार यूरो-II के मानकों को पूरा करती है। टाटा कम्पनी ने भी दावा किया था कि उसकी इण्डिका कार यूरो-I के मानकों को पूरा करती है। इसी क्रम में सेंट्रो का उत्पादन करने वाली हुंडई मोटर इण्डिया लिमिटेड ने मई 1999 तक यूरो-II के मानकों को पूरा करने वाले वाहनों के उत्पादन का लक्ष्य रखा था। इसी प्रकार मारुति उद्योग लिमिटेड ने जून, 1999 से यूरो-I के मानकों को पूरा करने की घोषणा की थी।

वायु प्रदूषण नियन्त्रण के कुछ अन्य उपाय (Other Remedial Controls of Air Pollution)

(1) ओजोन परत को क्षतिग्रस्त करने वाले क्लोरोफ्लोरो कार्बन (CFC-फ्रियॉन 11 तथा फ्रियॉन 12) के उत्पादन एवं उपयोग पर कटौती की जानी चाहिए।

(2) कारखानों की चिमनियों में बैग फिल्टर का उपयोग किया जाना चाहिए जिससे धुँए में निकलने वाली कालिख एवं कणिकामय पदार्थ चिमनी के नीचे बैठ जायें तथा गैस फिल्टर से होकर निकल जाये।

(3) विभिन्न उद्योगों से निकलने वाले 50 माइक्रोमीटर से बड़े आकार के कणिकामयी पदार्थों को फिल्टर करने के लिए अनेक प्रकार के उपकरणों का प्रयोग किया जाता है। ये उपकरण अग्र प्रकार हैं—

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

ओजोन परत (Ozone Layer)

ओजोन (O_3) ऑक्सीजन के तीन परमाणुओं से मिलकर बनने वाली गैस है जो कि वातावरण में बहुत कम मात्रा में पायी जाती है। जहाँ निचले वातावरण में इसकी उपस्थिति प्रदूषण को बढ़ाने वाली व जीवों के एवं मानव के ऊतक के लिए नुकसानदेह है, वहीं ऊपरी वायुमण्डल में इसकी उपस्थिति परम आवश्यक है। इसकी सघनता 10 लाख में 10वां हिस्सा है। यह गैस प्राकृतिक रूप से बनती है। जब सूर्य की किरणें वायुमण्डल के ऊपरी सतह के O_2 से टकराती हैं तो उच्च ऊर्जा विकिरण से इसका कुछ हिस्सा ओजोन में परिवर्तित हो जाता है। साथ ही विद्युत विकास क्रिया, बादल आकाशीय विद्युत एवं मोटरों के विद्युत स्पार्क से भी ऑक्सीजन ओजोन में बदल जाती है। पृथ्वी के धरातल से 20-30 किमी ऊँचाई पर वायुमण्डल के समताप मण्डल क्षेत्र में ओजोन गैस का एक झीना सा आवरण है, जिसे ओजोन परत कहते हैं। वायुमण्डल के आयतन के सन्दर्भ में ओजोन परत की सान्द्रता लगभग 10 पीपीएम है। यह ओजोन परत पर्यावरण की रक्षक है। ओजोन परत हानिकारक पराबैंगनी किरणों को पृथ्वी पर आने से रोकती है।

ओजोन परत का क्षरण

बढ़ते औद्योगीकरण के फलस्वरूप वायुमण्डल में कुछ ऐसे रसायनों की मात्रा बढ़ गयी जिनके दुष्प्रभाव से ओजोन परत को खतरा उत्पन्न हो गया। ऐसे रसायनों में क्लोरोफ्लोरो कार्बन (सी०एफ०सी०) क्लोरीन एवं नाइट्रस ऑक्साइड गैसें प्रमुख हैं। ये रसायन ओजोन गैस को ऑक्सीजन में विघटित कर देते हैं जिसकी वजह से ओजोन परत पतली हो जाती है और उसमें छिद्र हो जाता है यहाँ तक कि ओजोन परत में छिद्र का आकार यूरोप के कुल आकार के बराबर हो गया है।

ओजोन परत में छिद्र हो जाने के कारण सूर्य की हानिकारक पराबैंगनी किरणें व रेडियो विकिरण धरती पर पहुँच जाते हैं तथा जीव-जन्तुओं एवं वनस्पतियों पर अपना कुप्रभाव छोड़ते हैं।

पराबैंगनी किरणों से त्वचा कैंसर एवं मोतियाबिंद आदि बीमारियों का खतरा बनता है। शरीर की रोगों से लड़ने की क्षमता कम हो जाती है, कृषि में पैदावार कम हो जाती है व वन सम्पदा क्षतिग्रस्त हो जाती है। पराबैंगनी किरणों का कुप्रभाव समुद्री जीवों पर भी पड़ता है।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

3 जल-प्रदूषण (Water-Pollution)

3.1 परिचय (Introduction)

जल प्रत्येक जीव एवं जन्तु के जीवन का अत्यन्त ही आवश्यक अवयव है। बिना जल के पृथ्वी पर जीवन सम्भव नहीं होता। तभी तो हमारे खगोलविद् मंगल ग्रह पर जल की उपस्थिति के लिए उत्सुक दिखते हैं। जल जीवों के कोशिकीय संगठन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। औसतन जीव कोशिकाओं में जल का प्रतिशत 70-90% तक होता है। जल पौधों के अन्दर होने वाली समस्त उपापचय क्रियाओं के लिए आवश्यक होता है। यह प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया, जो कि समस्त ब्रह्माण्ड की इकलौती उत्पादक प्रक्रिया है, के लिए कच्चे पदार्थ का काम करने के साथ-ही-साथ **पोषक तत्वों एवं खाद्य पदार्थों के वितरण के लिए माध्यम का काम करता है।** इसके अलावा जल औद्योगिक उत्पादन, ऊर्जा स्रोत एवं यातायात में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

पहाड़ों पर से बर्फ पिघलने एवं वर्षा से नदियों में पानी आ जाता है। नदियों पर बाँध बनाकर तथा इन बाँधों से नहरें निकालकर समूचे क्षेत्र में पानी पहुँचाया जाता है। इस पानी का शोधन एवं पूर्णतया उपचार करने के पश्चात ही घरेलू एवं उद्योगों आदि में आपूर्ति किया जाता है। मनुष्य के पीने के लिए स्वच्छ एवं स्वास्थ्यवर्धक जल की आवश्यकता होती है परन्तु पर्यावरण प्रदूषण के कारण पृथ्वी के जल स्रोतों का जल अणु दूषित होने लगा है। **जल प्रदूषण के बारे में अज्ञानता के कारण हम जल के साथ-साथ कितने ही जानलेवा तत्व शरीर में पहुँचा देते हैं जो हमारे शरीर को धीरे-धीरे कमजोर एवं बीमार बना देते हैं।** प्रदूषित जल शरीर के अलावा अन्य भौतिक सम्पत्तियों को भी नष्ट करता रहता है।

हम जानते हैं कि उद्योगों एवं घरेलू पानी का उपयोग होने के पश्चात् पानी गन्दा हो जाता है। पानी गन्दा होने से इसके pH मान में परिवर्तन हो जाता है जिससे पानी अम्लीय या क्षारीय हो जाता है। जल को प्रदूषित करने में अन्य बहुत से कारक जैसे—सड़े-गले पदार्थ, आँधी, तूफान, वायुमण्डल में उपस्थित गैसें आदि संयोग करते हैं। पानी में ऑक्सीजन की कमी होने से पानी विषकारी हो जाता है। भारतवर्ष में जल प्रदूषण की स्थिति भयावह होती जा रही है। लोग अब इसके प्रति सजग होने लगे हैं। लखनऊ, कानपुर, कोलकाता, वाराणसी, दिल्ली आदि शहरों में जल प्रदूषण अपनी चरम सीमा पर है। एक अनुमान के अनुसार विश्व के लगभग 25,000 व्यक्ति प्रतिदिन प्रदूषित जल का सेवन करते हैं और अनेक बीमारियों जैसे-पेचिश, हैजा, पीलिया, तपेदिक, ग्रैस्टोइन्टाइटिस आदि से ग्रसित हो जाते हैं और निवारण न होने की दशा में मर भी जाते हैं। भारत सरकार की ओर से पर्यावरण प्रदूषण नियन्त्रण की दिशा में केन्द्रीय एवं राज्य स्तर पर भी प्रयास किये गये हैं। सन् 1980 में भारतीय योजना आयोग के डिप्टी मिनिस्टर माननीय **नारायण दत्त तिवारी** की संस्तुति पर पर्यावरण विभाग की स्थापना हुई, जो 1985 में नये विभाग **''पर्यावरण एवं जन विभाग''** में परिवर्तित हुआ।

3.1-1 प्रदूषक (Pollutants)

प्रदूषक ठोस, द्रव अथवा गैस के रूप में हो सकते हैं, ये वे पदार्थ होते हैं जिनसे माध्यम भौतिक या रासायनिक अथवा जैविक रूप से या तीनों तरह से प्रभावित होता है। भौतिक प्रदूषक ऐसे होते हैं जिनकी वजह से माध्यम में प्रदूषण देखकर, सूंघने से अथवा महसूस किया जा सकता है। ऊष्मा, गन्ध और ठोस पदार्थ आदि रासायनिक प्रदूषणों को देखकर तो नहीं बल्कि उनका प्रभाव त्वचा एवं जीभ पर एवं सांस लेते हुए आसानी से महसूस किया जा सकता है। प्रदूषक ही माध्यम में प्रदूषण उत्पन्न करते हैं। माध्यम पानी, हवा, मिट्टी आदि कुछ भी हो सकता है। प्रदूषण कई प्रकार के होते हैं, जैसे—जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, ऊष्मा, रेडियोधर्मी प्रदूषण एवं ठोस अपशिष्ट आदि। अब हम जल प्रदूषण पर विचार करते हैं।

3.1-2 जल प्रदूषण के स्रोत (Sources of Water Pollution)

विभिन्न स्रोतों में उपलब्ध पानी प्राकृतिक अथवा मनुष्य की क्रियाओं से प्रदूषित होता रहता है। यथा आँधी, तूफान आदि के द्वारा धूल के कण खुले जल स्रोतों में मिलकर उनका जल दूषित कर देते हैं। पानी के अन्दर स्वयं घोलक (Solvent) का

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

गुण होता है जिसकी वजह से पानी सम्पर्क क्षेत्रों में रहने से अनेकानेक HYDROLYTIC क्रिया से अति प्रदूषित होता रहता है। विभिन्न निचले स्थानों में पानी के अधिक समय तक भरे रहने से उसमें अनेक रोगाणु, काई (Algae), विषाणु आदि उत्पन्न हो जाते हैं जिससे आस-पास का वातावरण प्रदूषित हो जाता है और वर्षा के समय यह पानी वर्षा जल के साथ बहकर स्वच्छ जल स्रोतों में मिल जाता है जिससे स्वच्छ जल प्रदूषित हो जाता है। हालांकि बहते पानी में स्वशोधी (Self Cleaning) क्रिया चलती रहती है। लेकिन जब गन्दगी का स्तर एक सीमा से अधिक हो जाये जिससे पानी के भौतिक गुण यथा रंग, गन्ध, स्वाद, ताप व गंदलापन आदि ज्यादा प्रभावित होने लगे तो बहते पानी की स्वशोधन क्षमता स्वयं क्षीण (Dormant) हो जाती है। जब पानी में रासायनिक जैविक अवगुण यथा फॉस्फेट, नाइट्रेट, pH, B.O.D. व C.O.D. आदि व शैवाल, कवक, जीवाणु, विषाणु, प्रोटोजोआ, कीट और रोटीफर्स आदि समाने लगे जिनसे तात्क्षणिक (Instant) अथवा धीरे-धीरे रोगग्रसित होने की सम्भावना अथवा निश्चितता बनी रहती है तो यह पानी प्रदूषित पानी की श्रेणी में आता है। एक अनुमान के अनुसार देश के अधिकतर जल स्रोत यथा नदी, नहर आदि इतनी प्रदूषित हो चुकी हैं कि इनका पानी पीना खतरे से खाली नहीं है। यमुना में अकेले राजधानी दिल्ली क्षेत्र से 20,000 क्यूसेक सीवेज, एक हजार टन गोबर व 300 टन ठोस कचरा प्रतिदिन गिराया एवं मिलाया जाता है। इसके अलावा औद्योगिक स्राव भी अत्यधिक मात्रा में, जो खतरनाक श्रेणी का है, इस नदी में मिल जाता है। अत: राजधानी दिल्ली से गुजर रही यमुना का पानी, प्रदूषण की वजह से जहरीला हो गया है।

3.2 जल प्रदूषण उत्पन्न करने वाले कारक (Factors Contributing Water Pollution)

जल को प्रदूषित करने वाले कारक निम्न हैं—

3.2-1 प्राकृतिक प्रदूषण (Natural Pollution)

प्राकृतिक क्रियाओं के कारण जल दूषित हो जाता है। जब हवा में मिले हुए धूल कण वर्षा के समय वर्षा जल के साथ घुलकर जमीन पर आते हैं तो वर्षा जल अम्लीय हो जाता है तथा अशुद्ध हो जाता है। **सल्फर डाई ऑक्साइड (SO_2 एवं SO_3) वर्षा जल एवं बर्फ के साथ घुलकर सल्फ्यूरस अम्ल (H_2SO_3) एवं सल्फ्यूरिक अम्ल (H_2SO_4) बनाते हैं। उक्त वर्षा में जल का pH मान कम हो जाता है। जब वर्षा जल का pH मान 5·7 से कम हो जाता है तब यह वर्षा अम्ल वर्षा कहलाती है।** कार्बन मोनो-ऑक्साइड (CO) एवं कार्बन डाई-ऑक्साइड (CO_2) भी वर्षा जल के साथ कार्बोनिक अम्ल बनाते हैं जो जल को अम्लीय बना देते हैं। इस अम्लीय वर्षा का जीव-जन्तुओं, पेड़-पौधों, प्राकृतिक सन्तुलन एवं पदार्थों पर बहुत ही विनाशकारी प्रभाव पड़ता है। जल में रहने वाले जीव 4 से कम pH मान की वर्षा की एक बूंद भी सहन नहीं कर सकते हैं। सामान्यतय: 6 से कम pH मान पर कई अल्गाई (Algae) जैसी कोमल वनस्पतियाँ भी समाप्त हो जाती हैं।

बर्फ पिघलने से एवं तेज वर्षा के समय सिल्ट और बालू जल के साथ बहकर तालाबों, झीलों और नदियों के पानी में मिल जाती हैं बहते जल में मृदा के घुलनशील लवण भी मिल जाते हैं। जानवरों का मलमूत्र तथा मृत पेड़ एवं जानवर भी जल को दूषित करते हैं।

जिन क्षेत्रों में ज्वालामुखी फूटते हैं, वहाँ से धूल एवं अन्य गैसों का गुब्बार पृथ्वी के अन्दर पिघले मेग्मा के साथ बाहर निकलता है। ये धूल एवं गैसों का गुब्बार वायु प्रदूषित तो करता ही है, अप्रत्यक्ष रूप से जल प्रदूषण का कारण भी बनता है। जल योजन क्रिया में जल में उपस्थित विभिन्न अवयवों की मात्रा सामान्य ताप पर Dormant रहती है। परन्तु अधिक ताप पर ये अवयव आपस में मिलकर Complex अवयव बनाते हैं जिनसे H^+ व OH^- भी संयोग करते हैं जिससे अवयवों की आपसी क्रिया के परिणामस्वरूप उपजे तीसरे अवयव से जल प्रदूषण होता है।

3.2-2 कृषि सम्बन्धी प्रदूषण (Agricultural Pollution)

पृथ्वी के बड़े भू-भाग पर कृषि-कार्य सम्पन्न होता है जिसमें अनेक प्रकार के अनाज व खाद्यान्न उगाये जाते हैं। फसलों की उपज बढ़ाने के लिए आजकल रासायनिक खादों और कीटनाशकों का प्रयोग किया जाने लगा है जिसमें फॉस्फेट, नाइट्रेट व यूरिया आदि मुख्यत: उपयोग में लायी जा रही है और कीटनाशकों में D.D.T. Aldrin, BHC, Chlorade, Heptachlor,

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

Methoxychlor, Hexachlorobenzenl, Benomyl व Carbofuran आदि का प्रयोग किया जाता है। इन खादों और कीट नाशकों की कुछ मात्रा अन्न में चली जाती है और कुछ अंश मिट्टी में घुला रह जाता है। वर्षा जल के साथ ये पदार्थ भी घुल जाते हैं और वर्षा जल के साथ बहकर ये पृष्ठीय जल स्रोतों को प्रदूषित ही नहीं वरन् उनको जहरीला भी बनाते हैं। इनका प्रभाव मनुष्यों पर अत्यन्त घातक होता है। यही जल जब बहकर नदियों में मिलता है तो कई प्रजाति की मछलियाँ कीटनाशकों के प्रभाव से मर जाती हैं। वर्षा जल रिसकर भूमिगत जल को भी प्रदूषित कर देता है।

3.2-3 खनन प्रदूषण (Mining Pollution)

भूगर्भ में असंख्य खनिज पदार्थ विद्यमान हैं। मनुष्य इनका उपयोग अन्य विकास कार्यों में करता है। खनिजों को प्राप्त करने के लिये खुदाई करनी पड़ती है। ये खनिज जमीन में विभिन्न गहराईयों पर मिलते हैं। इनके साथ-साथ मिट्टी एवं अन्य अशुद्धियाँ भी बाहर आ जाती हैं। शुद्ध खनिज प्राप्त करने के लिये इसकी धुलाई करनी पड़ती है। धुलाई की क्रिया में धूल, मिट्टी एवं अन्य घुलनशील तथा अघुलनशील लवण पानी के साथ बहकर निस्राव नालियों में मिल जाते हैं जिससे निस्राव नालियों का जल प्रदूषित हो जाता है। इसका ज्वलन्त उदाहरण कोयले की खानों से प्राप्त अम्लीय निस्राव है। इस समस्या का समाधान अभी तक नहीं निकाला जा सका है। कोयले की खानों में कोयले के साथ कुछ मात्रा पायराइट (FeS_2) की मिली रहती है। यही पायराइट जल से संयुक्त होकर फेरिक सल्फेट और सल्फ्यूरिक अम्ल बनाता है। खानों की निकास नालियों के साथ सल्फ्यूरिक अम्ल और फेरिक सल्फेट बहकर निकलता रहता है। कोयले की खानों से निकलने वाले पानी का निस्तारण काफी विषकारी होता है।

3.2-4 नगरपालिका प्रदूषण (Municipal Pollution)

नगरों में मकानों से निकला Excreta कूड़ा-करकट भूमिगत नालियों द्वारा नदियों व झीलों में गिराया जाता है। इसी प्रकार कारखानों द्वारा विसर्जित पदार्थ नदियों के जल में मिलते रहते हैं। वर्षा जल के साथ सड़कों, गलियों की गन्दगी भी बहकर सीधे ही या सीवर पाइपों से बहकर नदी में मिल जाती है। Urine में यूरिया होती है जो पानी के साथ मिलकर NH_3 उत्पन्न करता है। अन्य कार्बनिक पदार्थों के अपघटन से नाइट्रोजनित पदार्थ बनते हैं जिससे जल दूषित हो जाता है। चूँकि सीवेज में कार्बनिक पदार्थ, अकार्बनिक पदार्थ, रोगाणुजनक पदार्थ एवं अन्य जहरीले पदार्थ मिले रहते हैं। कार्बनिक पदार्थ के अपघटन में ऑक्सीजन खर्च होती है। इसकी आपूर्ति नदी जल में घुली ऑक्सीजन द्वारा होती है। कार्बनिक पदार्थों की अधिकता होने पर नदी जल में ऑक्सीजन की कमी हो जाती है, जिससे B.O.D. बढ़ जाती है तथा नदी की स्वशोधी क्षमता नष्ट हो जाती है और जल दुर्गन्ध युक्त हो जाता है जिससे संक्रामक रोग फैलने की सम्भावना हो जाती है। इसके साथ ही ऐसे जल में रहने वाले जीव भी नष्ट हो जाते हैं।

3.2-5 औद्योगिक प्रदूषण (Industrial Pollution)

अधिकतर उद्योग अपने उत्पाद निर्माण प्रक्रिया में जल का प्रयोग करते हैं। रसायन उद्योग में भी जल का प्रयोग होता है। रसायन उद्योगों का निस्राव अधिक घातक होता है क्योंकि इनमें कई तीव्र अम्ल, क्षार, लवण जहरीले पदार्थ होते हैं। इनसे कार्बनिक पदार्थों के अपघटन क्रिया के लिए जरूरी जीवाणु प्रभावित होते हैं और वे नष्ट हो जाते हैं जिससे कार्बनिक पदार्थों की अपघटन की क्रिया रुक जाती है। पारा, क्लोरीन एवं कास्टिक सोडा कल-कारखानों से जल में आता है जो जलीय प्राणियों के खाद्य शृंखला के द्वारा मनुष्य के शरीर में पहुँचता है जिसके कारण तन्त्रिका में विकास उत्पन्न हो जाते हैं और पागलपन उत्पन्न हो जाता है। कई छोटे-छोटे उद्योग निस्राव को भूमि में अन्दर बोरिंग के द्वारा पहुँचा देते हैं जिससे भूमिगत जल दूषित होता है। पारा, लेड, कैडमियम, आर्सेनिक, जस्ता, ताँबा आदि की मात्रा जल को विषैला बना रही है। लेड प्राणियों के ऊतकों में एकत्रित होकर हानि पहुँचाता है। कॉपर एवं जिंक (Cu व Zn) प्राणियों की क्रियाओं को प्रभावित करता है।

3.3 जल प्रदूषण के प्रभाव (Effects of Water Pollution)

मनुष्यों, जीव-जन्तुओं, पेड़-पौधों, पदार्थों आदि पर जल प्रदूषण के हानिकारक प्रभाव पड़ते हैं। विस्तृत रूप में जल प्रदूषण से होने वाले दुष्प्रभाव अग्रलिखित हैं—

AYC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

3.3-1 मनुष्यों पर प्रभाव (Effect of Human)

दूषित जल का मनुष्य के स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता है। दूषित जल से होने वाली बीमारियाँ जल में प्रदूषण सान्द्रण की मात्रा (Quantity) पर निर्भर करती है। पीलिया, हैजा, दस्त, टाइफाइड, अपच, जठर, आंत्रशोध एवं पैराटाइफाइड जैसी बीमारियाँ प्रदूषित जल के सेवन से पनपती हैं। औद्योगिक व निस्राव में सीसा, कैडमियम, पारा व अन्य विषैले रसायन अम्ल क्षार आदि पानी को जहरीला बनाते हैं। अगर इनकी सूक्ष्म मात्रा भी शरीर में पहुँच जाये तो घातक बीमारियाँ जैसे—गुर्दा फेल होना, फेफड़े खराब होना, कैंसर एवं हृदय सम्बन्धी अनेक बीमारियाँ घर करने लगती हैं और उपचार न हो पाने पर ये मनुष्य को मृत्यु के मुँह में धकेलती रहती हैं। जलीय जीव मछली, केकड़े, कछुए आदि जहरीले हो जाते हैं जिनका मनुष्यों द्वारा सेवन विभिन्न रूपों में किये जाने से दूषित तत्व शरीर में प्रवेश कर जाते हैं और मनुष्यों को मौत के मुँह में ले जाते हैं।

सन् 1953 में जापान की मिनमाता खाड़ी के गाँवों में मछली खाने से लगभग 52 लोग मारे गये क्योंकि खाड़ी में एक प्लास्टिक फैक्ट्री का पारायुक्त निस्राव खाड़ी में गिरता था। इस पारे से खाड़ी की मछलियाँ प्रदूषित हो गयी थीं।

3.3-2 जलीय पारितन्त्र पर प्रभाव (Effect on Aquatic Ecosystem)

तालाबों, नदियों, झीलों, नहरों व जलाशयों आदि का जलीय पारितन्त्र होता है। इसमें जीवों की अनेक प्रजातियाँ, वनस्पतियाँ होती हैं जो दूषित जल के कारण नष्ट हो जाती हैं। कुछ प्रजातियाँ तो सीधे ही नष्ट हो जाती हैं तथा बचे जीवों के लिए खाद्य शृंखला में कमी होने से वे भी नष्ट हो जाते हैं तथा जलीय जीवों की अनेक प्रजातियाँ विलुप्त हो जाती हैं। अत: इन प्रजातियों को विलुप्त होने से बचाने के लिए दूषित जल को प्राकृतिक जल स्रोतों मिलने से रोका जाना चाहिए।

डॉल्फिन को निगल गया गंगा का प्रदूषण—बाँधों और प्रदूषण ने डॉल्फिन को लगभग निगल लिया है। वर्ष 1995 तक गंगा और सहायक नदियों में डॉल्फिन की संख्या 40,000 से भी ज्यादा थी उनकी अब घटकर 2000 हजार रह गई। ब्रह्मपुत्र नदी में भी कभी हजारों डाल्फिन थीं, लेकिन अब 300 रह गई हैं। विशेषज्ञों के अनुसार जलीय प्रदूषण के कारण डॉल्फिन की प्रजनन क्षमता भी कम हो गई है। गंगा के अलावा युमना, सोन, केन, बेतवा, घाघरा, गेरुवा और रामगंगा में भी सर्वे के दौरान डॉल्फिन मिली हैं। गंगा और सहायक नदियों में 2012 में कराई गई गणना में 671 डॉल्फिन दर्ज हुईं थीं। रामगंगा में भी मुरादाबाद से बिजनौर तक 12 डॉल्फिन बताई गई हैं।

2009 में बनी राष्ट्रीय जलीय जीव—डॉल्फिन को सरकार ने वर्ष 2009 में जलीय जीव घोषित किया था। शिकारियों पर कार्यवाही करने के निर्देश भी हुए। लेकिन शिकार अभी भी जारी है। माना जाता रहा है कि हर साल 100 डाल्फिन का शिकार हो जाता है।

बिहार में बनी है सेंचुरी—डाल्फिन को संरक्षित करने के लिए वर्ष 1991 में बिहार के भागलपुर में एक डॉल्फिन सेंचुरी बनाई गई। यह सेंचुरी गंगा में 50 किमी० के दायरे में बनाई गई है। यह सुल्तानपुर से पाहल गांव तक फैली है।

3.3-3 पेड़-पौधों पर प्रभाव (Effect on Plants)

यदि सिंचाई के लिए प्रदूषित जल का प्रयोग किया जाये तो प्रदूषक पदार्थ पेड़-पौधों में भोजन के साथ पहुँच जाते हैं, जिसके कारण उनकी वृद्धि रुक जाती है तथा पत्ते पीले पड़ जाते हैं। फलों में प्रदूषक पदार्थ पहुँचकर उन्हें जहरीला बना देते हैं। मनुष्य जब इन फलों का सेवन करता है तो वह बीमार पड़ जाता है। समुद्री घास भी प्रदूषण से नष्ट हो जाती है (चित्र 3.1)। दूषित जल से उस पेड़ अथवा पौधे के आस-पास की मृदा की सतह पर काई (Algae) की पर्त बन जाती है जिससे वृक्ष के जल में हवा एवं प्रकाश का आवागमन रुक जाता है। फलस्वरूप पेड़ सड़कर नष्ट हो जाता है।

3.3-4 जीव-जन्तुओं पर प्रभाव (Effect on Animals)

प्रदूषित जल में ऑक्सीजन की कमी हो जाती है जिससे कार्बनिक पदार्थों का विघटन नहीं होने पाता जिससे उसमें दुर्गन्ध आने लगती है। इसमें कई हानिकारक पदार्थ मिल जाते हैं। औद्योगिक स्राव में जहरीले तत्व होने की वजह से जलीय जीव प्रतिकूल भोजन (जहरीला भोजन) करते हैं जिसको सहन न कर पाने की स्थिति में उनकी मृत्यु तक हो जाती है। उनकी मृत्यु से जल में पड़े रहने से जल में प्रदूषण की सान्द्रता बढ़ जाती है जिससे जलीय जीवों का अस्तित्व खतरे में आ जाता है। प्रदूषक

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

पदार्थों के तली में बैठने से शैवाल आदि घासें नष्ट हो जाती हैं जिससे प्रकाश संश्लेषण बन्द हो जाने से जल में ऑक्सीजन की कमी आ जाती है। जल में ऑक्सीजन की कमी होने से पूरा जलीय पारितन्त्र दुर्गन्धयुक्त हो जाता है जिससे जीवधारियों की आपस में परस्पर निर्भरता समाप्त होने लगती है।

3.3-5 पदार्थों पर प्रभाव (Effect on Materials)

प्रदूषित पानी के सम्पर्क में पदार्थों के आने से उनका संक्षारण होने लगता है। संक्षारण होने से पदार्थों की आयु घटने लगती है। दूषित जल से पानी के पाइप, पम्प, वाल्व व अन्य उपकरण खराब हो जाते हैं। प्रदूषित जल का प्रयोग कंक्रीट में होने से उसकी सामर्थ्य प्रभावित होती है तथा बन्धक गुण भी समाप्त हो जाते हैं। अम्ल वर्षा से पत्थर की बनी ऐतिहासिक इमारतें कांतिहीन एवं खुरदरी हो जाती हैं। इसी कारण ताजमहल की चमक अब फीकी पड़ गयी है। जब यही अम्ल वर्षा धात्विक पदार्थों पर पड़ती है तो रासायनिक क्रिया के फलस्वरूप पदार्थों की सतह खराब हो जाती है। कुछ उद्योगों के निस्राव में पायी जाने वाली भारी धातुयें तथा इससे प्रभावित अंग निम्न तालिका में दर्शाये गये हैं—

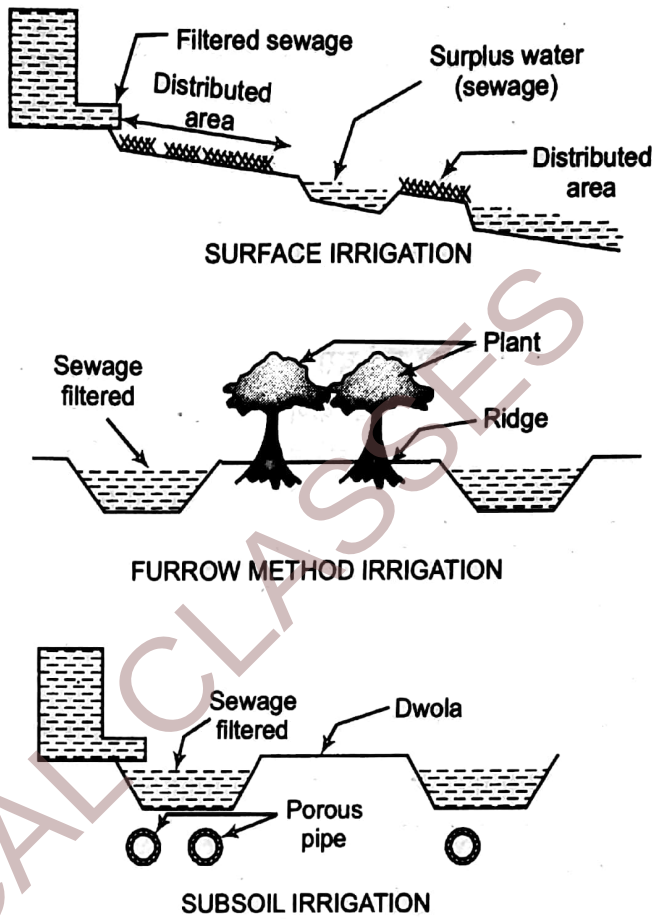

चित्र 3.1 : उपमृदा सिंचाई

तालिका 3.1

भारी धातुओं का प्रभाव

15 gm/cm^3 से कम घनत्व वाली धातुयें हल्की धातुयें (Light Metals) तथा इससे अधिक घनत्व वाली धातुयें भारी धातुयें (Heavy Metals) कहलाती हैं। Hg, Pb, Cu, Cd, Zn, Ni आदि जहरीली भारी धातुयें हैं।

क्रमांक	भारी धातुयें	प्रभावित अंग
1.	As, Hg, Mo, Se	लीवर (यकृत)
2.	As, Cd, Hg, Pb	रक्त
3.	As, Pb, Hg	मस्तिष्क
4.	As, Cd, Hg	फेफड़े
5.	As, Pb, Hg, Cd	गुर्दे
6.	Cd, Se	हड्डी एवं दाँत

3.4 सूक्ष्म जीवाणु (Microbes)

वे जीवाणु जिनको हम आँखों से सीधे नहीं देख सकते हैं, अर्थात इनको देखने के लिए किसी उपकरण की आवश्यकता पड़ती है, सूक्ष्म जीवाणु कहलाते हैं। ये जीवाणु रोगजनक (Pathogenic) भी हो सकते हैं। ये सरल रचना के एक कोशिकीय जीवित प्राणी होते हैं जो जीवाणु रोग जनक होते हैं। ये हैजा, पेचिस, टी० बी०, मलेरिया आदि बीमारियाँ उत्पन्न करते हैं। कुछ जीवाणु वायुजीवी तथा कुछ अवायुजीवी होते हैं। वायुजीवी जीवाणु ऑक्सीजन की उपस्थिति में कार्बनिक पदार्थों का विघटन कर देते हैं। अवायुजीवी जीवाणु वहाँ पनपते हैं, जहाँ ऑक्सीजन की अनुपस्थिति होती है। ये जटिल यौगिकों को सरल यौगिकों में विघटित कर देते हैं। इनकी वृद्धि के लिए अवायुजीवी परिस्थितियाँ होना आवश्यक है।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

हमारे वातावरण को प्रदूषित करने वालों में जीवाणु भी पीछे नहीं हैं। ये हमारे वायुमण्डल, जल, मृदा, अन्न, फल आदि को प्रदूषित करते हैं। ये सूक्ष्म जीव विषैले होते हैं। ये भोजन को जहरीला बना देते हैं। कुछ जीवाणु भोजन पकाने पर भी जीवित बने रहते हैं। इनमें डायरिया, उबकाई आना, दस्त एवं उल्टी आना आदि कई बीमारियाँ होने का खतरा रहता है।

जीवाणु प्रकृति के सन्तुलन को बनाये रखने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं क्योंकि वातावरण में ऑक्सीजन, सल्फर, नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, कार्बन आदि का सन्तुलन बनाये रखने के लिए जैव अपघटन क्रिया अति आवश्यक है।

3.5 लीचिंग मेटल (Leaching Metal)

विभिन्न उद्योगों एवं घरों से निकलने वाला कूड़ा-करकट आदि ठोस अपशिष्ट को खुले में छोड़ दिया जाता है। इसमें विभिन्न जहरीली धातुओं के कण भी मिले रहते हैं। जब यह ठोस अपशिष्ट एक ही स्थान पर काफी समय तक पड़ा रहता है और जब वर्षा होती है तो कचरे के ढेर के रन्धों से होकर पानी बाहर बहने लगता है। इसमें कचरे के ढेर की गन्दगी मिली रहती है तथा बहुत सी विषैली धातुओं के शून्य कण भी मिले रहते हैं। इस बहाव में धात्विक कणों को ही लीचिंग मेटल कहते हैं। यह गन्दा जल बहकर नदियों में मिल जाता है तथा कुछ भाग रिसकर भौम जल में मिल जाता है जिससे ये जल स्रोत जहरीले हो जाते हैं। नदियों के जल में जहरीली धातुओं के मिलने से मछलियाँ मरने लगती हैं तथा कुछ जहरीली हो जाती हैं और जब मनुष्यों द्वारा इनका सेवन किया जाता है तो वे बीमार पड़ जाते हैं।

3.6 घरेलू अपशिष्ट जल (Domestic Waste Water)

घरों में पानी के विभिन्न कार्यों में प्रयोग करने के बाद घरों से निकलने वाला गन्दा जल घरेलू अपशिष्ट जल कहलाता है। यह स्नानग्रह, रसोईघर, शौचालयों, पेशाबघरों से निकलने के कारण इसमें मलमूत्र, सड़े-गले खाद्य पदार्थ, सब्जियों के छिलके एवं जीवाणु मिले रहते हैं। यह जल घरों की नालियों से छोटे नालों में होकर फिर सीवर लाइन से होते हुए नदियों में गिरा दिया जाता है, जिससे नदियों का पानी दूषित हो जाता है।

3.7 औद्योगिक अपशिष्ट जल (Industrial Waste Water)

उद्योगों से निकले अपशिष्ट पदार्थों जैसे—धूल, कोयला, अम्ल, क्षार, फीनोल, सल्फाइड, सल्फेट, पारा, लेड व जिंक आदि सीधे ही नदी व नहरों में छोड़ दिये जाते हैं तथा कई उद्योगों से ये जहरीली धातुयें व्यर्थ जल के साथ बाहर निकलती हैं। जब उद्योगों से निकलने वाले व्यर्थ जल में हानिकारक धातुओं के कण मिलकर बाहर निकलते हैं तो यह जल ही औद्योगिक अपशिष्ट जल कहलाता है। इस पानी में कई प्रकार के प्रदूषक मिले रहते हैं। बहुत से उद्योग जैसे—चर्मशाला (Tannery), बूचड़खाना (Slaughter house), धुलाईघर (Laundries), कागज एवं लुग्दी उद्योग (Paper and Pulp mill), खाद कारखाने (Fertilizer) आदि से निकलने वाला निस्राव बहुत ही घातक होता है। जब यह निस्राव जलधाराओं (नदियों) में डाल दिया जाता है तो जल धाराओं का जल जहरीला हो जाने से मछलियाँ मरने की घटना हमारे सामने आने लगती है। इसमें रोगजनक शून्य जीवाणु भी होते हैं जो कई प्रकार की बीमारियाँ उत्पन्न करते हैं जिससे महामारी फैलने का डर रहता है।

3.8 सीवेज (Sewage)

घरों से निकला दूषित जल व फैक्ट्री, चर्मशाला, बूचड़खाना, धुलाईघरों, अस्पतालों एवं रासायनिक उद्योगों से निकलने वाला दूषित जल ही Sanitary sewage कहलाता है। जब यह सीवेज वर्षा जल के साथ बहता है तो इसे वर्षा ऋतु बहाव कहते हैं और जब यह सीवेज वर्षा जल के साथ नहीं बहता है तो इसे शुष्क ऋतु बहाव (dry weather flow) कहते हैं। अन्य कई विषैले पदार्थ भी इसके साथ मिले रहते हैं।

3.9 अपशिष्ट जल के लक्षण (Chracteristics of Waste Water)

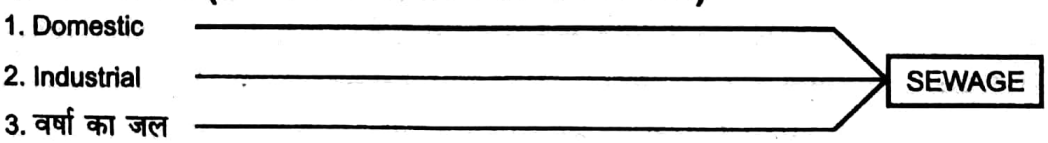

चित्र 3.2 : सीवेज

Scanned with CamScanner

प्रदूषित जल के लक्षणों को हम तीन उपवर्गों में बाँट सकते हैं जो कि तालिका 3.2 में दर्शाये गये हैं।

तालिका 3.2–अपशिष्ट जल के लक्षण

क्रम सं०	भौतिक	रासायनिक	जैविक
1.	तापमान	1. घुलित ऑक्सीजन (D.O.)	1. बैक्टीरिया
2.	रंग	2. बी० ओ० डी० (B.O.D.)	2. कोलीफार्म
3.	प्रकाश मेघता	3. सी० ओ० डी० (C.O.D.)	3. अल्गाई
4.	संवाहन	4. pH	4. वायरस
5.	कुछ ठोस पदार्थ	5. अमोनिया, नाइट्रेट, नाइट्राइट	
		6. क्षारीयता/अम्लीयता	
		7. सल्फेट	
		8. भारी धातुयें, मरकरी, सीसा, क्रोमियम, क्लोराइड, कार्बनिक कीटनाशक, डिटरजेन्ट	
		9. रेडियोधर्मी पदार्थ	

3.10 पेयजल के मानक (Standards for Drinking Water)

विभिन्न संस्थानों द्वारा पेयजल के मानक निर्धारित किये गये हैं। इन मानकों में प्रदूषकों की अनुमेय सीमा (Permissible Limit) तथा अधिकतम या सहनशील सीमा (Tolerable or excessive Limit) निर्धारित की गई है। तालिका 3.3 में ये मानक दर्शाये गये हैं। पहले स्तम्भ में भारतीय मानक संस्थान द्वारा निर्धारित मानक हैं तथा दूसरे स्तम्भ में I.C.M.R. (Indian Council of Medical Research) द्वारा निर्धारित मानक हैं तथा तीसरे स्तम्भ में विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा निर्धारित मानक दिये गये हैं।

तालिका 3.3

पेयजल के मानक (Standards for drinking water)

मानदण्ड (Parameter)	भारतीय मानक IS : 10500 - 1983		I.C.M.R.		विश्व स्वास्थ्य संगठन W.H.O	
भौतिक						
रंग	10	50	5	25	5	50
स्वाद एवं गन्ध	आपत्तिजनक		आपत्तिजनक		आपत्तिजनक	
गंदलापन	10	25	5	25	5	25
रासायनिक						
पी० एच०	6·5–8·5	6·5–9·5	7–8·5	6·5–9·2	7–8·5	6·5–9·2
कुल ठोस कण	—	—	—	—	—	—
कुल कठोरता	300	600	300	600	—	—
कैल्शियम	75	200	75	200	75	200
मैग्नीशियम	30	100	50	150	50	150
कॉपर	0·05	1·5	1·0	3·0	1·0	1·5
मैगनीज	0·1	0·5	0·1	0·5	0·1	0·5
क्लोराइड	250	1000	250	1000	250	600
फ्लोराइड	0·6–1·2	—	1·0	2·0	0·5	1·0–1·5
विषैले पदार्थ						
आर्सेनिक	0·05	—	—	0·2	—	0·2

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

कैडमियम	0·05	—	—	0·05	—	0·05
सायनाइड	0·05	—	—	0·01	—	0·01
सीसा (लेड)	0·1	—	—	0·1	—	0·1
सेलेनियम	0·01	—	—	0·05	—	0·01
जिंक	5·0	10·0	—	—	—	—
पारा	0·01	—	—	—	—	—
जैविक						
कॉलीफार्म	1 कॉलीफार्म/100 ml		1 कॉलीफ़ार्म/100 ml		1 कॉलीफार्म/100 ml	
रेडियोधर्मिता						
अल्का उत्सर्जक (uc/ml)	10^{-8}	—	—	10^{-9}	—	10^{-9}
बीटा उत्सर्जक (uc/ml)	10^{-7}	—	—	10^{-8}	—	10^{-8}

3.11 उपचारित अपशिष्ट जल के मानक (Standards For Treated Waste Water)

जल बहुत से कार्यों में प्रयोग होने के बाद दूषित हो जाता है। इस जल को नदियों में गिराने से पहले इसका उपचार आवश्यक होता है। अत: उपचारित जल के मानक निम्न तालिका में दर्शाये गये हैं—

तालिका 3.4

उपचारित अपशिष्ट जल के मानक

क्रमांक	प्रदूषक	अधि० सीमा
1.	पी० एच०	5·5 – 9·0
2.	B.O.D.	30 ppm
3.	C.O.D.	250 ppm
4.	कुल निलम्बित ठोस	100 ppm
5.	ताप	40°C
6.	सोडियम	0·2%
7.	क्लोराइड	600 ppm
8.	फ्लोराइड	2 ppm
9.	जिंक	5 ppm
10.	कॉपर	3 ppm
11.	निकिल	2 ppm
12.	कैडमियम	2 ppm
13.	क्रोमियम	0·1 ppm
14.	लेड	0·1 ppm
15.	आर्सेनिक	0·2 ppm
16.	सायनाइड	0·2 ppm
17.	मरकरी	0·01 ppm
18.	सेलेनियम	0·05 ppm

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

3.12 उपचार (Treatment)

सीवेज को नदियों में मिलाने से पहले इसका उपचार करना चाहिए। उपचारित जल को ही नदियों (प्राकृतिक जलधाराओं) में मिलाना चाहिए जिससे प्राकृतिक जल धारायें जो मानव के विकास में बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान देती हैं, जहरीली न हो सकें। अपशिष्ट जल का शोधन हम निम्न उद्देश्यों के लिए करते हैं—

(i) सीवेज के आयतन को कम करना।

(ii) तेलीय पदार्थों को दूर करना।

(iii) रोगजनक जीवाणु, विषाणु आदि को दूर करना।

(iv) निलम्बित कणों तथा कोलाइडल कणों को दूर करना।

(v) उपचारित सीवेज को सिंचाई के लिए प्रयोग करना।

(vi) सीवेज की तीव्रता कम करना।

(vii) सीवेज को सुरक्षित तथा सन्तोषजनक करना।

3.12-1 अपशिष्ट जल के उपचार की विधियाँ (Treatments Methods of Waste Water)

उपचार प्रक्रम का खाका (Layout of Treatment System) चित्र 3.3 में दर्शाया गया है।

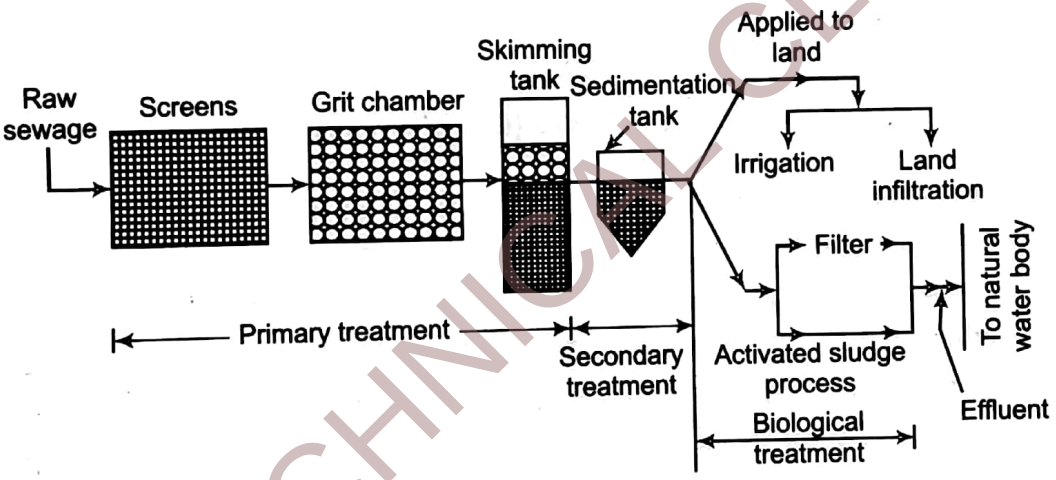

चित्र 3.3 : उपचार खाका

1. प्रारम्भिक उपचार (Primary Treatment)

प्रारम्भिक उपचार के अन्तर्गत सीवेज से निलम्बित तथा तैलीय पदार्थों को अलग करने का काम किया जाता है। इस उपचार से लकड़ी, कागज, कपड़े, कार्क, मिट्टी, बजरी, रेत, चिकनाई, ग्रीस आदि को अलग किया जाता है। इसमें स्क्रीनिंग, ग्रिट चैम्बर, स्किमिंग चैम्बर आदि का प्रयोग किया जाता है।

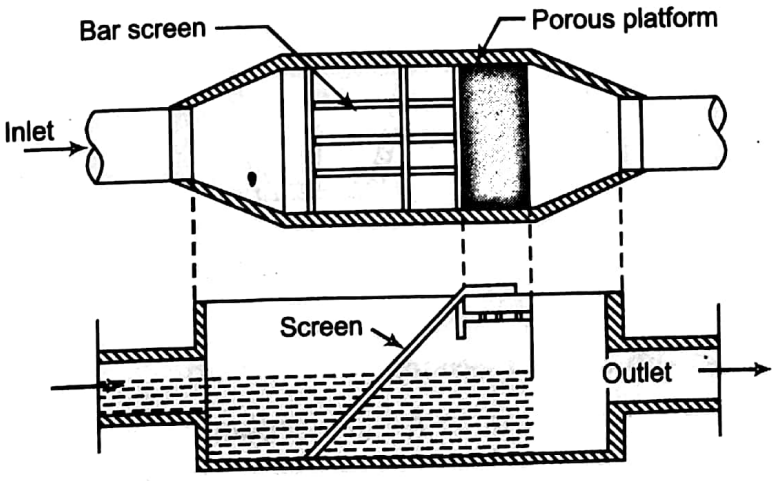

चित्र 3.4

(i) छन्नें (Screens)—इसमें एक समान आकार के चौकोर अथवा गोल छेद होते हैं। छन्नक लोहे की समान्तर छड़ों, तारों की जाली या छिद्रित इस्पात की चादर का बना होता है। इस पर रुके हुए पदार्थों को समय-समय पर हटाते रहना चाहिए और उसका उचित निपटान कर दिया जाना चाहिए। (चित्र 3.4)।

AK TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

(ii) ग्रिट कक्ष (Grit Chamber)—सीवेज से 6 mm से कम माप के अकार्बनिक पदार्थों के कणों को दूर करने के लि ग्रिट कक्ष का प्रयोग किया जाता है। इससे बजरी, बालू, गिट्टी आदि को अलग किया जाता है। जब पहली वर्षा होती है तो सीवे में ग्रिट की मात्रा बढ़ जाती है। गलियों की सफाई, रसोईघर के निस्राव, गैराज व सर्विस स्टेशनों आदि से सीवेज में ग्रिट आ जा है। इसको अलग करने के लिए दो कक्ष बनाये जाते हैं। जब एक कक्ष प्रयोग में होता है, तब दूसरा कक्ष साफ किया जाता है ग्रिट कक्ष में सीवेज का वेग कम कर दिया जाता है जिससे कम वेग के कारण ग्रिट आसानी से तली में बैठ जाती है। फिर इ अलग कर लिया जाता है (चित्र 3.5)।

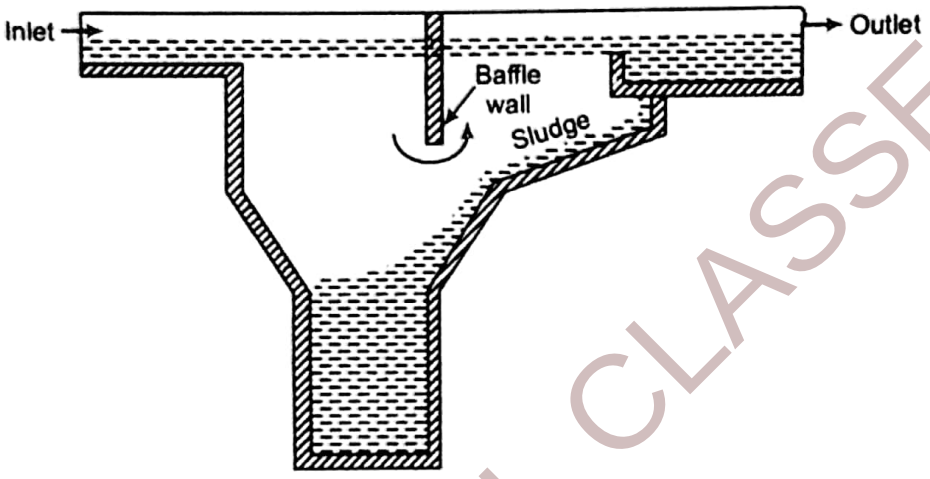

चित्र 3.5 : ग्रिट कक्ष (Grit Chamber)

(iii) स्किमिंग टैंक (Skimming Tank)—विभिन्न तेलीय पदार्थों को दूर करने के लिए स्किमिंग टैंक का प्रयोग किया जाता है। सीवेज में साबुन, चिकनाई, ग्रीस आदि तैरती अवस्था में होते हैं। इनको अलग करने के लिए टैंक में बैकल दीवारें बनी होती हैं और टैंक की तली में वायु डिफ्यूजर (Air diffuser) लगे होते हैं। जो नीचे से वायु को तीव्रता से टैंक में ऊपर की ओर भेजते हैं जिससे चिकनाईयुक्त पदार्थ झाग के रूप में बदल जाते हैं। जिनको फेन कुण्ड में अलग कर लिया जाता है। इस प्रकार इनलेट (Inlet) से सीवेज प्रवेश करता रहता है और फेन टैंक में चिकनाई दूर होती रहती है तथा चिकनाई रहित सीवेज Outlet से बाहर पहुँचता रहता है और फिर पेन टैंक से चिकनाई को बाहर निकाल लिया जाता है (चित्र 3.6)।

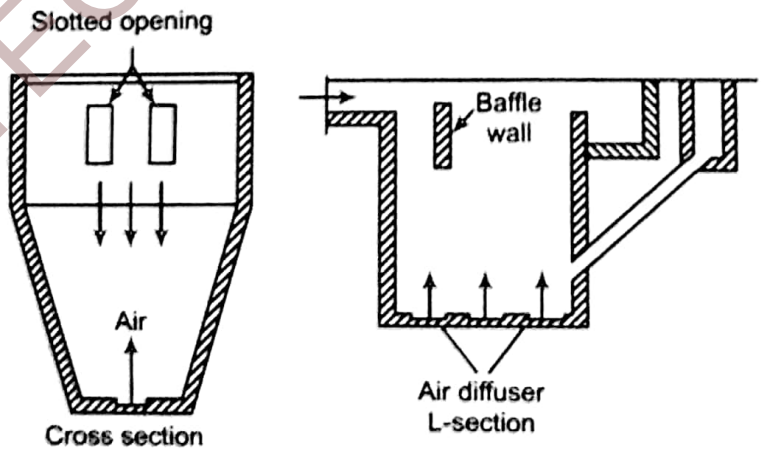

चित्र 3.6 : Skimming Tank

2. द्वितीयक उपचार (Secondary Treatment)

इस उपचार द्वारा सीवेज से महीन निलम्बित मृदा कणों एवं कोलाइडल कणों को पृथक किया जाता है। इसके अन्तर्गत रासायनिक अवसादन या साधा अवसाधन क्रिया आती है। इस उपचार का उद्देश्य 80-90% तक बैठने वाले पदार्थों को सीवेज से अलग करना है। साधा अवसादन क्रिया में बहाव का वेग कम होने के कारण भारी कण स्वयं भार के कारण नीचे बैठ जाते है

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

और इस क्रिया में किसी स्कन्दक का प्रयोग नहीं किया जाता है। कोलाइडल कण अपने भार के कारण नहीं बैठ पाते हैं। इन पर पानी द्वारा उत्थापक बल इनके भार से अधिक होता है जिससे ये तली में नहीं बैठ पाते हैं। यदि इन कोलाइडल कणों को संयुक्त कर दिया जाये तो भार पड़ने के कारण ये गुच्छों के रूप में तली में बैठने लगते हैं।

कोलाइडल कणों को संयुक्त करने के लिए स्कन्दकों का प्रयोग किया जाता है। स्कन्दकों से ये कण आपस में बड़े-बड़े गुच्छों का रूप ले लेते हैं और भार के कारण नीचे बैठ जाते हैं। इस प्रकार कोलाइडल कणों को दूर कर देते हैं। स्कन्दन क्रिया हेतु निम्न स्कन्दकों का प्रयोग किया जाता है—

(i) फिटकरी $[Al_2(SO_4)_3]$
(ii) $FeCl_2$
(iii) H_2SO_4
(iv) चूना $[Ca(OH)_2]$
(v) $FeCl_3$
(vi) $[Fe_2(SO_4)_2]$

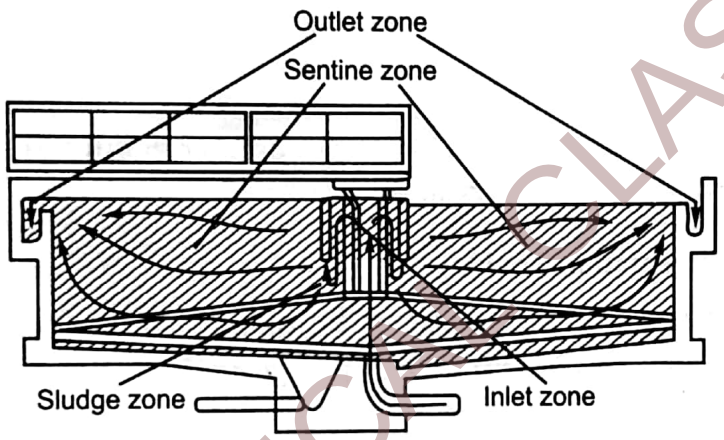

चित्र 3.7 : अवसादन टैंक

निस्यंदन (Filtration)—अवसादी टैंक से निकले हुए वाहित मल से तैरते हुए तथा हल्के ठोस पदार्थ अलग हो जाते हैं परन्तु बहुत महीन निलम्बित पदार्थ तथा घुले हुए पदार्थ कोलाइडी अवस्था में रह जाते हैं जिसके लिए फिल्टरेशन क्रिया की जाती है। इस क्रिया से पदार्थों का ऑक्सीकरण भी होता है। चित्र 3.8 में सीवेज फिल्टरों का प्रारूप दिखाया गया है।

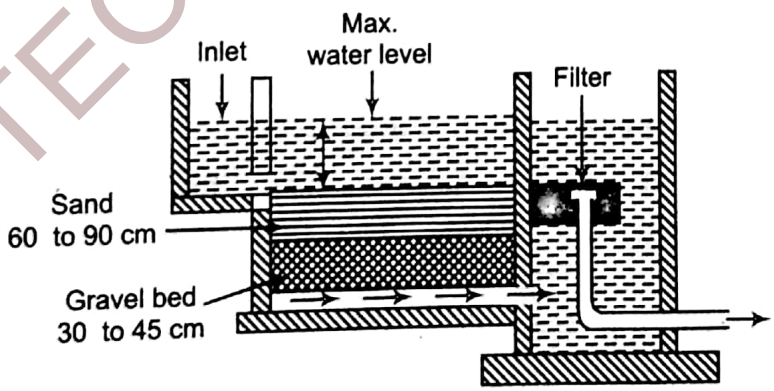

चित्र 3.8 : सीवरेज फिल्टर (Sewerage Filtration)

3. रोगाणुनाशक (Disinfectant)

अवसादन व फिल्टर क्रिया में रोगाणुओं को दूर नहीं किया जा सकता है जबकि सीवरेज से रोगाणुओं को दूर करना बहुत आवश्यक होता है। अत: रोगजनक कीटाणुओं को दूर करने के लिए रोगाणुनाशक क्रिया अपनाई जाती है। सीवेज में कुछ रासायनिक अवयव जैसे—क्लोरीन, ब्लीचिंग पाउडर, लाल दवा आदि मिलाकर सीवेज को रोगाणुओं से मुक्त कर लिया जाता है। क्लोरीन चूर्ण अथवा द्रव के रूप में मिलायी जा सकती है। सीवेज में क्लोरीन की मात्रा इतनी मिलायी जानी चाहिए कि रोग जनक जीवाणु पूरी तरह से नष्ट हो जायें तथा इतनी अधिक मात्रा न मिलायी जाये जो कि उसमें क्लोरीन शेष रह जाये। रोगाणुनाशन के बाद सीवेज को किसी नदी या झील में छोड़ दिया जाता है अथवा सिंचाई हेतु प्रयोग में लाया जा सकता है।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

.13 निस्राव उपचार संयन्त्र के भागों के मुख्य कार्य
(Main Functions of Parts of Effluent Treatment Plant)

.13-1 स्क्रीनिंग चैम्बर (Screening Chamber)

निस्राव में निलम्बित तथा तैरते हुए पदार्थ जैसे कागज, लकड़ी के टुकड़े, रसोई का कचरा, कपड़ों के टुकड़े, कॉर्क, ालू, बजरी आदि को इसमें छानकर अलग किया जाता है।

.13-2 ग्रिट चैम्बर (Grit Chamber)

रेत, राख, काँच के टुकड़े, छोटे अकार्बनिक पदार्थ के महीन कण, खनिज पदार्थ आदि ग्रिट चैम्बर द्वारा अलग हो जाते ैं। जैसे कि पहले बता चुके हैं कि इसमें निस्राव का वेग कम कर दिया जाता है। इसके लिए चैनल का परिच्छेद बढ़ा दिया जता ै। कम वेग के कारण ग्रिट तली में बैठ जाती है।

.13-3 स्किमिंग टैंक (Skimming Tank)

इस टैंक का कार्य तेलीय पदार्थों को अलग करना होता है। Air diffuser के द्वारा ग्रीस, तेल आदि को झाग में परिवर्तित कर दिया जाता है और फिर इसे अलग कर लिया जाता है।

.13-4 अवसादन कक्ष (Sedimentation Tank)

इस कक्ष में अवसादन क्रिया होती है। इसमें निस्राव का वेग बहुत ही कम कर दिया जाता है और उसमें रासायनिक अवयव मिलाकर महीन कोलाइडल कणों को गुच्छों के रूप में अलग कर लिया जाता है।

3.13-5 सीवेज फिल्टर (Sewage Filter)

अत्यन्त महीन कणों वाले निस्राव को जैविक उपचार के लिए फिल्टर में भेजा जाता है। फिल्टर के छोटे-छोटे बेसिनों में जीवाणुओं की क्रिया से कार्बनिक पदार्थ विघटित हो जाते हैं। यह क्रिया ही जैविक क्रिया कहलाती है। जीवाणु कार्बनिक पदार्थों को सरल यौगिकों (H_2O तथा CO_2) में परिवर्तित कर देते हैं तथा निस्राव साफ होकर फिल्टर से बाहर निकल जाता है। जीवाणु कुछ अकार्बनिक पदार्थों का भी ऑक्सीकरण कर देते हैं।

3.14 उपचारित अपशिष्ट का पुनःप्रयोग एवं सुरक्षित निस्तारण
(Reuse and Safe Disposal of Treated Effluent)

शोधित अपशिष्ट जल या शोधित सीवेज प्राय: नदी, नालों आदि में मिला दिया जाता है, इसे सीवेज का तनुकरण (Dilution) कहते हैं। बिना शोधन के सीवेज को नदी आदि में नहीं गिराना चाहिए। उपचारित सीवेज या बहुत कम प्रदूषित सीवेज ही नदी में गिराना चाहिए और इसके अतिरिक्त कम प्रदूषित सीवेज या उपचारित सीवेज को खेती की सिंचाई के काम में लाया जाता हैं। इससे फसलों को काफी उपजाऊ तत्व सीवेज से ही प्राप्त हो जाते हैं और सीवेज का निस्तारण भी हो जाता है। अत्यधिक मात्रा में प्रदूषित सीवेज को सिंचाई के काम में नहीं लाना चाहिए। इस प्रकार से पता चलता है कि एक व्यर्थ पदार्थ का उचित पुन:उपयोग हो जाता है और साथ ही साथ उसका सुरक्षित निस्तारण भी हो जाता है।

खेतों की सिंचाई सीवेज द्वारा बार-बार लगातार नहीं करनी चाहिए क्योंकि इससे मृदा के रन्ध्र सीवेज की मिट्टी से बन्द हो जाते हैं और खेत की मृदा की फसल की उपजाऊ क्षमता कम हो जाती है। इसे सीवेज सिकनेस (Sewage sickness) कहते हैं।

3.15 जल प्रदूषण नियंत्रण के उपाय (Control of Water Pollution)

जल प्रदूषण को रोकना बहुत ही गम्भीर समस्या है। इसे रोकने के निम्न उपाय करना चाहिए—

1. अपशिष्ट जल को उपचारित करके ही नदियों (प्राकृतिक जलधाराओं) में मिलाना चाहिए।
2. ठोस अपशिष्ट को खुले स्थानों पर निपटान को रोका जाना चाहिए।
3. रासायनिक कीटनाशकों के स्थान पर जैव कीटनाशकों का प्रयोग करना चाहिए।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

4. कुओं में क्लोरीन डालकर या पोटेशियम परमैग्नेट ($KMnO_4$) का प्रयोग करके, पानी में रोगाणुनाशी का प्रयोग करके उसे प्रयोग में लाया जाना चाहिए।
5. मलजल के साथ वर्षा जल को नहीं जाने देना चाहिए। इसके लिए मलजल व वर्षाजल के लिए अलग-अलग सीवरेज सिस्टम अपनाना चाहिए।
6. नदियों में शवों व अधजले शवों को नहीं बहाया जाना चाहिए।
7. उर्वरकों एवं कृषि में उपयोग होने वाले रसायनों का बुद्धिमता से उपयोग हो। ढलान वाले क्षेत्रों में इनका प्रयोग न्यूनतम हो।
8. उर्वरकों के स्थान पर नाइट्रोजन का यौगिकीकरण करने वाले पौधों का इस्तेमाल हो।
9. जल क्षेत्रों के आस-पास गंदगी करने, उसमें नहाने, कपड़े धोने तथा जानवरों को भी नहलाने आदि को रोकना भी आवश्यक है।
10. कुछ उद्योग, जो कम मात्रा में निस्राव निकालते हैं, वे बोरवेल में अपशिष्ट जल को डाल देते हैं जिससे भूगर्भ जल दूषित हो रहा है। ये मामले प्रकाश में आने लगे हैं। सरकार को इन पर रोक लगानी चाहिए।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

प्रश्न 8. घुलित आक्सीजन की संकल्पना (Concept of dissolve oxygen) दीजिए।

उत्तर: घुलित आक्सीजन (Dissolve oxygen): आक्सीजन पृथ्वी के अनेक पदार्थों में रहता है जैसे पानी और वास्तव में अन्य तत्वों की तुलना में इसकी मात्रा सबसे अधिक है। आक्सीजन वायुमण्डल में स्वतन्त्र रूप से मिलता है और आयतन के अनुसार उसका लगभग पांचवा भाग है। यौगिक रूप में पानी खनिज तथा चट्टानों का यह महत्वपूर्ण अंश है। वनस्पति तथा प्राणियों के प्राय: सब शारीरिक पदार्थों का आक्सीजन एक आवश्यक तत्व है।

आक्सीजन पानी में थोड़ा घुलशील है, जो जलीय प्राणियों के श्वसन के लिए उपयोगी है। कुछ धातुएं (जैसे पिघली हुई चांदी) अथवा दूसरी वस्तुएं (जैसे कोयला) आक्सीजन का शोषण बड़ी मात्रा में कर लेती है।

बहुत से तत्व आक्सीजन से सीधा संयोग करते हैं। इनमें कुछ (जैसे-फास्फोरस, सोडियम आदि) तो साधारण ताप पर ही धीरे-धीरे क्रिया करते हैं, परन्तु अधिकतर, जैसे कार्बन, गंधक, लोहा, मैग्नीशियम आदि गरम करने पर क्रिया करते हैं। आक्सीजन से भरे बर्तन में ये वस्तुएं दहकती हुई अवस्था में डालते ही जल उठती है और जलने से आक्साइड बनता हैं। आक्सीजन में हाइड्रोजन गैस जलती है तथा पानी बनता है। यह क्रिया इन दोनों के गैसीय मिश्रण में विद्युत चिनगारी से अथवा उत्प्रेरक की उपस्थिति में भी होती है।

आक्सीजन बहुत से यौगिकों से भी क्रिया करती है। नाइट्रिक अक्साइड, फेरस तथा मैगनस हाइड्राक्साइड का आक्सीकरण साधारण ताप पर ही होता है। हाइड्रोजन फास्फाइड, सिलिकन हाइड्राइड तथा जस्ता, एथिल से भी जब क्रिया करती हैं, तो क्रिया करने पर इतना ताप उत्पन्न होता है कि सम्पूर्ण वस्तुएं ही प्रज्वलित हो उठती हैं। लोहा, निकिल आदि महीन रूप में रहने पर और लेड सल्फाइड तथा कार्बन क्लोराइड जब सूर्य के प्रकाश में क्रिया करते हैं। इन क्रियाओं में पानी की उपस्थिति, चाहे सूक्ष्म मात्रा में ही क्यों न रहे, बहुत महत्वपूर्ण है। किसी भी धातु से आक्सीजन की क्रिया कराने पर धातु का दहन होता है।

प्रश्न 9. रसायनिक आक्सीजन मांग (COD) पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

उत्तर: रसायनिक आक्सीजन मांग (Chemical oxygen demand): पर्यावरणीय रसायन विज्ञान में, रसायनिक आक्सीजन

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

मांग (C.O.D.) आक्सीजन की मात्रा का एक सांकेतिक उपाय (Indicative measure) है, जो एक मेजर्ड सल्यूशन (measured solution) में प्रतिक्रियाओं द्वार कन्ज्यूम्ड (consumed) हो सकता है। यह आमतौर पर सल्यूशन का विलयन के आयतन से अधिक मात्रा में ली जाने वाली आक्सीजन को द्रव्यमान के रूप में व्यक्त किया जाता है, जिसका SI प्रणाली में मात्रक मिलीग्राम प्रति लीटर (mg/L) होता है। पानी आर्गेनिक (organic) की मात्रा को आसानी से निर्धारित करने के लिए एक COD परीक्षण का उपयोग किया जा सकता है।

COD का सबसे आम अनुप्रयोग सतह के पानी (जैसे झीलों और नदियों) या अपशिष्ट जल में पाये जाने वाले आक्सीकरण योग्य प्रदूषकों की मात्रा को निर्धारित करना है।

AK TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

प्रश्न 5. औद्योगिक अपशिष्ट जल (Industrial waste water) को स्पष्ट रूप से बताइये।

उत्तर: औद्योगिक अपशिष्ट जल (Industrial Waste Water): अधिकांश उद्योग जल पर निर्भर करते हैं। उद्योगों की जल की मांग की पूर्ति के लिए तथा अपशिष्ट पदार्थों के सुगम समापन के उद्देश्य से अधिकांशत: उद्योगों को बड़ी नदियों अथवा जल के किनारे स्थापित किया जाता है। उत्पादन क्रिया के अन्त में उद्योगों से निकलने वाला बहि: स्राव हानिकारक अपशिष्ट पदार्थों से भरा रहता है। लगदी तथा कागज उद्योग, शक्कर उद्योग, कपड़ा उद्योग, चर्म कर्म (leather tanning), मद्य निर्माणशालाओं (brewery) तथा औषध निर्माण उद्योग (pharmaceutical industies), खाद्य संसाधन उद्योगों (food processing industries) तथा रसायनिक उद्योगों द्वारा बड़ी मात्रा में विभिन्न प्रकार के अपशिष्ट बहि: स्राव रूप में जलमार्गों में बहाये जाते हैं। प्रदूषकों में तेल, ग्रीज, प्लास्टिक प्लास्टिसाइजर, धातु अपशिष्ट, निलम्बित ठोस, फीनोल, आविष, अम्ल, लवण, रंजक, सायनाइड, डी.डी.टी. इत्यादि होते हैं। प्रारम्भ में तो इनके दुष्प्रभाव परिलक्षित नहीं होते, पर जैसे-जैसे औद्योगिकरण बढ़ता है, नदी तथा तालाब औद्योगिक अपशिष्टों की मात्रा में वृद्धि के कारण अधिकाधिक प्रदूषित होते जाते हैं। इससे गम्भीर प्रदूषण समस्याऐं उत्पन्न होती हैं। ऊष्मीय शक्ति संयन्त्रों से भी प्रयोग के बाद व्यर्थ जल अति उच्च तापमान पर सरिताओं, नदी, झीलों में पहुँचते हैं। ये जलाशय में जलीय जीवन को प्रभावित करते हैं। इसे **ऊष्मीय प्रदूषण** (Thermal Pollution) भी कहते हैं। नाभिकीय संयन्त्रों (Nuclear Power Plants) से भी व्यर्थ जल जलाशयों में आता है। यह रेडियोएक्टिव न्यूक्लाइड का स्रोत है। यह भी जलीय जीवन पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है।

प्रश्न 6. जैव रसायनिक ऑक्सीजन की मांग (बी.ओ. डी.) और सुपोषण पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

उत्तर: (i) जैव रसायनिक ऑक्सीजन की मांग [बी.ओ. डी. (Biochemical Oxygen Demand)]: कार्बनिक तथा अकार्बनिक व्यर्थ पदार्थ जलाशयों की घुलनशील ऑक्सीजन (dissolved O_2) (डी. ओ.) की मात्रा को कम कर देते हैं। जल का तापमान जितना अधिक होता है, उतनी ही कम उसमें घुलनशील ऑक्सीजन की दर होती है। 8.0 मिग्रा.$^{-1}$ से कम डी. ओ. (DO) मात्रा वाले जल को प्रदूषित जल माना जाता है। जल के डी. ओ. की मात्रा जलीय जीवों की उत्तरजीविता के लिए

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

महत्वपूर्ण है। कार्बनिक व्यर्थ पदार्थों की अधिक मात्रा अपघटन की दर तथा ऑक्सीजन के उपभोग को बढ़ा देती है जिससे जल की डी. ओ. मात्रा कम हो जाती है। ऑक्सीजन की मांग प्रत्यक्ष रूप से कार्बनिक व्यर्थ पदार्थों के निवेश के बढ़ने से सम्बन्धित होती है तथा इसे **जैवरसायनिक ऑक्सीजन की मांग (बी. ओ. डी.)** के रूप में अभिव्यक्त किया जाता है। **बी. ओ. डी. ऑक्सीजन की वह मात्रा है जिसकी किसी इकाई जल के आयतन में सूक्ष्मजीवों द्वारा जैविक उपचयन के लिए आवश्यकता होती है।** बी. ओ. डी. जितना अधिक होता है डी. ओ. उतना ही कम होता है।

(ii) सुपोषण (Eutrophication): जलाशयों में अपमार्जकों (detergents) के मिलने से उनमें बड़ी मात्रा में फॉस्फेट भी मिल जाते हैं जिन्हें जीवों के कुछ समूहों जैसे नीलरहित शैवालों द्वारा उपयोग कर लिया जाता है। कार्बनिक व्यर्थ पदार्थों के अपघटन से भी जलाशयों में पोषक तत्वों की मात्रा बढ़ जाती है। पोषक तत्वों की अत्यधिक उपलब्धता से शैवालों विशेषत: नील-हरित शैवालों की वृद्धि **शैवाल प्रस्फुटन** (algal bloom) तीव्र गति से हो जाती है। इस प्रकार का शैवाल प्रस्फुटन पूरी जल की सतह को भी ढक सकता है तथा इससे जल में बहुधा विष निर्मुक्त होते हैं और कभी-कभी जल में ऑक्सीजन की कमी भी हो जाती है। अत: प्रस्फुटन से ग्रसित जलाशयों में अन्य शैवालों की वृद्धि इन विषों के कारण अवरूद्ध हो सकती है तथा विषाक्त अथवा ऑक्सीजन की कमी के कारण जलीय जन्तुओं (उदाहरण मछलियों) की मृत्यु भी हो सकती है। यह जल में पोषक तत्वों की समृद्धा तथा उसके परिणामस्वरूप प्रजाति विविधता में होने वाली कमी की प्रक्रिया सुपोषण (eutrophication) कहलाती है।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

4.

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long Answers Questions)

प्रश्न 1. ठोस अपशिष्ट प्रबंधन से आप क्या समझते हैं?

उत्तर: ठोस अपशिष्ट प्रबंधन (Solid Waste Management): ठोस अपशिष्ट ऐसा कोई भी पदार्थ होता है जिसे कोई महत्व न होने के कारण फेंक दिया जाता है। ठोस अपशिष्ट मनुष्य तथा जानवरों की गतिविधियों से उत्पन्न होने वाला पदार्थ होता है जैसे कचरा, रद्दी तथा बहि: स्राव उपचार संयन्त्र (effluent treatment plant) से निकलने वाला अवमल (sludge)। ठोस अपशिष्ट सजीवों की सामान्य तथा मौलिक गतिविधियों के सह उत्पाद के रूप में उत्पन्न होता है। ये अपशिष्ट बचे हुए भोजन, आग की राख, मानव तथा जन्तुओं के मल जैसे आरम्भिक पदार्थ हो सकते हैं। इसके साथ ही निर्माण कार्य, गलियों की सफाई तथा वाहित मल उपचार (sewage treatment) से भी काफी मात्रा में ठोस अपशिष्ट उत्पन्न होते हैं। इन्हें इनके स्रोतों के आधार पर विभिन्न प्रकारों में बाँटा जा सकता है। ये हैं–नगरपालिकीय ठोस अपशिष्ट, जैवचिकित्सीय अपशिष्ट, औद्योगिक अपशिष्ट, प्लास्टिक अपशिष्ट, कृषि अपशिष्ट, जन्तु अपशिष्ट, खनन अपशिष्ट आदि।

प्रश्न 2. ठोस अपशिष्ट के स्रोत कौन-कौन से हैं? बताइए।

उत्तर: ठोस अपशिष्ट के स्रोत (Sources of Solid Wastes): ठोस अपशिष्ट के विभिन्न स्रोत हैं–

1. दुकानों से प्राप्त अपशिष्ट जैसे–सब्जी अपशिष्ट, सड़ा फल, रद्दी, बोतल, कैन आदि।
2. घरों से प्राप्त अपशिष्ट जैसे–थैले, प्लास्टिक, टूटे हुए शीशे, खाली बोतलें, पुराने कपड़े, बेकार खाना आदि।
3. डेरी फार्म या फार्म से प्राप्त अपशिष्ट जैसे–पशुओं का मल-मूल आदि।
4. अस्पतालों से प्राप्त अपशिष्ट जैसे–रोगविज्ञान सम्बन्धी अपशिष्ट, उप्योजित सिरिंज, पट्टी आदि।
5. उद्योगों से प्राप्त अपशिष्ट जैसे–कार्बनिक अपशिष्ट, रसायनिक अपशिष्ट, पैकेजिंग पदार्थ, पेन्ट, डाई, रबड़, लौहकण आदि।
6. थर्मल पॉवर प्लांट से प्राप्त अपशिष्ट जैसे–उड़ती हुई राख, जो कि बड़ी मात्रा में निकलती है।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

प्रश्न 3. ठोस अपशिष्ट के प्रभावों (Effects of Solid Wastes) को बताइऐ।

उत्तर: ठोस अपशिष्ट के प्रभाव:

1. जब लोग अपने घरेलू अपशिष्टों को सड़क के किनारे फेंक देते हैं, जिसकी वजह से ब्लॉकेज हो जाता है। कभी-कभी लोग अपने अपशिष्टों को अपने घरों के पास अविकसित क्षेत्र में फेंक देते हैं। जब इन घरेलू अपशिष्टों को नगरपालिका के कर्मचारियों द्वारा नहीं हटाया जाता तो उनमें से दुर्गन्ध आने लगती है जिससे कई प्रकार की बैक्टीरिया उत्पन्न होते हैं और अनेक प्रकार की बीमारियाँ फैलाते हैं।

2. औद्योगिक ठोस अपशिष्ट विषैले धातुओं का बड़ा स्रोत होता है जिसके कारण भौतिक, रसायनिक और जैविक गुणों में परिवर्तन होते हैं। विषैले पदार्थों का उच्च सान्द्रण सतही जल को दूषित कर देता है। जैसे–भारी धातुएँ (जिंक, काँच और पारा) जब मिट्टी में प्रवेश करते हैं तो उसकी (मृदा की) उत्पादकता को प्रभावित करते हैं।

प्रश्न 4. ठोस अपशिष्ट कितने प्रकार के होते हैं? बताइए।

उत्तर: ठोस अपशिष्ट के प्रकार (Types of Solid Wastes): प्राय: ठोस अपशिष्ट दो प्रकार के होते हैं–

(a) जैविक विघटनकारी (Biodegradable): वे ठोस अपशिष्ट, जिन्हें सूक्ष्म जीवाणुओं द्वारा नष्ट किया जा सकता है, उन्हें (Biodegradable) कहते हैं।

जैसे–सड़े फल/सब्जियाँ, प्रयुक्त चायपत्ती, अण्डे की परत, सूखी पत्तियाँ, कपड़े, रद्दी, गोबर आदि।

(a) अजैविक विघटनकारी (Non-Biodegradable): वे ठोस अपशिष्ट, जिन्हें सूक्ष्म जीवाणुओं द्वारा नष्ट नहीं किया जा सकता है, उन्हें Non-Biodegradable कहते हैं। जैसे–प्लास्टिक, बोतलें, बैगस, लौह कण, शीशा, काँच आदि।

प्रश्न 5. ठोस अपशिष्टों का प्रबन्धन कैसे किया जा सकता है? विस्तार से समझाइए।

उत्तर: लगातार बढ़ती जनसंख्या के द्वारा रहन-सहन के उच्च स्तर को अपनाए जाने के परिणामस्वरूप अपशिष्ट की मात्रा तथा विविधता में बढ़ोतरी हुई है। अब यह माना जाने लगा है कि यदि अपशिष्ट का बेतरतीब उत्पादन जारी रहेगा तो बहुत जल्दी ही इसकी मात्रा इतनी बढ़ जाएगी कि उसका सम्भालना मुश्किल होगा।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

अकेले दिल्ली में ही 4,000 टन से अधिक ठोस अपशिष्ट प्रतिदिन उत्पन्न होता है। इतनी अधिक मात्रा में अपशिष्ट को एकत्रित करना, उसका परिवहन तथा अंततः निपटाना/नष्ट करने के लिए उच्च स्तर के प्रबन्धन तथा तकनीकी विशेषज्ञता की आवश्यकता होती है।

ठोस अपशिष्टों का प्रबन्धन ठोस अपशिष्टों के विपरीत प्रभावों को कम करने के लिए बहुत महत्वपूर्ण हो गया है। सभी प्रकार के अपशिष्ट प्रबन्धन के लिए 'तीन आर' रिड्यूस/कम करना, रियूज/पुनः प्रयोग तथा रीसाइकिल/पुनः चक्रण का उपयोग किया जाता है।

(i) कच्चे माल के उपयोग की कमी (Reduction in use of raw materials): कच्चे माल के उपयोग में कमी से अपशिष्ट के उत्पादन में भी कमी आ जाती है। किसी भी धातुई उत्पाद की मांग में कमी से इन धातुओं के खनन में कमी आएगी जिससे अपशिष्ट का उत्पादन कम होगा।

(ii) अपशिष्ट पदार्थों का पुनः प्रयोग (Reuse of waste materials): पुनः भरे जा सकने वाले पात्र जिन्हें उपयोग के बाद फेंक दिया जाता है उन्हें पुनः प्रयोग किया जा सकता है। ग्रामवासी रद्दी कागज तथा अन्य रद्दी सामान से खत्ता (silo) बनाते हैं। साइकिल की फेंक दी गई ट्यूबों से रबड़ के छल्ले बनाए जाते हैं जिनका उपयोग अखबार वालों द्वारा रबर बैण्ड के स्थान पर किया जाता है। पैसे की कमी के कारण गरीब लोग अपनी वस्तुओं का अधिकतम पुनः प्रयोग कर लेते हैं।

(iii) पदार्थों का पुनः चक्रण (Recycling of materials): पुनः चक्रण व्यर्थ वस्तुओं का नए उपयोगी उत्पादों में पुनः प्रक्रम (reprocessing) है। उदाहरण के लिए एल्यूमीनियम तथा काँच की पुरानी बोतलों को गलाकर तथा पुनः ढलाई करके नए उपयोगी उत्पाद बनाए जाते हैं। स्टील के डिब्बों से स्वचालित वाहनों तथा निर्माण सामग्री को बनाया जा सकता है। पुनः चक्रण वास्तव में एक पर्यावरण-मित्र (ecofriendly) तकनीक है।

प्रश्न 6. ठोस अपशिष्टों का पूर्ण निपटान किन-किन विधियों द्वारा किया जा सकता है। समझाइए।

उत्तर: ठोस अपशिष्टों का पूर्ण निपटान की निम्न विधियाँ हैं–

(1) स्वच्छता/सैनिटरी भूमि की भराई

(2) खाद बनाना

(3) भस्मीकरण

(1) स्वच्छता/सैनिटरी भूमि की भराई/लैण्डफिलिंग (Sanitary land filling): भूमि की भराई/लैण्डफिल (landfill) वह प्रणाली है जिसकी रचना तथा निर्माण व्यर्थ अपशिष्ट के निपटाने के लिए उसे भूमि में दबा देने के द्वारा की जाती है जिससे कम से कम प्रदूषक पर्यावरण में प्रवेश करे। भूमि की भराई/लैण्डफिल में विशिष्ट अपशिष्ट, नगरपालिका ठोस अपशिष्ट, हानिकारक अपशिष्ट आदि आते हैं। सैनिटरी लैण्डफिल में कचरे को पतली परतों में बिछाकर उसे संघनित करके मिट्टी या प्लास्टिक फोम से ढक दिया जाता है। आधुनिक लैण्डफिलों में तले को अपारगम्य (impermeable) अस्तर से ढक दिया जाता है जो सामान्यतः मिट्टी की कुछ परतों, मोटी प्लास्टिक तथा रेत की कुछ परतें होती है। अस्तर भौम जल (ground water) को तलछट के रिसाव के कारण संदूषित होने से बचाता है। तली से तलछट को उपचारित किया जाता है। जब लैण्डफिल पूरा भर जाता है तो उसे मिट्टी, रेत, बजरी तथा उपरिमृदा (top soil) से ढक दिया जाता है जिससे जल के रिसाव को राका जा सके (चित्र)। लैण्डफिल स्थल के आसपास अनेक कुएँ खोद दिए जाते हैं जिससे यह पता चल सके कि किसी प्रकार के रिसाव से भौमजल संदूषित तो नहीं हो रहा है। कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2) तथा मीथेन (CH_4) लैण्डफिलों में बनने वाली सबसे सामान्य गैसे हैं। मीथेन अवायवीय विघटन (anaerobic decomposition) के द्वारा निर्मित होती है और दहन के बाद विद्युत अथवा ताप उत्पन्न करती है। लैण्डफिलों को जन-स्वास्थ्य तथा शुचिता की दृष्टि से आबादी वाले क्षेत्रों के बहुत पास नहीं बनाना चाहिए।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

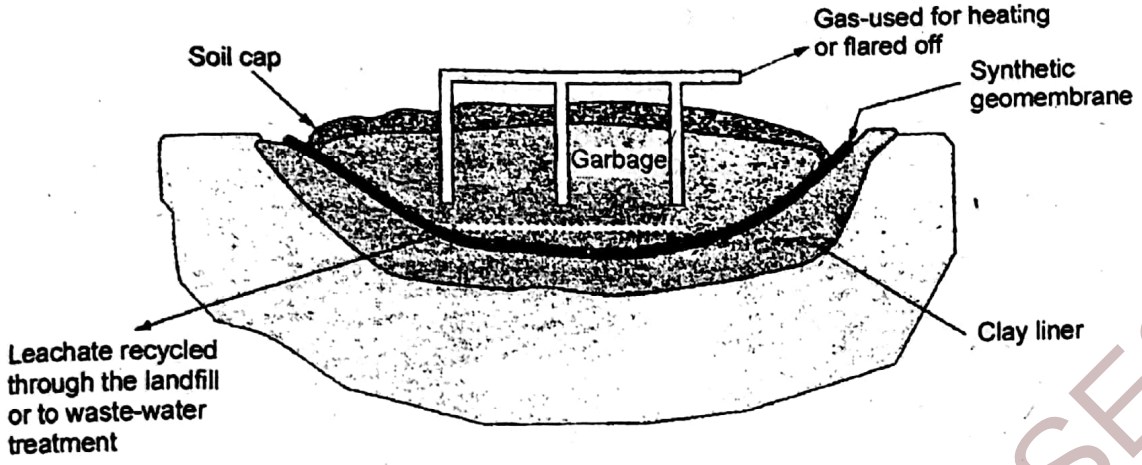

चित्र: A well designed urban waste disposal site

(2) खाद बनाना (Composting): बड़े शहरों में लैण्डफिलों के लिए जगह की कमी होने के कारण जैव निंम्नीकरणीय (biodegradable) यॉर्ड अपशिष्ट (जिसे नगरपालिका अपशिष्ट से पृथक रखा जाता है) को ऑक्सीजन समृद्ध माध्यम में निम्नीकृत अथवा अपघटित होने दिया जाता है। ऑक्सीजन की उपस्थिति से कार्बनिक अपशिष्ट (CO_2) तथा कम्पोस्ट/खाद में परिवर्तित हो जाता है। अच्छे, पोषक तत्वों से समृद्ध तथा पर्यावरण मित्र खाद बन जाती है जो मृदा की स्थिति तथा उर्वरता को बढ़ा देती है।

(3) भस्मीकरण (Incineration): यह एक औद्योगिक दहन की प्रक्रिया है जिसे अवांछित पदार्थों को सरल ठोस तथा गैसीय अवशिष्ट में बलदने के लिये बनाया गया है। भस्मक (incinerator) दहन संयन्त्र होते हैं जो उच्च तापमान पर बड़ी मात्रा में पदार्थों का दहन करने में समर्थ होते हैं। भस्मक तीन प्रकार के होते हैं- (अ) नगरपालिका अपशिष्ट भस्मक, (ब) हानिकारक (औद्योगिक) अपशिष्ट भस्मक, तथा (स) चिकित्सीय अपशिष्ट भस्मक। भस्मीकरण के समय डाइऑक्सिन, फ्यूरान्स, सीसा तथा कैम्बियम भस्मक की फ्लाईएश के साथ उत्सर्जित हो सकती है (भस्मक डाइऑक्साइन के सबसे बड़े उत्पादक हैं।)। क्लोरीनीकृत डाइऑक्सिनों तथा फ्यूरानों के 210 से भी अधिक आणविक परिवर्ती (molecular variables) भस्मकों के बहि: स्राव में पाए जाते हैं। डाइऑक्सिन के उद्भासन (exposure) से बांझपन, जन्मजात दोष/अपंगताएँ तथा कैंसर जैसे रोग हो सकते हैं। यह शरीर की सामान्य क्रियाओं में बाधा पहुँचाता है क्योंकि यह कुछ हॉर्मोनों का अनुकरण करता है। इसे पर्यावरणीय एस्ट्रोजन भी कहते हैं। यह प्रजनन तन्त्र की कार्यविधि में बाधा पहुँचाता है तथा मानवों व जन्तुओं की वृद्धि को रोक देता है। यह ज्ञात कैंसरजनी तत्वों में सबसे खतरनाक है। यह कृषि को भी प्रभावित करता है। फ्यूरान भी बेहद विषैला तथा कैंसरजनी पदार्थ है। कृषि के दृष्टिकोण से सीसे का मृदा संदूषण पर स्थायी प्रभाव पड़ता है।

भस्मीकरण निपटान का एक साधन है जिसे आबादी वाले क्षेत्र के पास भी लगाया जा सकता है। भस्मीकरण अपशिष्ट की मात्रा को भी काफी कम कर देता है जिससे अन्तिम निबटान के लिए बहुत कम जगह की आवश्यकता होती है। यह मीथेन के उत्पादन तथा रिसाव से सम्बन्धित समस्याओं को भी दूर कर देता है जो लैण्डफिल स्थल से निकलते हैं।

लेकिन भस्मीकरण को अब इसके विनाशकारी सहप्रभावों के लिए दोषी पाया गया है जिनमें अनेक प्रदूषकों का वातावरण में निर्मुक्त होना सम्मिलित है जिससे गम्भीर वायु प्रदूषण हो रहा है। उत्सर्जन में भारी धातुएँ, अम्ल गैसें, नाइट्रोजन के ऑक्साइड, कणिकीय पदार्थ (particulate matter) आदि तथा अपूर्ण दहन के उत्पाद जिनमें क्लोरीनीकृत कार्बनिक यौगिक (डाइऑक्सिन, फ्यूरान, क्लोरोबेन्जीन, क्लोरोफीनोल आदि) सम्मिलित हैं, निकलते हैं।

पदार्थों के भस्मीकरण के लिए यह बेहतर होता है कि भारी धातुओं युक्त बैटरियों तथा प्लास्टिक युक्त क्लोरीन को पदार्थों के दहन से पहले अलग कर लिया जाए। प्लास्टिक को पहले निकाल लेने से डाइऑक्सिनों तथ पोलीक्लोरीनेटेड बाइफिनाइलों (पी.सी.बीज) का उत्सर्जन कम हो जाएगा।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

प्रश्न 7. निम्न पर टिप्पणी लिखिए–

(1) जैव चिकित्सीय अपशिष्ट (Biomedical wastes)

(2) नगरपालिकीय ठोस अपशिष्ट (Municipal Solid wastes)

(3) जन्तु अपशिष्ट (Animal wastes)

उत्तर: (1) जैव चिकित्सीय अपशिष्ट (Biomedical wastes): पर्यावरण तथा वन मन्त्रालय के द्वारा 20 जुलाई 1998 को जारी की गई अधिसूचना के अनुसार जैव-चिकित्सीय अपशिष्ट का अर्थ है ऐसा कोई भी अपशिष्ट जो मनुष्यों तथा जानवरों के निदान, उपचार अथवा टीकाकरण के द्वारा अथवा उनसे सम्बन्धित अनुसंधान गतिविधियों के द्वारा अथवा जैविकीय पदार्थों के उत्पादन अथवा परीक्षण के द्वारा उत्पन्न हुआ हो जिसमें तालिका-2 में दी गई श्रेणियाँ भी सम्मिलित हैं।

तालिका 2 Categories of Bio-Medical Waste

Option	Waste Category
Category No.1	**Human Anatomical Waste** (human tissues, organs, body parts)
Category No.2	**Animal Waste** (animal tissues, organs, body part carcasses, bleedding parts, fluid, blood and experimental animals used in research, waste generated by veterinary hospitals, colleges, discharge from hospitals, animal houses)
Category No.3	**Microbiology & Biotechnolgy Waste** (wastes from laboratory culture, stocks or specimens of microorganism live or attenuated vaccines, human and animal cell culture used in research and infections agents from research and industrial laboratories, wastes from production of biologicals, toxins, dishes and devices used for transfer of cultures)
Category No.4	**Waste sharps** (needles, syringes, scalpels, blades, glass, etc. that may cause puncture and cuts. This includes both used and unused sharps)
Category No.5	**Discarded Medicines and Cytotoxic drugs** (wastes comprising of outdated, contaminated and discarded medicines)
Category No.6	**Solid Waste** (Items contaminated with blood, and body fluids including cotton, dressings, soiled plaster casts, lines, beddings other material contaminated with blood)
Category No.7	**Solid Waste** (wastes generated from disposable items other than the waste sharps such as tubings catheters, intravenous set etc.)
Category No.8	**Liquid Waste** (waste generated from laboratory and washing, cleaning, house keeping and disinfecting activities)
Category No.9	**Incineration Ash** (ash from incineration of any bio-medical waste)
Category No.10	**Chemical Waste** (chemicals used in production of biological, chemicals used in disinfection, as insecticides, etc.

(2) नगरपालिकीय ठोस अपशिष्ट (Municipal Solid wastes): नगरपालिकीय अपशिष्ट कचरे, कूड़े करकट, बहिः स्राव तथा निर्माण कार्यों के अपशिष्ट की बनी होती है। कुल नगरपालिकीय ठोस अपशिष्ट (एम. एस. डब्लू.) जो उच्च आय देशों द्वारा वर्ष 2000 में उत्पन्न किया गया था। उसकी मात्रा 85,00,000 टन थी। मध्य आय देशों ने उसी वर्ष में 3,40,00,000

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

टन ठोस अपशिष्ट पैदा किया तथा निम्न आय देशों ने 15,00,00,000 टन एम.एस.डब्लू. पैदा किया।

(3) जन्तु अपशिष्ट (Animal wastes): इनमें बूचड़खाने के अपशिष्ट, जानवरों के शव, मछलियों के अपशिष्ट पदार्थ, चमड़े तथा ऊन के अपशिष्ट आदि सम्मिलित हैं।

प्रश्न 8. प्लास्टिक अपशिष्ट से आप क्या समझते हो? बताइये।

उत्तर: प्लास्टिक अपशिष्ट (Plastic Wastes): प्लास्टिक हमारे जीवन के लगभग सभी पहलुओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। प्लास्टिक का उपयोग रोजमर्रा के उत्पादों जैसे पेय पदार्थों के पात्रों, घरेलू वस्तुओं तथा फर्नीचर के निर्माण में किया जाता है। प्लास्टिक नगरपालिकीय ठोस अपशिष्ट (एम.एस. डब्लू.) धारा का भी तेजी से उभरता भाग है। प्लास्टिकों की सबसे बड़ी श्रेणी/मात्रा पात्रों तथा पैकेजिंग (जैसे पेय पदार्थ की बोतलों, ढक्कनों, शैम्पू आदि की बोतलों) में पाई जाती है, लेकिन इसका उपयोग मजबूत/टिकाऊ उत्पादों (जैसे बिजली के उपकरणों, फर्नीचर) तथा गैर-मजबूत वस्तुओं (जैसे डायपर, रद्दी के थैलों, प्यालों, बर्तनों तथा चिकित्सीय वस्तुओं में भी किया जाता है। प्लास्टिक का उपयोग स्वचालित वाहनों में भी किया जाता है। पोलीस्टीरीन, पोलीएथिलीन, पी.वी.सी. आदि प्लास्टिक अपशिष्ट के कुछ रूप हैं।

प्रश्न 9. मृदा प्रदूषण क्या है? समझाइए।

उत्तर: मृदा प्रदूषण (Soil Pollution): सभी प्राथमिक उपभोक्ता (शाकाहारी जीव) अपना भोजन मृदा (मिट्टी) के द्वारा प्राप्त करते हैं, क्योंकि मृदा में पाये जाने वाले खनिजों की वजह से फसल का निर्माण होता है जोकि सामान्य जनसंख्या का भरण-पोषण करने में पर्याप्त है, परन्तु तीव्रतम बढ़ती जनसंख्या एवं प्रदूषण के चलते मृदा इस अतिरिक्त जनसंख्या के लिए खाद्यान्न का निर्माण नहीं कर पाती। इस समस्या का हल करने हेतु कृषक रसायनिक खादों का, कीटनाशकों का इस्तेमाल करते हैं जिससे एक ओर खाद्यान्न की मात्रा तो बढ़ जाती है, परन्तु दूसरी ओर मृदा में कई प्रकार के हानिकारक अवयव बढ़ जाते हैं, जो सीधे तौर पर मृदा से उपजित खाद्यान्नों की गुणवत्ता पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं–

"रसायनिक खादों, कीटनाशकों के अत्यधिक प्रयोग से वनस्पति-नाशकों, ठोस एवं द्रव अपशिष्टों से मृदा के सामान्य संघटन में आये बदलाव मृदा प्रदूषण कहलाते हैं।"

प्रश्न 10. मृदा प्रदूषण के मुख्य कारण क्या है?

उत्तर: मृदा प्रदूषण के मुख्य कारण निम्नलिखित हैं–

1. कचरा, यह सूखी साग-सब्जी, सूखी घास, धूल, राख, कागज, मछली, सड़ा मांस, धातु, काँच, टीन के डिब्बे, प्लास्टिक, जल, अधजली लकड़ी गोबर आदि हो सकता है। प्रत्येक जगह इस कचरे के निस्तारण की समुचित व्यवस्था न होने के कारण हमारे देश में इसको कहीं भी फेंक दिया जाता है। नगरपालिका व महापालिका द्वारा जो प्रयत्न इस सम्बन्ध में किए गए हैं, वे पर्याप्त नहीं हैं।
2. औद्योगिक व्यर्थ पदार्थों का निस्तारण न करना तथा पृथ्वी पर फेंक देना।
3. मनुष्य तथा जीव-जन्तुओं के मल-मूत्र का उचित निस्तारण न होना।
4. पेड़-पौधों पर पीड़कनाशी, खरपतवारनाशी, कीटनाशी आदि को छिड़कते समय इन रसायनों का पृथ्वी पर गिरना।
5. नाभिकीय विस्फोट, अनुसन्धान के फलस्वरूप रेडियाधर्मी पदार्थों का पृथ्वी पर गिरना।
6. जमीन पर कचरा, अस्पतालों के व्यर्थ पदार्थों को एकत्रित करके आग लगाना।
7. निचली जमीन या गड्ढों को कूड़ा-करकट आदि से भरना।
8. कम्पोस्ट खाद को बनाते समय कूड़ा-करकट, कचरा आदि को एकत्रित किया जाता है। इससे भी भूमि प्रदूषण का खतरा है।

प्रश्न 11. मृदा प्रदूषण कितने प्रकार का होता है?

उत्तर: मृदा प्रदूषण के प्रमुख प्रकार निम्नलिखित हैं–

(1) जैविक प्रदूषण, (2) रेडियोधर्मी प्रदूषण तथा (3) रासायनिक प्रदूषण।

1. जैविक प्रदूषण: जैविक मृदा प्रदूषण अत्यन्त हानिकारक है। इससे अनेक बीमारियाँ होने का खतरा हो सकता है।

2. रेडियोधर्मी प्रदूषण: नाभिकीय विस्फोटों, नाभिकीय रिएक्टरों, अनुसन्धानशालाओं से निकलने वाले विकिरण जीवों को हानि पहुँचा सकते हैं। Sr 90 तथा Cs 137 (स्ट्रॉन्शियम तथा सीजियम के समस्थानिक) बहुत हानिकारक होते हैं जिनका

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

अर्द्धजीवन 28 तथा 30 वर्ष है। ये बहुत अधिक समय तक मृदा में रहते हैं। कुछ पौधे इनको मृदा से अवशोषित कर लेते हैं जिससे उर्वरता की हानि होती है।

3. रसायनिक प्रदूषण: अधिक जनसंख्या के कारण मनुष्य को उत्पादन बढ़ाने में अधिक कृषि सम्बन्धी रसायनों का प्रयोग करना पड़ रहा है। DDT, लेड तथा मरकरी इस प्रकार के रसायन हैं जो मनुष्य, जीव-जन्तुओं तथा पौधों को हानि पहुँचाते हैं। ऐल्ड्रिन, आर्सेनिक यौगिकों का भी प्रयोग कृषि में किया जाता है। ये बहुत विषैले होते हैं, इनका अत्यन्त सावधानी से प्रयोग करना चाहिए। कुछ रसायन जिनका जैविक निम्नीकरण नहीं हो सकता है, वे खाद्य श्रृंखला के माध्यम से मनुष्य तथा पौधों में प्रवेश कर जाते हैं। कीटनाशकों, खरपतवारनाशकों तथा पीड़कनाशकों का आजकल अधिकता से प्रयोग हो रहा है। फसलों पर छिड़काव के समय इसकी कुछ मात्रा भूमि पर भी गिरती है जिससे मृदा प्रदूषण होता है।

प्रश्न 12. मृदा प्रदूषण को रोकने के लिए क्या उपाय है? बताइऐ।

उत्तर: मृदा प्रदूषण को रोकने के उपाय निम्नलिखित हैं–

1. नियमित रूप से नगरपालिका द्वारा कूड़े-कचरे आदि का भली प्रकार निस्तारण होना चाहिए।
2. उद्योगों से निकलने वाले पदार्थों को निस्तारण ठीक प्रकार से होना चाहिए। कागज, लकड़ी, कपड़ा तथा रसायनिक पदार्थों को इधर-उधर मृदा में नहीं फेंकना चाहिए। उद्योगों आदि में प्रदूषण निरोधक यन्त्र लगाए जाने चाहिए।
3. प्रदूषित जल मृदा में एकत्र नहीं करना चाहिए।
4. काँच, धातु के टुकड़े, टीन आदि के निस्तारण का उचित प्रबन्ध करना चाहिए।
5. कीटनाशी का कम-से-कम प्रयोग होना चाहिए तथा मृदा में नाभिकीय विस्फोट नहीं करने चाहिए।

प्रश्न 13. मृदा प्रदूषण के स्त्रोत कौन-कौन से हैं? बताइए तथा प्रभाव को समझाइए।

उत्तर: मृदा प्रदूषण के स्त्रोत:

- अत्यधिक कीटनाशक एवं खादों के इस्तेमाल से मृदा विषाक्त होती है।
- औद्योगिक इकाइयों से निकलता कूड़ा-करकट (अपशिष्ट) जमीन पर फेंकना।
- ठोस अपशिष्ट पदार्थों के निकास द्वारा जैसे कूड़ा और रेडियोएक्टिव पदार्थों का नाभिकीय इकाइयों से निकलना।
- शहरीकरण का बढ़ना।
- गैर-वैज्ञानिक खनन।
- आकस्मिक प्रदूषण/स्राव

मृदा प्रदूषण के प्रभाव: गंदा पानी एवं औद्योगिक अपशिष्ट मृदा को दूषित करते हैं एवं मानव स्वास्थ्य पर भी प्रभाव डालते हैं। विभिन्न प्रकार के आयन जैसे अम्ल, कीटनाशक, फफूँदी, भारी धातु इत्यादि औद्योगिक कचड़े मृदा की उर्वरता को प्रभावित करते हैं। जिसकी वजह से भौतिक, रसायनिक व जैविक गुणों में परिवर्तन आता है। कुछ रेडियो समस्थानिक शरीर में आवश्यक तत्वों को स्थानान्तरण कर देते हैं जिसके कारण असामान्य परिस्थिति उत्पन्न हो जाती है।

प्रश्न 14. ठोस अपशिष्ट प्रबन्धनों के उद्देश्यों को बताइए।

उत्तर: ठोस अपशिष्ट प्रबन्धन का उद्देश्य: ठोस अपशिष्ट प्रबन्धन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं–

1. इसका उद्देश्य एक संतुलित ठोस अपशिष्ट प्रबन्धन की व्यवस्था करना है जो नियामक जरूरतों को अनुसरण करते समय, समुदाय को लाभ पहुँचाता है।
2. यह पुन: चक्रण की मात्रा बढ़ाकर, सड़ने वाले पदार्थों की मात्रा को कम करता है।
3. यह सक्षम (कुशल) एवं आर्थिक अपशिष्टों को एकत्रित करना, पुन: चक्रण, नष्ट करने वाली (अपशिष्टों को) सेवाएं प्रदान करता है।
4. यह स्वच्छ अपशिष्टों को नष्ट करने के लिए सबसे अच्छी आर्थिक रूप से एवं पर्यावरणीय रूप से सुविधाएं प्रदान करता है।
5. यह आन्तरिक सुधार प्रक्रिया के लिए उच्च ज्ञान एवं प्रवीण श्रमिकों को काम करने के लिए रखता है।
6. जागरूकता को बढ़ावा देकर, अच्छी कार्य प्रणाली द्वारा, मजबूत श्रमिक प्रदान करके, ग्राहक सेवाओं को सुधारता है।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

7. आपदा या आपातकाल द्वारा उत्पन्न अपशिष्टों को संभालने के लिए सहकारी/सहयोगी समझौते विकसित करता है।

प्रश्न 15. ठोस अपशिष्ट के गुणों (Solid Waste Characterization) को समझाइये।

उत्तर: ठोस अपशिष्ट के गुण (Solid Waste Characterization): ठोस अपशिष्टों के भौतिक और रसायनिक गुण औद्योगिकरण और शहरीकरण, सामाजिक प्रथा, क्षेत्रों की स्थिति, ठोस अपशिष्टों के विभिन्न स्त्रोत और प्रकार के कारण भिन्न होते हैं। लैंडफील में जमा किये गये अपशिष्ट की प्रकृति गैस और कूड़ा उत्पादन और संगठन नष्ट होने वाले घटकों के तुलनात्मक अनुपात ऊर्जा की मात्रा, नमी की मात्रा और घनत्व को प्रभावित करती है।

1. फिजिकल कॉम्पोजिशन: उपकरणों के चयन, संकलन और सुविधाओं में, स्त्रोतों का आकलन करने में, विनाश-सुविधाओं के ढाँचा और विश्लेषण में, ठोस अपशिष्टों के भौतिक संगठन पर सूचना और आंकड़ा महत्वपूर्ण है। अपशिष्ट संगठन, अपशिष्ट-कण का आकार, आर्द्रता परिमाण, ऊर्जा परिमाण, अपशिष्ट घनत्व, ताप और pH महत्वपूर्ण होते हैं, क्योंकि वे परिमाण और अपशिष्ट के कमी की दर को प्रभावित करता है। इन सबकी गणना ठोस अपशिष्ट के घटकों के आधार पर किया जाता है।

2. आर्द्रता परिमाण: ठोस अपशिष्ट का परिमाण सामान्यत: आर्द्रता के भार को गीले अथवा सूखे पदार्थ के प्रति इकाई के रूप में व्यक्त किया जाता है। माप के गीले भार विधि में, एक नमूने में आर्द्रता को पदार्थ के गीले-भार की प्रतिशत के रूप में व्यक्त किया जाता है। सूखे-भार विधि में, इसे पदार्थ के सूखे-भार की प्रतिशत के रूप में व्यक्त किया जाता है। समीकरण रूप में, गीले भार की आर्द्रता परिमाण निम्नवत् व्यक्त की गयी है-

$$\text{आर्द्रता परिमाण प्रतिशत (\%)} = \left(\frac{a-b}{a}\right)\times 100$$

जहाँ, a = नमूने का प्रारम्भिक भार

b = सूखने के बाद नमूने का भार

3. घनत्व: जल का कुल भार और आयतन का आंकलन करने के लिए घनत्व आंकड़ा की आवश्यकता होती है जिसे व्यवस्थित किया जाना चाहिए। दूसरे, शब्दों में, कुल द्रव्यमान और आयतन के अनुपात को घनत्व कहते हैं। ठोस अपशिष्ट का घनत्व 150 किग्रा./मी^{3} से 800 किग्रा./मी^{3} तक परिवर्तित होता है। यह ठोस के संगठन व डिग्री पर निर्भर करता है।

4. ऊर्जा परिमाण : ज्ञात हुआ है कि क्यूनिसिपल ठोस अपशिष्ट में लगभग 50% जलने योग्य द्रव्य है। ठोस अपशिष्ट का औसत कैलोरीफीकमान 900 किलो कैलोरी/किग्रा. से 1800 किलो कैलोरी/किग्रा. के बीच होता है।

5. कण का आकार और आकार-वितरण: ठोस अपशिष्टों में घटक पदार्थों के आकार व आकार वितरण पदार्थों के पुन: प्राप्ति में आवश्यक भूमिका निभाते हैं। आकार का वितरण यांत्रिक साधनों की सहायता से किया जाता है। जैसे ट्रोमेल स्क्रीन और मैग्नेटिक सेपेरटरस। अपशिष्ट घटकों के आकार को एक या एक से अधिक निम्न विधियों द्वारा परिभाषित किया जा सकता है।

$$S_C = l$$

$$S_C = \left(\frac{l+w}{2}\right)$$

$$S_C = \left(\frac{l+w+h}{3}\right)$$

$$S_C = (l\times w\times h)^{\frac{1}{3}}$$

$$S_C = (l\times w)^{\frac{1}{2}}$$

जहाँ, S_C = घटक का आकार (मिमी. में)

L = लम्बाई

W = चौड़ाई (मिमी. में)

H = ऊँचाई (मिमी. में)

श्रेडींग (टुकड़ों को काटना)का प्रयोग बड़े आकार के होने के कारण कण के आकार को नियंत्रित करने के लिए किया जाता है। श्रेडींग सतह के क्षेत्रफल व आयतन के अनुपात को बढ़ा देता है और पोटेन्शियल को घटा देता है।

कण का आकार अपशिष्ट पैकिंग घनत्वों और कण-आकार को श्रेडींग को कम करके बढ़ा देता है। यह जैव ईंधन के

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

उत्पादन को बढ़ा देता है, बढ़े हुए पृष्ठ क्षेत्रफल के द्वारा जो बैक्टीरिया द्वारा घटाने में उपलब्ध होता है।

प्रश्न 16. अस्पताल अपशिष्ट से आप क्या समझते हैं? समझाइये तथा निराकरण के उपाय बताइये।

उत्तर: अस्पताल अपशिष्ट (Hospital Waste): प्राय: ऐसा देखने में मिलता है कि अस्पताल, नर्सिंग होम और पैथोलॉजी सेंटर से बायो मेडिकल वेस्ट (waste) ज्यादा निकलते हैं, मगर यहां का स्टाफ इसे लेकर गंभीर नहीं होता है। कई बार ये भी देखने में आता है कि इन स्टाफ को इस तरह का वेस्ट (waste) रखने के बारे में ठीक तरह से जानकारी भी नहीं होती है। इस वजह से वह उसे प्रॉपर जगह पर नहीं रखते हैं। हॉस्पिटल वेस्ट/अस्पताल से निकलने वाले अपशिष्ट (बेकार पदार्थ) का सही प्रकार से निवारण करना आवश्यक होता है, नहीं तो यह कई प्रकार के संक्रामक और असंक्रामक रोग फैला सकते हैं जिससे अस्पताल के कर्मचारियों, रोगियों और पूरे समाज को नुकसान होता है।

भारत सरकार ने Biomedical Waste (Management and Handling) Rules 1998 पारित किया है जो कि उन सभी लोगों पर लागू होता है जो ऐसे बायो-मेडिकल कचरे को इकट्ठा , उत्पन्न, प्राप्त, ट्रांसपोर्ट तथा डिस्पोस करते हैं या उनसे संबंधित डील करते हैं। यह नियम अस्पताल, नर्सिंग होम, क्लीनिक, डिस्पेंसरी, पशु संस्थान, पैथोलोजिकल लैब और ब्लड बैंक पर लागू होता है। ऐसे संस्थानों के लिए बायो मेडिकल वेस्ट/मेडिकल कचरे को ट्रीट करने के लिए अपने संस्थानों में मशीनें, और आधुनिक उपकरण लगाने चाहिए या उनके पास इसके निराकरण के लिए उचित व्यवस्था का सर्टिफिकेट होना चाहिए। अगर किसी के पास यह सर्टिफिकेट नहीं मिलता है तो हॉस्पिटल का रजिस्ट्रेशन रद्द किया जा सकता है।

हॉस्पिटल वेस्ट के सुरक्षित और प्रभावी निराकरण के कुछ उपाय होते हैं। जैसे–सेग्रीगेशन, डिस् इन्फेक्शन, स्टोरेजज, ट्रांसपोर्ट या फाइनल डिस्पोजल।

सेग्रीगेशन: इस प्रक्रिया में अलग-अलग अपशिष्ट पदार्थों को अलग-अलग रंगों के थैलों में डाला जाता है, जिससे सबका अलग-अलग तरह से निस्तारण हो सके।

पीला: ऐसे रंग के थैलों में सर्जरी में कटे शरीर के भाग, लैब के सैम्पल, खून से युक्त मेडिकल की सामग्री (रुई/पट्टी), एक्सपेरिमेंट में उपयोग किये गए जानवरों के अंग डाले जाते हैं, जिनका अन्ततः जलाया जाता है या बहुत गहराई में दबा देते हैं।

लाल: ऐसे रंग के थैलों में दस्ताने, कैथेटर, आई.वी.सेट एवं कल्चर प्लेट को डाला जाता है। इनको पहले काटते हैं फिर ऑटो क्लैव से डिस् इन्फेक्ट करते हैं, उसके बाद जला देते हैं।

नीला या सफेद बैग: ऐसे रंग के थैलों या बैग में गत्ते के डिब्बे, प्लास्टिक के बैग जिनमें सुई एवं कांच के टुकड़े या चाकू रखा गया हो उनको डाला जाता है। इनको भी काट कर केमिकल द्वारा ट्रीट करते हैं फिर या तो जलाते हैं या गहराई में दफनाते हैं।

काला: ऐसे रंग के थैलों में हानिकारक और बेकार दवाइयां, कीटनाशक पदार्थ और जली हुई राख डाली जाती है। इसको किसी गहरे गड्ढे में डालकर ऊपर से मिट्टी डाल देते हैं।

अस्पताल में प्रयुक्त होने वाला द्रव: इनको डिस् इन्फेक्ट करके नालियों में बहा दिया जाता है।

डिस् इन्फेक्शन–इस प्रकिया द्वारा हानिकारक कीटाणुओं को हटा दिया जाता है।

थर्मल ऑटोक्लैव: इससे गर्मी द्वारा कीटाणु को नष्ट करते हैं।

केमिकल: इसमें फॉर्मएल्डीहाइड, ब्लीचिंग पाउडर, एथिलीन आक्साइड से कीटाणु नष्ट करते हैं।

रेडीएशन: अल्ट्रा वायलेट किरणों द्वारा कीटाणुओं का नाश करते हैं।

स्टोरेज–जब तक थैले पूरी तरह भर न जाएँ तब तक अपशिष्ट पदार्थों को निश्चित जगहों पर थैलों में भरकर रखा जाता है। इन थैलों पर नाम लिखते हैं और इसके लिए सिक्यूरिटी गार्ड रखा जाता है ताकि कोई बाहरी व्यक्ति या कूड़ा उठाने वाला उसे गलती से न ले जाए। बाद में अस्पताल की निश्चित गाड़ियों में रखकर इन्हें जलाने या दफनाने भेजा जाता है।

ट्रांसपोर्ट–अपशिष्ट पदार्थों को अस्पताल के अंदर और बाहर ले जाया जाता है। जो कर्मचारी ये काम करते हैं वे अपने हाथ में दस्ताने पहनते हैं और ये ध्यान रखते हैं कि ये पदार्थ ट्राली से बाहर न फैलें। ऐसी गाड़ियों में साधारण कूड़ा नहीं रखा जाता है।

फाइनल डिस्पोज़ल–जो पदार्थ संक्रामक होते हैं उन्हें जलाया जाता है जो संक्रामक नहीं होते हैं जैसे कागज उन्हें दोबारा रीसाइकिल करके उपयोग कर लेते हैं।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

आजकल बड़े शहरों में कुछ एजेंसियां हर माह अस्पतालों से बायो मेडिकल वेस्ट कलेक्ट करके ले जाती है और उसी हिसाब से उनसे पैसे लेती है। इन एजेंसियों ने इस तरह के वेस्ट को ट्रीट करने के लिए अलग से प्लांट लगा रखे हैं। इन सभी को वहीं पर इकट्ठा करने के बाद उसे ट्रीट किया जाता है।

प्रश्न 17. कृषि (Agriculture) अपशिष्ट से आप क्या समझते है? तथा कृषि अपशिष्ट के प्रकार बताइये।

उत्तर: कृषि अपशिष्ट: खेत, खलिहान और घर से निकलने वाला कचरा किसानों के लिए बेहद उपयोगी साबित हो सकता है। कृषि कचरे से बनने वाला वर्मी कम्पोस्ट न केवल प्रदूषण को नियंत्रित करता है बल्कि मृदा के स्वास्थ्य को भी सुरक्षित रखता है। कुटीर उद्योग के रूप में इसका इस्तेमाल किसानों को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने में भी मददगार है। फसल की पैदावार बढ़ाने के लिए रसायनिक उर्वरकों के अनियंत्रित प्रयोग से मृदा स्वास्थ्य एवं मिट्टी में मौजूद लाभदायक जीवाणु की संख्या में कमी आई है। इसकी कमी के चलते मृदा की उत्पादन शक्ति भी कम हुई है। मृदा के स्वास्थ्य को बनाए रखने के साथ उत्पादन बढ़ाने के लिए जैविक खाद के इस्तेमाल को बढ़ावा देना आवश्यक है।

कृषि अपशिष्ट के प्रकार:

1. कृषि अवशेष: पुआल, भूसा, गन्ने की खोई, पत्तियां, खरपतवार, फूस, फसलों के डंठल, मक्का, कुड, छिलका, मक्का पेड़, बायोगैस अवशेष व गोबर आदि।

2. घरेलू अवशेष: घर के कचरे, बची हुई सब्जियां, खाद्य पदार्थ, फलों व सब्जियों के छिलके, भोजन के अवशेष आदि।

3. व्यर्थ पदार्थ: चीनी, धान, वनस्पति तेल मिल, शराब उद्योग, बीज संयंत्र व खाद्य प्रसंस्करण उद्योग के अपशिष्ट पदार्थ।

प्रश्न 18. ई-अपशिष्ट (ई-कचरे)/(E-waste) को संक्षिप्त में समझाइये।

उत्तर: ई-अपशिष्ट (ई-कचरे): ई-अपशिष्ट एक सामान्य शब्द के रूप में प्रयोग किया जाता है जो विद्युत् चालित घटकों से युक्त सभी प्रकार के कचरे से जुड़ा होता है। संक्षिप्त रूप में ई-अपशिष्ट या अपशिष्ट इलेक्ट्रिकल और इलेक्ट्रॉनिक उपकरण वह शब्द है जिसका प्रयोग पुराने, खत्म हो चुके या बिजली का उपयोग कर रहे उपयोगहीन उपकरणों का वर्णन करने के लिए किया जाता है। इसमें कम्प्यूटर, उपभोक्ता इलेक्ट्रानिक्स, फ्रिज आदि शामिल हैं जिसे उनके मूल प्रयोगकर्ताओं द्वारा त्याग दिया जाता है। बहुमूल्य सामग्री के साथ-साथ खतरनाक सामग्री दोनों में ई-अपशिष्ट शामिल है जिसे विशेष निगरानी और पुनर्चक्रण के तरीकों की आवश्यकता होती है।

संक्षिप्त रूप में ई-अपशिष्ट या अपशिष्ट इलेक्ट्रिकल और इलेक्ट्रॉनिक उपकरण का वह शब्द है जिसका प्रयोग पुराने, खत्म हो चुके या बिजली का उपयोग कर रहे उपयोगहीन उपकरणों का वर्णन करने के लिए किया जाता है। इसमें कम्प्यूटर, उपभोक्ता इलेक्ट्रॉनिक्स, फ्रिज आदि शामिल हैं जिसे उनके मूल प्रयोगकर्ताओं द्वारा त्याग दिया गया है।

इलेक्ट्रॉनिक अपशिष्ट, ई-अपशिष्ट, ई-कबाड़ या अपशिष्ट इलेक्ट्रिकल और इलेक्ट्रॉनिक उपकरण (डब्ल्यूईईई) उपयोगहीन (त्याग किये गये) इलेक्ट्रिकल या इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का वर्णन करते हैं। वैज्ञानिकों में इस बात पर एक आम सहमति नहीं है कि क्या इस शब्द का प्रयोग पुन: विक्रय, पुन: उपयोग और नवीनीकरण उद्योगों के लिए प्रयोग करना चाहिए या फिर केवल उस उत्पाद के लिए जो अपने इच्छित उद्देश्य के लिए प्रयुक्त नहीं होता है।

विकासशील देशों में इलेक्ट्रॉनिक अपशिष्ट का अनौपचारिक प्रसंस्करण गंभीर स्वास्थ्य और प्रदूषण की समस्याओं का कारण बन सकता है, हालांकि इन देशों में भी इलेक्ट्रॉनिक्स के पुन: उपयोग और मरम्मत की अधिक सम्भावना है।

सभी इलेक्ट्रॉनिक स्क्रैप आइटम, जैसे सीआरटी के रूप में, सीसा, कैडमियम, बेरिलियम या ब्रोमिनाटेड लौ पारिदर्शक दूषित पदार्थों में शामिल हैं। यहां तक कि उन्नत देश, रीसाइक्लिंग और ई-कचरे के संचालन में असुरक्षित जोखिम से बचने तथा सामग्री के निक्षालन के लिए सही देखभाल की जानी चाहिए। जैसे- अपशिष्ट भराव क्षेत्रों से धातु और भस्मक राख के रूप में।

कोई भी उपकरण जो बिजली से चलते हैं यदि उनका जिम्मेदार तरीके से खात्मा किया जाए तो उनमें पर्यावरण को नुकसान पहुंचाने की क्षमता होती है। बिजली और इलेक्ट्रॉनिक कचरे की सामान्य वस्तुएं इस प्रकार हैं-

- बड़े घरेलू उपकरण (रेफ्रिजरेटर/फ्रीजर, वाशिंग मशीन, डिशवाशर)
- लघु उपकरण (टोस्टर, कॉफी मेकर, ईस्त्री, हेयरड्रायर)

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

- सूचना प्रौद्योगिकी (आईटी) और दूरसंचार उपकरण (पर्सनल कम्प्यूटर, टेलीफोन, मोबाइल फोन, लैपटॉप, प्रिंटर, स्कैनर, फोटोकॉपी)
- उपभोक्ता उपकरण (टीवी, स्टीरियो उपकरण, बिजली के टूथब्रश)
- प्रकाश उपकरण (फ्लोरोसेंट लैम्प)
- इलेक्ट्रिकल और इलेक्ट्रॉनिक उपकरण (हाथ वाले ड्रिल्स, आरी, स्क्रूड्राईवर)
- खिलौने, लेशर और खेल उपकरण
- मेडिकल उपकरणों की प्रणाली (सभी प्रत्यारोपित और संक्रमित उत्पादों के अपवाद के साथ)

प्रश्न 19. मानव ठोस अपशिष्ट (Human Solid Waste) कौन-कौन से हैं? बताइये। उनका निराकरण भी बताइए।

उत्तर: मानव ठोस अपशिष्ट: वे सभी अपशिष्ट पदार्थ जो कूड़े-कचरे में फेंक जाते हैं उन्हें ठोस अपशिष्ट (मानव ठोस अपशिष्ट) कहते हैं। मुख्य ठोस अपशिष्ट निम्न हैं–

वे सभी वस्तुएं जो कार्यालयों, विद्यालयों, घरों एवं भण्डारघरों द्वारा कचरे के रूप में फेंकी जाती है। इनका एकत्रीकरण एवं निपटान नगरपालिका द्वारा किया जाता है उसे नगरपालिका अपशिष्ट कहते हैं। जैसे–काँच, कागज, वस्त्र, चमड़ा, धातु, प्लास्टिक आदि।

निराकरण के उपाय:

1. परम्परागत तरीका: कचरे को एकत्रित करके उसे जला दिया जाता है जिससे उसके आयतन में कमी आ जाती है।

समस्या, कमी/सीमाएं: इनसे मक्खी, मच्छर एवं चूहों के प्रजनन स्थल बन जाते है तथा ये बीमारियां फैलाते हैं।

2. नया तरीका (New Methods): कचरे के सैनेटरी गड्ढे तथा खड्ढे में डालकर उसके ऊपर रेत-मिट्टी आदि डाल देते है।

समस्या: इनसे हानिकारक रसायनों का रिसाव होता है जिससे ये भूमिगत जल को प्रदूषित करते हैं।

समाधान/हल: अपशिष्ट पदार्थों को तीन श्रेणियों में बाँटा जा सकता है।

1. जैव निम्नीकृत (अपघटनीय) (Biodegradable): जिसका अपघटन होता है जैसे– मल-मूत्र आदि पादपों एवं जीवों के अवशेष, कृषि अपशिष्ट फल, सब्जियों के छिलके आदि।

2. पुनः चक्रण योग्य (Recyclable): जिनको पुनः चक्रीत करके उपयोग में लिया जा सकता है जैसे– कागज, प्लास्टिक आदि।

3. जैव निम्नीकृत अन-अपघटनीय (Biodegradable non-decomposable): जिसका विघटन वैसे ही होता है जैसे– DDT, पारा, पॉलिथीन की थैलियां आदि जैव निम्नीकृत अपशिष्ट कम से कम उत्पन्न करते हैं।

प्रश्न 20. तलछट ठोस अपशिष्ट (Sediments Solid Waste) से आप क्या समझते हैं? इनका प्रबन्धन कैसे किया जाता है? समझाइये।

उत्तर: तलछट ठोस अपशिष्ट (Sadiments Solid Waste): तरल अपशिष्ट को आमतौर पर ग्रे पानी या काला पानी के रूप में वर्गीकृत किया जाता है।

- ग्रे पानी (ज्यादातर रसोई, उद्यान, बाथरूम, होटल, सब्जी मंडी आदि)।
- काला पानी (जिसमें शौचालय के रोगाणु होते हैं)।

अनुमान है कि ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले समुदाय को आपूर्ति किये गये पानी का लगभग 75 से 80 प्रतिशत ग्रे पानी बनता है जिसके शोधन की विधि ऐसी होनी चाहिए कि अपशिष्ट पानी रोगाणु रहित हो जाए, कीटाणुओं को पैदा न होने दे और साथ ही उसे रिसाइकिल किया जा सके अथवा पुनः प्रयोग किया जा सके।

तलछट ठोस अपशिष्टों का प्रबन्धन: इन अपशिष्टों का प्रबन्धन निम्न विधियों द्वारा किया जाता है

1. सेडीमेंटेशन
2. फ्लोटेशन
3. ग्रे पानी प्रबन्धन

1. सेडीमेंटेशन: प्राथमिक उपचार में यांत्रिक प्रक्रिया के दौरान दूषित जल को एक स्क्रीन या जाली से प्रवाहित किया जाता है, जिससे कुछ बड़े आकार के निलम्बित पदार्थ जैसे–बड़े आकार के रेशे पत्थर एवं अन्य निलम्बित कण पृथक हो जाते हैं।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

छनन के उपरान्त दूषित जल को एक बड़े टैंक में सेडीमेंटेशन के लिए रखा जाता है जिसमें लगभग पाँच मीटर गहरे बड़े टैंक में दूषित जल को छोड़ दिया जाता है। दूषित जल में उपस्थित भारी कण गुरुत्वाकर्षण के कारण नीचे बैठ जाते हैं तथा ऊपर का अपेक्षाकृत साफ जल आगे उपचार हेतु ले जाया जाता है। इस टैंक में दूषित जल को कम से कम 2-6 घण्टे तक रखा जाता है। दूषित जल में उपस्थित सूक्ष्म कणों अथवा कोलायडल कणों को पृथक करने हेतु इस जल में कुछ कोएगुलेन्ट (Coagulant) भी मिलाया जाता है ताकि अशुद्धियाँ आसानी से पृथक हो जाए।

2. फ्लोटेशन: ऐसा दूषित जल जिसमें निलम्बित कणों का घनत्व जल से कम या जल के लगभग बराबर होता है, उन्हें सेडीमेंटेशन के माध्यम से पृथक नहीं किया जा सकता, इसके लिये फ्लोटेशन की प्रक्रिया अपनायी जाती है। इस प्रक्रिया में दूषित जल को अच्छी तरह हिलाकर कुछ देर के लिये छोड़ दिया जाता है। जिससे ठोस कण जल की ऊपरी सतह पर आ जाते हैं, जहाँ से इन्हें पृथक कर लिया जाता है।

3. ग्रे पानी प्रबन्धन: ग्रामीण परिवेश में ग्रे पानी को मोटे तौर पर निम्नलिखित श्रेणियों में बांटा जा सकता है–

- घरेलू ग्रे पानी
- समुदायिक ग्रे पानी

इसलिए ग्रे पानी प्रबंधन सिस्टम दो स्तरों पर स्थापित किया जा सकता है अर्थात्

- घरेलू स्तर
- समुदायिक स्तर

गाँवों में, ज्यादातर ग्रे पानी घरेलू स्तर पर उत्पन्न होता है। जब यह पानी घर से निकल जाता है, तो यह समुदायिक ग्रे पानी बन जाता है। समुदायिक स्तर पर ग्रे पानी का प्रबंधन अधिक जटिल कार्य है।

घरेलू ग्रे पानी प्रबंधन प्रत्येक परिवार द्वारा स्रोत पर ग्रे पानी का निस्तारण अधिक उपयुक्त एवं किफायती प्रस्ताव है। ऐसा तकनीक होना चाहिए जहाँ शून्य या न्यूनतम समुदायिक अपशिष्ट हो सके। इसके निस्तारण के लिए परिवार के आसपास क्षेत्र/प्रागंण/भूमि उपलब्ध होने की जरूरत होगी।

घरेलू ग्रे पानी का निस्तारण का कार्य निम्नलिखित तीन विधियों से किया जा सकता है।

- किचन गार्डन
- लीच पिट और
- सोक पिट

किचन गार्डन:

- घरेलू स्तर पर किचन गार्डन सर्वाधिक मनपसंद विकल्प है क्योंकि गार्डन से परिवार, खाने योग्य कुछ सामग्रियां जैसे कि फल या सब्जियां प्राप्त करता है। तथा वहीं सम्भव होगा जहाँ घर के पास खुली जमीन उपलब्ध हो।
- यदि किचन गार्डन में बहाने से पूर्व ग्रे जल को साफ किया जाता है तो गार्डन अच्छी तरह से विकास करता है। बहुत सरल विधि जैसे कि सिल्ट और ग्रीस ट्रैप के माध्यम से पानी को गुजार कर यह कार्य किया जा सकता है। अपशिष्ट जल के प्रवाह से सिल्ट, ग्रीस तथा अन्य ठोस सामग्री को अलग करने की जरूरत होती है। इस प्रयोजन के लिए जरूरत के अनुसार इंटरसेप्टर टैंक या चेम्बर निर्मित किए जाते है।
- गार्डन की सिंचाई दो तरीकों से की जा सकती है। फिल्टर वाटर भूमिगत पीवीसी पाइपों के माध्यम से सीधे पौधों की जड़ों तक पहुंचेगा। इस विधि में पाइप एवं फिल्टर बेड के अनुरक्षण की जरूरत होगी।
- दूसरी विधि "सर्फेस सिंचाई" की है। यह सरल और सस्ती है तथा इसमें कम रख रखाव की जरूरत होती है। परन्तु उपज कम हो सकती है और अतिरिक्त पानी बाहर जाएगा।

सोक पिट:

- सोक पिट ग्रे जल के प्रबंधन के लिए बहुत सरल एवं सस्ता विकल्प है।
- घरेलू प्रयोजनों के लिए, तकरीबन 3 फीट की लम्बाई, 3 फीट की चौड़ाई तथा 3 फीट की गहराई में एक घनाकार पिट खोदा जाता है।
- पिट वॉल की सतह तथा पिट का बॉटम सर्फेस पानी सोखने के लिए मिट्टी का अधिक सर्फेस एरिया प्रदान करता है।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

- पिट को स्थिरता प्रदान करने के लिए तथा आने वाले पानी को उपलब्ध सर्फेस एरिया में वितरित करने के लिए पिट को निर्धारित आकार के पत्थर के टुकड़ों से भर दिया जाता है। शीर्ष पर पिट को सहायक सामग्री जैसे कि पेड़ की टहनी या बोरी आदि से ढक दिया जाता है तथा उसके ऊपर रेत बिछा दी जाती है ताकि अंदर आने वाला पानी खुला न रहे।

लीच पिट: यदि खुली जमीन की उपलब्धता कम हो तथा ग्रे जल की मात्रा अधिक हो, तो घरेलू लीच पिट उपयुक्त विकल्प हो सकता है। इसके लिए परिवार को निर्माण सम्बन्धी कुछ लागत वहन करनी पड़ती है। लीच पिट ईट से निर्मित एक गोलाकार पिट है, जिसे मधुमक्खी के छत्ते की तरह बनाया जाता है, जिसका व्यास लगभग 3 फीट होता है। पिट के लिए एक समुचित इंसेक्ट प्रूफ ढक्कन होना चाहिए। वाटर सील ट्रैप के माध्यम से पिट में पानी जाना चाहिए ताकि कीड़े ना आ सकें और न मच्छर पैदा हो सकें।

प्रश्न 21. घरेलू अपशिष्ट या घर में ठोस कचरा से आप क्या समझते हैं? इनके पृथक्करण एवं एकत्रीकरण को बताइए।

उत्तर: घरेलू अपशिष्ट का उत्पादन: अपशिष्ट उत्पादन में वे गतिविधियां शामिल हैं जिसमें सामग्रियों को बे-मूल्य के रूप में पहचाना जाता है और या तो बाहर फेंक दिया जाता है या निपटान के लिए एकत्रित किया जाता है।

नगरपालिका ठोस अपशिष्ट: इसे शहरी ठोस अपशिष्ट भी कहा जाता है, यह अपशिष्ट का एक प्रकार है जिसमें मुख्य रूप से घर का कचरा (घरेलू अपशिष्ट) और कभी-कभी वाणिज्यिक अपशिष्ट भी शामिल होता है जिसे एक दिए गए क्षेत्र में नगरपालिका एकत्रित करती है। वे या तो ठोस रूप में होते हैं या अर्ध-ठोस रूप में और आमतौर पर इसमें औद्योगिक घातक अपशिष्ट शामिल नहीं होता। अपशिष्ट कचरा शब्द, घरेलू स्त्रोतो से बचा हुआ कचरा है जिसमें ऐसी सामग्रियां शामिल है जिसे अलग नहीं किया गया है या पुनर्प्रसंस्करण के लिए भेजा नहीं गया है।

अपशिष्ट संभाल और पृथक्करण, स्त्रोत पर भंडारण और प्रसंस्करण: कचरा निपटान और पृथक्करण में वे गतिविधियां शामिल है जो कचरे के प्रबंधन से सम्बन्धित हैं, जब तक कि उन्हें भंडारण कंटेनर में एकत्र करने के लिए रख नहीं दिया जाता। संभाल के अंतर्गत एकत्रण बिंदु तक भरे हुए कंटेनरों की आवाजाही भी शामिल है। स्त्रोत पर ठोस कचरे के निपटान और भंडारण में अपशिष्ट घटकों का पृथक्करण एक महत्वपूर्ण कदम है।

एकत्रीकरण: एकत्रीकरण के कार्यात्मक तत्व में न केवल ठोस अपशिष्ट और पुनर्नवीनीकरण योग्य सामग्री का एकत्रण शामिल है, बल्कि एकत्रण के बाद इन सामग्रियों का उस स्थान तक परिवहन भी शामिल है जहां एकत्रण वाहन को खाली कर दिया जाता है। यह स्थान एक सामग्री प्रसंस्करण सुविधा, एक स्थानान्तरण स्टेशन या एक लैंडफिल निपटान स्थल हो सकता है।

पृथक्करण और प्रसंस्करण और ठोस कचरे का रूपांतरण:

साधन और सुविधाओं के प्रकार जिन्हें अब स्त्रोत पर अलग कर लिए गए अपशिष्ट पदार्थों की वसूली के लिए इस्तेमाल किया जाता है उनमें शामिल हैं सड़क किनारे का एकत्रण, गिराना और वापस केन्द्र खरीद, उस अपशिष्ट का पृथक्करण और प्रसंस्करण जिसे स्त्रोत पर पृथक कर लिया गया है और मिश्रित कचरे का पृथक्करण आमतौर पर एक माल वसूली सुविधा, स्थानान्तरण स्टेशन, दहन सुविधा और निपटान स्थलों पर होता है।

प्रश्न 22. घरेलू अपशिष्टों का निराकरण/निपटारा कैसे किया जा सकता है?

उत्तर: घरेलू अपशिष्ट का निपटान: यह अपशिष्ट निपटान का अंतिम तरीका है भूमि में गड्ढा खोदकर उसमें कचरा दबा देना या जमीन पर फैला देना, चाहे वे आवासीय अपशिष्ट हों जिन्हें एकत्रित करके सीधे भराव वाले क्षेत्र तक पहुंचाया गया हो, सामग्री वसूली सुविधाओं से अपशिष्ट सामग्री हो, ठोस अपशिष्ट के दहन के अवशेष हो, खाद या विभिन्न ठोस अपशिष्ट प्रसंस्करण सुविधाओं से युक्त अन्य पदार्थ हो। एक आधुनिक स्वच्छता लैंडफिल एक जमाव (Dump) नहीं होता है, यह एक इंजीनियरिंग सुविधा होती है जिसका इस्तेमाल बिना किसी उपद्रव या सार्वजनिक स्वास्थ्य या सुरक्षा को खतरा उत्पन्न किये (जैसे कि कीड़े के प्रजनन और भूजल के संदूषण के) बिना जमीन पर ठोस कचरे के निपटान के लिए किया जाता है।

प्राथमिकता से जिन उद्देश्यों को प्राप्त करना अत्यंत ही जरूरी है उनमें एक है– 'कचरा प्रबंधन'। कचरा प्रबंधन शहरी जीवन के लिए एक बहुत बड़ी और विकराल चुनौती है। कचरे

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

से उत्पन्न समस्याएं बढ़ती जा रही है और उसको शीघ्रता से स्थानान्तरित करने, नष्ट करने, या रीसाइक्लिंग करने, उनका उपयोग करने की तरफ समुचित चिंता नहीं दिखाई जा रही है।

समस्या की गंभीरता और जटिलता को आम नागरिक तक पहुंचाना और उनका सहयोग प्राप्त करना बहुत कठिन काम है पर इसके सिवाय कोई रास्ता भी नहीं है। कर्मचारी और नागरिक सभी सड़क, गली में कचरा फेंकते हैं या फिर नालियों में डालते हैं। नालियां अवरूद्ध हो जाती हैं तथा इससे केवल पानी ही बाहर नहीं फैलता, स्वास्थ्य के लिए भी खतरा बन जाता है।

प्रश्न 23. मल-मूत्र (Excreta Waste) अपशिष्ट को समझाइए तथा इसके निस्तारण के कुछ तरीके भी बताइए।

उत्तर: मलमूत्र अपशिष्ट (Excreta Waste): भारत में करीब 80 प्रतिशत लोग शौचालय का प्रयोग नहीं करते हैं। ग्रामीण क्षेत्र में तो 97 प्रतिशत घरों में शौचालय ही नहीं हैं। यहाँ लोग शौच के लिए खेतों, नदी या तालाब के तट पर, जंगलों में, रेल लाइन या सड़क के किनारे जाते हैं।

खेतों या अन्य खुले स्थानों में मल-मूत्र त्यागने से बीमारियाँ पैदा करने वाले कीटाणु जो मल में पनपते हैं। पानी, मिट्टी, फल-सब्जी, मक्खियों आदि के माध्यम से संक्रमित व्यक्ति से स्वस्थ व्यक्ति तक पहुँचते हैं। अतः सामुदायिक स्वास्थ्य की दृष्टि से सही ढंग से मल निस्तारण अति महत्वपूर्ण है।

सामाजिक दृष्टि से भी देखा जाए तो हम पाते हैं कि लोगों को और विशेष रूप से महिलाओं को शौचालय न होने से बहुत सी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। सर्वप्रथम जंगल कटने के कारण शौच के लिए एकान्त स्थान नहीं मिल पाता है। अतः स्त्रियाँ सूर्योदय के बाद ही शौच के लिए जा पाती है। कई बार शौच लगने पर न जाने के कारण कब्ज, अपच जैसी स्वास्थ्य समस्याएँ जन्म ले लेती हैं। अंधेरे में बाहर शौच जाने पर साँप के डसने, कीड़े के काटने और ठोकर खाकर गिरने से चोट लगने का भय हमेशा बना रहता है।

असुरक्षित ढंग से मल निस्तारण:

सुरक्षित ढंग से मल निस्तारण के लिए निम्न बातों पर ध्यान देना होगा।

1. मल, मक्खियों, कीड़े-मकोड़ों या अन्य जानवरों की पहुँच के बाहर हो।
2. मल द्वारा जल का स्रोत दूषित न हो।
3. मल निस्तारण का तरीका सरल व सस्ता हो।

मल निस्तारण के कुछ तरीके–

मल निस्तारण के विभिन्न तरीके हैं। लेकिन सब तरीके सब स्थानों के लिए उपयुक्त नहीं है।

(क) ट्रैन्च लैट्रीन (खाई नुमा शौचालय):

एक छिछला गड्ढा किया जाता है जोकि 2-3 फीट गहरा और 3-4 फीट चौड़ा होता है। यह गड्ढा आयताकार, वर्गाकार या वृत्ताकार हो सकता है। गड्ढे के ऊपर लकड़ी का एक छेद वाला पटरा बिछा दिया जाता है। इस गड्ढे में मल त्यागने के उपरान्त मिट्टी, घास या सूखे पत्ते डाल दिये जाते हैं। हर 5-6 महीने के उपरान्त ट्रैन्च लैट्रीन भर जाने के कारण इसका स्थान बदलना पड़ता है। खुल में शौच करने से बेहतर ट्रैन्च लैट्रीन का प्रयोग किया जाता है। पर इसकी अपनी बहुत सी सीमाएं हैं।

उदाहरण के तौर पर–

1. हर छः महीने पर शौचालय का स्थान बदलना सम्भव नहीं है, विशेष रूप से जहाँ स्थान उपलब्ध न हो।
2. जिन स्थानों में भूमिगत जल का स्तर ऊँचा होता है वहाँ शौचालय के ढह जाने का भय बना रहता है।
3. इन गड्ढों में मच्छर व मक्खियों को पनपने से रोकना सम्भव नहीं है।
4. पथरीली जमीन में ऐसे गड्ढे खोदने में काफी खर्च आता है।

(ख) बोर होल शौचालय:

एक 15 से 25 फुट गहरा गोल गड्ढा जिसका व्यास डेढ़ फुट हो आगर (Auger) से खोदा जाता है। जमीन को ढहने से रोकने के लिए बाँस या मिट्टी का छल्ला लगाते हैं। इसके ऊपर एक 36 इंच व्यास की 2 इंच मोटाई की सीमेन्ट की गोल बैठक लगा दी जाती है। यह 5-7 सदस्यों के परिवार के लिए एक साल तक अच्छी तरह काम दे सकता है। इस शौचालय का प्रयोग मेला या कैम्प में किया जा सकता है, जहाँ की बहुत समय तक स्थायी शौचालय की आवश्यकता नहीं है।

यह विधि सरल एवं कम खर्चीली तो है लेकिन बहुत उपयुक्त नहीं है क्योंकि

1. इसके गिरने की सम्भावना बनी रहती है।
2. भूमिगत जल भी प्रदूषित हो सकता है।
3. इसमें मक्खियाँ और मच्छर भी पनप सकते हैं।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

(ग) वाटर सील शौचालय

इस शौचालय के मुख्य अंग निम्नलिखित हैं

1. पैन
2. ट्रैप
3. नाली
4. गड्ढा

(1) शौचालय का पैन

शौचालय के लिए एक 17 इंच लम्बा, आगे से 5 इंच चौड़ा और पीछे की ओर 13 इंच चौड़ा पैन लें। पैन में 25 डिग्री की ढाल हो ताकि मैला सरक कर ट्रैप में आसानी से गिरे और अधिक पानी का प्रयोग न करना पड़े।

(2) वाटर ट्रैप

पैन के साथ ट्रैप जोड़ते हैं। इस ट्रैप में तीन चौथाई इंच पानी रहता है। ट्रैप में जितना अधिक सील हो उतना ही अधिक पानी फ्लश करने के लिए डालना पड़ता है। वाटर सील ट्रैप बदबू फैलने एवं मक्खियों को पनपने से रोकता है।

(3) नाली

ट्रैप को गड्ढे से जोड़ने के लिए ईंट की नाली बनाएँ जिसे गोलाई में सीमेंट से प्लास्टर कर दें। यह Y के आकार की नाली दो गड्ढों में जाकर खुलती है।

(4) गड्ढा

इस शौचालय में दो गड्ढे होते हैं। प्रत्येक गड्ढे का व्यास एक मीटर और गहराई 1 मीटर होनी चाहिए। गोल गड्ढे चौरस या लम्बे चौरस गड्ढों से अधिक टिकाऊ होते हैं। दोनों गड्ढों के बीच में कम से कम एक मीटर की दूरी होनी चाहिए। यदि स्थान के अभाव में यह सम्भव नहीं है तो दोनों गड्ढों के बीच अछेदनीय अवरोध बना देना चाहिए।

गड्ढों को ढहने से रोकने के लिए ईंटों से लाईनिंग करवाना आवश्यक है। लाइनिंग में 50 मिमी. चौड़े छेद होने चाहिए जोकि ईंटों को 50 मिमी. की दूरी पर लगाकर किया जा सकता है। ध्यान रहे गड्ढे में जहाँ नाली खुलती है वहाँ छेद न हो।

प्रश्न 24. सेप्टिक टैंक शौचालय एवं सीवेज को समझाइये।

उत्तर: सेप्टिक टैंक शौचालय: अधिकांश शहरों में जहाँ भूमिगत गटर नहीं है वहाँ शौचालयों, अस्पतालों, स्कूलों, रसाईघरों आदि का मैला पानी सेप्टिक टैंक में शुद्ध किया जाता है। 15 प्रतिशत शहरी आबादी को ही यह सुविधा प्राप्त है।

सेप्टिक टैंक बड़े पैमाने पर बनाए जाते हैं। इसके लिए पानी अधिक मात्रा में चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति पर 20 से 25 गैलन पानी प्रतिदिन प्रयोग किया जाता है। इसमें प्रथम चरण में मैला पानी का रसायनिक और एन-एरोबिक-प्रक्रिया से शुद्धिकरण होता है। दूसरे चरण में सेप्टिक टैंक के बाहर ऑक्सीकरण की प्रक्रिया होती है। उपरोक्त दो प्रक्रियाएँ मैला पानी के शुद्धिकरण में मदद करते हैं।

मल निस्तारण के इस तरीके की कुछ सीमाएं हैं-

1. यह काफी खर्चीला तरीका है।
2. इसके लिए अधिक स्थान की आवश्यकता पड़ती है।
3. समय-समय पर इसकी सफाई करवानी पड़ती है, जिसके लिए सफाई कर्मचारी को बुलाना पड़ता है।
4. गैस पाइप से अक्सर दुर्गन्ध आती है।
5. इसमें अधिक पानी की आवश्यकता पड़ती है।

सीवेज: सम्पूर्ण देश के करीब 200 से अधिक शहरों के कुछ ही क्षेत्रों में मल निष्पादन (निपटान) की यह सुविधा उपलब्ध है। इस प्रणाली के अन्तर्गत शहर में आपस में जुड़ी हुई भूमिगत नालियों का जाल बिछा होता है। घर के अन्दर का सीवर गली के सीवर से जोड़ दिया जाता है। गली के सीवर मुख्य सड़कों के सीवर से जाकर मिलते हैं। इस प्रकार सारे शहर का गन्दा पानी एक स्थान पर पहुँचता है जहाँ कि वाटर ट्रीटमेंट प्लांट में पानी का शुद्धिकरण किया जाता है।

यह तरीका बहुत कारगर सिद्ध नहीं हुआ क्योंकि:

1. यह तरीका काफी खर्चीला है।
2. कभी-कभी नालियों में कचरा फँस जाने के कारण नालियाँ बन्द हो जाती हैं।
3. नगरपालिका या नगर निगम अक्सर गलियों की सफाई के प्रति उदासीन रहती है जिससे पर्यावरण अस्वच्छता की समस्या और बढ़ जाती है।
4. सीवरेज प्रणाली को क्रियान्वित करने के लिए योजना तैयार करना, निर्माण कार्य करवाना एवं रख-रखाव करना बहुत कठिन कार्य है।

❑❑❑

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

अध्याय

5

ध्वनि प्रदूषण (Noise Pollution)

परिचय (Introduction)

आज संसार में इलेक्ट्रॉनिक उपकरण और अन्य वस्तुएँ प्रमुख स्थान ले चुकी हैं। टेलीविजन, रेडियो, स्टीरियो, टेपरिकॉर्डर, वाहनों आदि से एक आवाज निकलती है। यही आवाज कहलाती है जो कि मनुष्य के द्वारा बिना किसी परेशानी के ग्रहण कर ली जाती है। यह Sound सहन करने की क्षमता मनुष्यों में स्थान के अनुसार बदलती रहती है। एक मनुष्य कम आवाज के संगीत या ध्वनि को ग्रहण करने की क्षमता रखता है जबकि अन्य व्यक्ति अधिक ध्वनि को सुनना पसन्द कर सकता है। इसी प्रकार ग्रामीण व शहरी क्षेत्र में भी इसका प्रभाव पड़ता है। ग्रामीण व्यक्ति शहर के कल-कारखानों की मशीनों से उत्पन्न ध्वनि, वाहनों, लाउडस्पीकरों आदि की ध्वनियों से परेशान हो जाता है क्योंकि ग्रामवासी इस प्रकार की ध्वनियों के आदी (Habitual) नहीं होते हैं। अत: ऐसी ध्वनि (Sound) जो मानव में परेशानी, चिड़चिड़ाहट, सिरदर्द आदि पैदा करे या खीझ (Annoyance) पैदा करती है, शोर (Noise) कहलाता है। Noise शब्द की उत्पत्ति लैटिन शब्द Nausea से हुई है। विभिन्न मतों के अनुसार शोर को निम्न प्रकार से परिभाषित किया गया है—

Harrel के अनुसार—शोर एक ऐसी न चाहने वाली ध्वनि है, जिससे सुस्ती बढ़ती है और कुछ औद्योगिक दशाओं में इससे बहरापन भी होता है।

(Noise is an unwanted sound which increases fatigue and under some industrial conditions it causes deafness.)

J. Tiffin के अनुसार—शोर एक ऐसी ध्वनि है जो व्यक्तिगत तौर पर डिसएग्रीएबल है और व्यक्तिगत तौर पर यह साधारण कार्यों में बाधा डालती है।

(Noise is a sound which is disagreeable for the individual and which disturbs the normal way of an individual.)

Vitels के अनुसार—शोर असुहावनी/न चाहने वाली ध्वनि है।

(Noise is unpleasant sound/unwanted sound.)

अस्पताल और विद्यालयों के आस-पास तीव्र ध्वनि करना या शोर उत्पन्न करना मना है, ताकि सम्बन्धित व्यक्ति शोर के बुरे प्रभाव से बच सके। अत: हम कह सकते हैं कि ध्वनि का आवश्यकता से अधिक होना या अवांछित ध्वनि शोर है।

वैसे वातावरणीय कारकों का एक निश्चित मात्रा से बढ़ जाना जो मानव एवं पदार्थों को नष्ट करता है, प्रदूषण कहलाता है। यह वातावरणीय कारक चाहे जल हो, ध्वनि हो, मृदा हो, जनसंख्या हो या हवा आदि। इसी प्रकार ध्वनि की तीव्रता एवं इसका समय बढ़ जाना, मानव के स्वास्थ्य पर, उसके क्रिया-कलापों पर तथा मानसिक योग्यताओं पर बुरा प्रभाव डालती है, जिसे ध्वनि या शोर प्रदूषण कहते हैं।

शोर की इकाइयाँ (Units of Noise)—मनुष्य द्वारा आसानी से ग्रहण की गयी ध्वनि, या मनुष्य की संवेदनशीलता (ध्वनि के प्रति) के आधार पर ध्वनि की इकाई को एक इलेक्ट्रॉनिक उपकरण के डायल पर बेल (Bel) या डेसीबेल (Decibel) में पढ़ लिया जाता है। वायु माध्यम में ध्वनि का संचरण संपीडन (Compression) व विरलन (Rare) तरंगों के रूप में होता है। ये तरंगें गोलाकार होती हैं। इन तरंगों की आवृत्ति 20 से 20,000 कम्पन प्रति सेकण्ड के बीच होने पर मनुष्य द्वारा ध्वनि ग्रहण कर ली जाती है।

इस प्रकार शोर की तीव्रता को बेल या डेसीबेल में आँका जाता है। डेसीबेल, बेल का दसवाँ भाग है।

$$1 \text{ Decibel} = \frac{1}{10} \text{ Bel.}$$

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

किसी भी बिन्दु पर Decibel या Bel में शोर को नापने के लिए, उस बिन्दु पर संपीडन तथा विरलन से उत्पन्न दाब परिवर्तन मापा जाना आवश्यक है। यदि यह दाब परिवर्तन P है तो शोर की तीव्रता Decibel में निम्न सूत्र से ज्ञात की जायेगी—

$$\text{Sound Level in Decibel} = 20 \log_{10} \left(\frac{P_x}{P_0} \right)$$

यहाँ पर P_0 का सन्दर्भ दाब मान 2×10^{-5} N/m^2 है। P_0 ही थ्रैशोल्ड कहलाता है जो वह न्यूनतम दाब है जिसको सामान्य व्यक्ति सुन सकता है। यह दबाव हवा में सम्पीडन व विरलन के दबाव का अन्तर है। जबकि P_x स्रोत से उत्पन्न ध्वनि का दाबान्तर है।

शोर की मात्रा (Noise Dose)—शोर की तीव्रता अधिक मात्र होने से ही मनुष्य को परेशानी नहीं होती, बल्कि यह शोर कितने समय से मनुष्य के द्वारा सुना जा रहा है। कम तीव्रता का शोर भी यदि अधिक समय तक निरन्तर सुना जाये, तो उससे कानों की संवेदनशीलता कम हो जाती है। अत: मनुष्य के द्वारा कितना शोर कितने समय तक सुना जाये यह निश्चित करना पड़ेगा, ताकि निश्चित समय से अधिक समय होने पर उसमें इससे बुरे प्रभाव न पड़ें। अत: एक ऐसी निश्चित तीव्रता का शोर उस निश्चित समय तक उत्पन्न किया जाये, जिसके अधिक समय तक रहने से मनुष्य को हानि हो सकती है, को Noise Dose कहते हैं।

स्तर (Level)		मात्रा समय सीमा (Dose time limit)
90	—	8 hours
93	—	4 hours
100	—	48 minutes
110	—	4·8 minutes
120	—	28·8 seconds
130	—	2·88 seconds

मानव कान की सीमा (Range of Human Ear)—मनुष्य 20 से 20,000 आवृत्ति तक की Sound को सुन सकता है। परन्तु यह सीमा, उम्र तथा अन्य कारकों से कम भी हो सकती है। 20 हर्ट्ज से कम आवृत्ति को Infra Sound या Sub Sonic Sound भी कहते हैं। इस ध्वनि की तरंगदैर्ध्य लगभग 15 मीटर या अधिक होने के कारण यह बड़े-बड़े भवनों एवं अवरोधों को भेद (Penetrate) देती है। इस ध्वनि को उत्पन्न करने के स्रोत Powerful Aircraft Engines, Volcanic Eruptions, Earthquakes, Tornadoes, Intense storms तथा अन्य दूसरे मौसम-सम्बन्धी स्रोत हैं। Infra sound मनुष्य के लिए अत्यधिक हानिकारक होती है।

ध्वनि प्रदूषण के स्रोत (Sources of Noise Pollution)

ध्वनि प्रदूषण के स्रोतों का वर्गीकरण हम कई प्रकार से कर सकते हैं। एक प्रकार के वर्गीकरण के अनुसार यह दो प्रकार का होता है—

1. प्राकृतिक स्रोत
2. कृत्रिम स्रोत

प्राकृतिक स्रोत (Natural Sources)—ज्वालामुखी का विस्फोट, बादलों की गर्जन, उल्का पिण्डों का गिरना, भूकम्प द्वारा भवनों का गिरना, समुद्री लहरों का कोलाहल आदि प्राकृतिक स्रोतों के उदाहरण हैं।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

कृत्रिम स्त्रोत (Artificial Sources)—ये स्त्रोत स्वयं मानव द्वारा पैदा किये जाते हैं। इन्हें हम पुन: दो भागों में बाँट सकते हैं—

(i) **अचल स्त्रोत** (Stationary Sources)—इसके अन्तर्गत कारखाने, रेडियो, टेलीविजन, पत्थर के उद्योग, सीमेंट उद्योग, मिलों के साइरन, लाउडस्पीकर, स्टीरियो, विवाह उत्सव आदि आते हैं। इनमें शोर उत्पन्न करने वाले कारक अपने स्थान पर रहकर ही शोर को चारों ओर प्रसारित करते हैं।

(ii) **सचल स्त्रोत** (Dynamic Sources)—इन स्त्रोतों में रेलगाड़ियाँ, मोटरगाड़ियाँ, स्कूटर, मोटरसाइकिल, वायुयान आदि सम्मिलित हैं। इसके अलावा बच्चों के खेलने से, उत्सवों का शोर, चुनाव प्रचार का शोर एवं फेरी लगाने वालों का शोर भी सचल स्त्रोत है। विस्फोट, पटाखों, फायरिंग का शोर भी प्रदूषण उत्पन्न करता है।

एक अन्य वर्गीकरण के अनुसार ध्वनि प्रदूषण को हम निम्न प्रकार भी वर्गीकृत कर सकते हैं—

1. औद्योगिक शोर
2. सामुदायिक शोर
3. यातायात का शोर

1. औद्योगिक शोर (Industrial Noise)—बड़े-बड़े लोहे के उद्योगों, सीमेंट एवं पत्थर के उद्योगों में अत्यधिक शोर उत्पन्न होता है जिससे वहाँ के कर्मचारियों की श्रवण शक्ति कमजोर पड़ जाती है। इसके अन्तर्गत सभी प्रकार के उद्योगों का शोर आता है।

2. सामुदायिक शोर (Community Noise)—समाज में रहकर मनुष्य विभिन्न प्रकार के क्रिया-कलापों के द्वारा शोर उत्पन्न करता है जैसे विवाह आदि अवसरों पर ऊँची आवाजों में लाउडस्पीकर बजाना, बैण्ड बजाना, कथा भागवत आदि लाउडस्पीकर पर बजाना, मेलों और हाटों में शोरगुल होना आदि।

3. यातायात का शोर (Traffic Noise)—सभी प्रकार के यातायात के साधनों से शोर उत्पन्न होता है। इनमें प्रमुख वायुयान, हैलीकाप्टर, रॉकेट, रेलगाड़ी, बस, ट्रक, स्कूटर आदि हैं।

ध्वनि के प्रकार (Types of Sound)

ध्वनि (Sound) मधुर, कर्णप्रिय, स्वीकार्य, कर्कश, अस्वीकार्य, कष्टकर किसी भी प्रकार की हो सकती है परन्तु शोर (Noise) केवल कर्कश एवं अस्वीकार्य ध्वनि को ही कहते हैं।

ध्वनि निम्न प्रकार की होती है—

1. भाषण (Speech)
2. संगीत (Music)
3. शोरगुल (Noise)

1. भाषण (Speech)—किसी शान्त वातावरण में एक व्यक्ति द्वारा बोले गये वक्तव्य को अन्य व्यक्तियों द्वारा सुना जाता है। वक्ता को ऊँची आवाज में बोलना पड़ता है। उसके नजदीक बैठने वाले को वक्ता की आवाज कर्कश प्रतीत होगी और थोड़ा दूर बैठने वाले व्यक्ति को वही आवाज कर्णप्रिय लगती है।

2. संगीत (Music)—संगीत की ध्वनि वैसे तो मधुर एवं कर्णप्रिय मानी जाती है। धीमी आवाज में यह ध्वनि प्राय: रुचिकर ही प्रतीत होती है परन्तु परीक्षार्थी एवं बीमार व्यक्ति के लिये धीमा संगीत भी असह्य हो जाता है। अत: उनके लिये यह शोर कहलायेगा। तेज संगीत जैसे पॉप म्यूजिक, रॉक एन रोल आदि की ऊँची आवाज भी युवा वर्ग को बहुत रास आती है। परन्तु वृद्ध एवं बड़ों को प्राय: यह अच्छी नहीं लगती।

3. शोरगुल (Noise)—इसके अन्तर्गत कई स्त्रोतों से उत्पन्न मिला-जुला शोर आता है जैसे मेलों में उत्पन्न शोर, शहरों की व्यस्त सड़कों पर वाहनों एवं मनुष्यों का शोर, उद्योगों में विभिन्न कल-पुर्जों का शोर आदि।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

अन्य वर्गीकरण (Other Classification)

शोर को निम्न प्रकार से भी वर्गीकृत किया जा सकता है—

1. घरेलू शोर (Household Noise)—बच्चों का चिल्लाना, रेडियो-टेलीविजन का शोर, फर्नीचर खिसकाना, जोर-जोर से बात करना, आदि घरेलू शोर के अन्तर्गत आता है।

2. सामुदायिक शोर (Community Noise)—विभिन्न उत्सवों पर लाउडस्पीकर का शोर, वाहनों का शोर, औजार एवं मेलों का शोर, नाच एवं गाने का शोर, अन्य सामुदायिक क्रिया-कलापों का शोर आदि इसके अन्तर्गत आता है।

3. औद्योगिक शोर (Industrial Noise)—विभिन्न उद्योगों में मशीनों का शोर, सायरन बजने का शोर आदि औद्योगिक शोर कहलाता है।

4. सतत् शोर (Continuous Noise)—कुछ शोर लगातार काफी समय तक होता रहता है, जैसे—मेलों का शोर, मशीनों का शोर, यातायात का शोर आदि। मनुष्य इस शोर को सहन करने का आदी हो जाता है। यह अधिक घातक नहीं होता।

5. असतत् शोर (Occasional Noise)—यह शोर अचानक कम समय के लिए उत्पन्न होता है जैसे बम विस्फोट का शोर, घर में किसी बर्तन का गिरना, सायरन बजाना आदि कभी-कभी उत्पन्न होने वाले शोर हैं। ये अचानक चौंकाने वाले तथा कष्टदायक होते हैं।

ध्वनि के लक्षण (Characteristics of Sound)

1. आवृत्ति (Frequency)—कान के परदे पर आवर्त्त रूप से उच्च दाब एवं निम्न दाब पड़ते हैं तो क्रमागत उच्च दाबों के बीच समयान्तराल को आवर्त्तकाल कहते हैं। आवर्त्तकाल में व्युत्क्रम (Reciprocal) को आवृत्ति कहते हैं। इसे चक्र प्रति सेकण्ड (cycle per second) या हर्ट्ज (Hertz को संक्षेप में Hz) कहते हैं। जिस आवृत्ति परिसर (Range of frequency) की ध्वनि मनुष्य सुन सकता है, उसे आवृत्ति बैण्ड (Frequency Band) कहते हैं। मनुष्य न्यूनतम 20 हर्ट्ज तथा अधिकतम 20000 हर्ट्ज की ध्वनि सुन सकता है। इस आवृत्ति बैण्ड की चौड़ाई 11980 हर्ट्ज है।

2. आयाम (Amplitude)—किसी ध्वनि तरंग में माध्यम के कणों का किसी एक दिशा में अधिकतम विस्थापन ध्वनि तरंग का आयाम कहलाता है। किसी तरंग की तीव्रता आयाम के वर्ग के समानुपाती होती है। ध्वनि की आवृत्ति का आयाम से कोई सम्बन्ध नहीं होता।

ध्वनि की प्रबलता (Loudness of Sound)

यह आवश्यक नहीं है कि यदि किसी ध्वनि की तीव्रता अधिक है तो वह हमें तेज सुनाई देगी। वास्तव में किसी ध्वनि का तेज अथवा धीमा सुनाई देना ध्वनि की तीव्रता के अतिरिक्त हमारे कान की संवेदनशीलता (Sensitivity) पर भी निर्भर करता है। कान की संवेदनशीलता भिन्न-भिन्न आवृत्तियों की ध्वनि के लिये भिन्न-भिन्न होती है। ध्वनि की तीव्रता एक निश्चित राशि है जिसका हमारे कान की संवेदनशीलता से कोई सम्बन्ध नहीं है परन्तु ध्वनि की प्रबलता वह संवेदना है जिसके आधार पर हम किसी ध्वनि को धीमी अथवा तेज कह सकते हैं। ध्वनि की तीव्रता बढ़ने पर उसकी प्रबलता भी बढ़ती है परन्तु उस अनुपात में नहीं बढ़ती जिसमें तीव्रता बढ़ती है। अन्य शब्दों में ध्वनि की प्रबलता और तीव्रता में रेखीय सम्बन्ध नहीं होता। भिन्न-भिन्न मनुष्य के कानों की संवेदनशीलता, भिन्न-भिन्न होती है। यही कारण है कि जो ध्वनि एक मनुष्य को मधुर एवं आनन्ददायक लगती है वही दूसरे के लिये तेज (loud) एवं अप्रिय हो सकती है।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

तालिका—5.1
भारतीय मानक संस्थापन द्वारा निर्धारित मानक

क्रम संख्या	स्त्रोत	ध्वनि स्तर डेसीबेल में	सघनता	मानव प्रतिक्रिया
1.	ज्वालामुखी विस्फोट	190		
2.	रॉकिट इन्जन	180		पीड़ा दायक
3.	तोप बन्दूक	160	कष्टप्रद	पशुओं के लिये घातक
4.	जेट इन्जन उड़ते समय	150		
5.	हाइड्रोलिक प्रेस	130		
6.	रॉक संगीत, डिस्को, लाउडस्पीकर, हॉर्न	120		
7.	निर्माण (3 मी०) जेट इन्जन (600 मी० ऊँचा)	110	असुविधाजनक	बहुत अधिक परेशानी एवं चिड़चिड़ापन, नाड़ी तन्त्र में परिवर्तन
8.	चिल्लाना, पंचप्रेस, धारा	100		
9.	भारी ट्रक, शोर युक्त मशीनें, कारें	90	बहुत ऊँची आवाज	परेशानी एवं चिड़-चिड़ाना
10.	स्वचालित वाहन	80	मध्यम आवाज	नींद भंग होना
11.	टी० वी०, रेडियो	70		
12.	बातचीत	60	शान्ति	
13.	पावर स्टेशन (15 मी० दूर)	50		
14.	बेडरूम	40	बिल्कुल शान्ति	
15.	फुसफुसाहट	30		
16.	रेडियो प्रसारण केन्द्र	20		
17.	पत्तियों का खड़-खड़ाना	10	श्रव्यता प्रारम्भ	
18.	शान्त स्थल	0		

तालिका—5.2
कुछ भारतीय शहरों में ध्वनि का स्तर

क्रम संख्या	शहर	क्षेत्रों में ध्वनि की तीव्रता (डेसीबेल)			
		औद्योगिक	व्यापारिक	आवासीय	संवेदशनशील
1.	निर्धारित मानक	75	65	55	50
2.	कोलकाता	83	94	89	89
3.	मुम्बई	83	83	78	78
4.	चेन्नई	78	89	72	67
5.	बैंगलुरु	89	83	72	72
6.	हैदराबाद	72	83	72	78
7.	कानपुर	72	89	67	61
8.	जयपुर	72	89	72	72
9.	दिल्ली	65	70	60	67

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

शोर से प्रभाव (Effects Due to Noise)

शोर से निम्नलिखित प्रभाव होते हैं—

1. सतत् शोर के कारण सुनने की क्षमता कम होती है तथा सिर में नियमित (Constant) दर्द रहने लगता है।
2. शोर की सीमा 90 डेसीबेल से ऊपर होने पर त्वचा में अचानक उत्तेजना उत्पन्न होती है। Stomach की पेशियाँ संकीर्ण हो जाती हैं तथा मनुष्य के स्वभाव में उत्तेजना और क्रोध उत्पन्न हो जाती है।
3. सतत् शोर के कारण अल्सर (Ulcers), हृद्य रोग, उच्च रक्त दाब आदि उत्पन्न हो जाते हैं।
4. अधिक शोर के कारण एड्रिनल हार्मोनों का उत्पादन अत्यधिक मात्रा में होने लगता है।
5. शोर से आत्मविश्वास, कार्यक्षमता कम हो जाती है तथा एकाग्र ध्यान नहीं रह पाता है।
6. उच्च तीव्रता के शोर से भवनों की दीवारों एवं छतों में दरारें आ जाती हैं।
7. वाहनों से सड़कों आदि पर अत्यधिक शोर होने से सड़क दुर्घटनाएँ होती हैं।
8. अत्यधिक शोर रहने से Speech Interference (भाषण देने में बाधा) होता है।
9. शोर की अधिकता (एयरपोर्ट के पास) के कारण अनिद्रा का रोग लग जाता है, जो अन्य रोगों को और बढ़ावा देता है।
10. मनोरंजन हेतु संप्रेषण (Communication) माध्यम असुविधाजनक हो जाता है।

ध्वनि के प्रभाव (Effects of Noise)

ध्वनि के प्रभावों को हम पाँच भागों में विभाजित कर सकते हैं—

1. बातचीत में व्यवधान (Interference with speech)
2. श्रवण क्षमता में ह्रास (Loss of hearing)
3. शारीरिक प्रभाव (Physiological effects)
4. मनोवैज्ञानिक प्रभाव (Phychological effects)
5. पदार्थों पर प्रभाव (Effects on materials)

बातचीत में व्यवधान (Interference with speech)—जब हम किसी व्यक्ति की बात सुन रहे हों और उसी समय कहीं पर शोर उत्पन्न होने लगे जिसकी प्रबलता सामने वाले व्यक्ति की ध्वनि की प्रबलता से अधिक हो तब हमें उस व्यक्ति की आवाज सुनाई नहीं देगी। उदाहरणार्थ—यदि शोर का स्तर 100 डेसीबेल है तो 90 db की ध्वनि हमें सुनाई नहीं देगी, परन्तु कान पर इयर प्लग (ear plug) लगाकर यदि शोर का स्तर 78 db तक घटा दिया जाये तो हमें 90 db की ध्वनि सुनाई देती रहेगी।

उक्त परिणाम निम्न तालिका 5.3 द्वारा स्पष्ट है।

तालिका—5.3

आवृत्ति समूह	ध्वनि स्तर	इयर प्लग के साथ ध्वनि स्तर (db)
600–1200	107	88
1200–2400	99	74
2400–4800	96	71
औसत	101	78

दो व्यक्तियों के बीच की दूरी भी सुनाई देने वाली ध्वनि की प्रबलता को प्रभावित करती है जैसे दूर खड़े व्यक्ति की आवाज धीमी और नजदीक खड़े व्यक्ति की आवाज तीव्र सुनाई पड़ती है। अग्र तालिका में दूरी के सापेक्ष सुनाई देने वाली ध्वनि की तीव्रता दर्शायी गयी है।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

तालिका—5.4
व्यक्तिगत बातचीत पर दूरी का प्रभाव

दूरी फीट में	0·5	2	4	6	12
सामान्य आवाज (db) में	71	59	53	49	43
ऊँची आवाज (db) में	77	65	59	55	49

श्रवण क्षमता में ह्रास (Loss of hearing)—उच्च स्तर का अचानक शोर किसी भी व्यक्ति को कुछ समय के लिये बहरा बना देता है। उच्च प्रबलता की ध्वनि कान के पर्दों को भी फाड़ सकती है। उद्योगों से सतत् एवं असतत् दोनों प्रकार की तीव्र ध्वनि निकलती रहती है। यह उनमें काम करने वाले कर्मचारियों के कान की कोशिकाओं को हानि पहुँचाती है। मनुष्य 90 डेसीबेल से अधिक प्रबलता की ध्वनि को सहन नहीं कर पाता है। दोनों कानों में विभिन्न प्रबलता की ध्वनि पड़ने से भी श्रवण क्षमता घटती है। उच्च शोर में रहने का समय भी श्रवण शक्ति के ह्रास को प्रभावित करता है। अधिक समय तक उच्च शोर में रहना खतरनाक होता है।

प्राय: शोर उत्पन्न करने वाले उद्योगों में काम करने वाले कर्मचारियों में 25% बहरेपन के शिकार हो जाते हैं। ट्रैफिक पुलिस मैन, फेरी करने वाले, शोर में रहने वाले व्यक्ति आदि भी बहरेपन के शिकार हो जाते हैं। सुरक्षा एवं स्वास्थ्य अधिनियम के अनुसार श्रमिकों और कर्मचारियों को 90 db के शोर में 8 घण्टे प्रतिदिन से अधिक काम नहीं करना चाहिये क्योंकि अधिक समय तक काम करने से कार्यक्षमता घटती है और बहरापन आ जाता है। कार्य के घण्टों के अतिरिक्त 15 db ध्वनि स्तर से अधिक ध्वनि के स्तर वाले वातावरण में नहीं रहना चाहिये। निम्न तालिका में विभिन्न ध्वनि स्तरों की ध्वनि के मनुष्य पर प्रभाव दिखाये गये हैं।

तालिका—5.5

शोर का स्तर db में	प्रभाव
0	श्रवण योग्यता की दहलीज।
60	बेचैनी, मानसिक तनाव एवं अनिद्रा।
80	सिरदर्द, थकान, तनाव, कार्य क्षमता में ह्रास।
85	बहरापन या श्रवण दोष।
90	कान के आन्तरिक भाग को क्षति।
100	हृद्य की धड़कन बढ़ना, रक्त वाहिनियों का सिकुड़ना, रक्त संचार में कमी, थकान, उच्च रक्त चाप, चिड़-चिड़ापन, गैस्ट्रिक अल्सर।
110	चमड़ी में उत्तेजना, तनाव, थकान।
120	केन्द्रीय तंत्रिका तन्त्र पर प्रभाव, मस्तिष्क एवं नर्वकोशिका पर घातक प्रभाव, स्मृति ह्रास, महिलाओं में प्रसवपीड़ा बढ़ना, गर्भस्थ शिशु पर बुरे प्रभाव।
130	उल्टी आना, चक्कर आना, सिर दर्द आदि।
140	कान में दर्द, अस्थाई बहरापन, देर तक सुनने में पागलपन की स्थिति।
150	त्वचा में जलन।
160	अधिक समय तक रहने में स्थायी बहरापन।
190	थोड़े समय में ही स्थायी बहरापन।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

शारीरिक प्रभाव (Physiological Effects)—मनुष्य की श्रवण शक्ति में कमी भी शारीरिक प्रभाव के अन्तर्गत आती है परन्तु शोर का यह मुख्य प्रभाव है। इसके अतिरिक्त भी शोर शरीर में कई प्रकार से प्रभाव उत्पन्न करता है जिनका संक्षिप्त परिचय तालिका 5.5 में भी देखा जा सकता है। इन शारीरिक प्रभावों को हम निम्न उपशीर्षकों के अन्तर्गत पढ़ेंगे—

1. हृदय रोग एवं उच्च रक्त चाप—अचानक उत्पन्न शोर रक्त के छोटे संग्राहकों को सिकोड़ देता है जिससे उनमें रक्त संचार कम हो जाता है। शरीर के विभिन्न भागों में कम रक्त पहुँचने के कारण उसमें थकान आ जाती है। रक्त वाहनियाँ सिकुड़ जाती हैं, भोजन नली एवं आँतों में सिकुड़न उत्पन्न होने लगती है। तेज ध्वनि से आँखों की पुतलियाँ चौड़ी हो जाती हैं। 90 से 100 डेसीबेल की ध्वनि से हृद्य की धड़कन बढ़ जाती है जिससे उच्च रक्त चाप बढ़ जाता है और चिड़चिड़ापन आ जाता है।

2. केन्द्रीय तन्त्रिका संस्थापन पर प्रभाव—यह केन्द्रीय तन्त्रिका संस्थापन को प्रभावित करता है जिससे पेप्टिक अल्सर तथा दमा जैसे रोगों की तकलीफ बढ़ जाती है। तीव्र ध्वनि के कारण उत्पन्न तनाव तन्त्रिका तन्त्र के क्रिया-कलापों को प्रभावित करता है जिससे उच्च रक्त चाप बढ़ जाता है। 120 डेसीबेल का शोर मस्तिष्क एवं नर्वसेल (Neuron) के लिये घातक हो जाता है। इससे स्मरण शक्ति घट जाती है।

3. अन्तःस्त्रावी ग्रन्थियों पर प्रभाव—शोर के कारण मनुष्य की अन्तःस्त्रावी ग्रन्थियों में हारमोन्स का प्रभाव अनियमित हो जाता है जिससे मानसिक तनाव बढ़ता है। स्वभाव चिड़चिड़ा हो जाता है। दिल का दौरा भी पड़ सकता है।

4. गर्भवती महिलाओं पर प्रभाव—120 db से उच्च ध्वनि गर्भवती महिलाओं के लिये घातक होती है। उनमें प्रसव पीड़ा बढ़ जाती है, मानसिक तनाव बढ़ जाता है, गर्भस्थ शिशु पर भी तीव्र ध्वनि का प्रभाव घातक होता है। उसका स्वस्थ विकास नहीं हो पाता। उसमें जन्मजात रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

इसके अतिरिक्त तेज ध्वनि के कारण, जीवन शक्ति में कमी, त्वचा का पीला पड़ जाना, गैस के निकास में व्यवधान, मुर्गी फार्मों में अण्डा उत्पादन में गिरावट आदि अनेकों लक्षण परिलक्षित होने लगे हैं।

मनोवैज्ञानिक प्रभाव (Psychological Effects)—उच्च शोर में ज्यादा देर तक रहने से मनुष्य एवं पशुओं के व्यवहार में परिवर्तन आ जाता है। इसका मुख्य कारण उनका तीव्र ध्वनि के कारण ग्रस्त रहना है। मानसिक तनाव के कारण उसे नींद कम आती है। उसका किसी काम में मन नहीं लगता है, उसका स्वभाव अधिक उग्र एवं हिंसात्मक प्रवृत्ति का हो जाता है। मानसिक तनाव से मुक्ति के लिये मनुष्य मदिरा, सिगरेट, नींद की गोलियाँ एवं नशीली दवाइयों का सेवन करना प्रारम्भ कर देता है जो उसके लिये और भी अधिक हानिकारक होता है। अत्यधिक मानसिक तनाव से मनुष्य विक्षिप्त हो जाता है।

पदार्थों पर प्रभाव (Effects on Materials)—वैसे तो ध्वनि का अचेतन पदार्थों पर कोई प्रभाव नहीं होता परन्तु सुपर सोनिक ध्वनियाँ एवं बड़े-बड़े विस्फोटों की ध्वनि से पुराने एवं जीर्ण भवन गिर सकते हैं, खिड़कियों के शीशे टूट जाते हैं, दीवारों एवं छतों में दरारें पड़ जाती हैं जिससे आर्थिक हानि भी हो जाती है।

प्रतिध्वनि (Echo)

प्रतिध्वनि तरंगों के परावर्तन (Reflection) का प्रमुख उदाहरण है जबकि किसी ध्वनि स्रोत से निकलने वाली ध्वनि तरंगें दूर स्थित मकानों, पहाड़ियों अथवा कुएँ के पानी में तल से टकराकर परावर्तित होती हैं। तब वही ध्वनि पुनः सुनाई पड़ती है, उसे ही प्रतिध्वनि कहते हैं। प्रतिध्वनि की तीव्रता मूल ध्वनि की तीव्रता से कुछ कम होती है क्योंकि मूलध्वनि की तीव्रता का कुछ अंश वस्तु द्वारा अवशोषित कर लिया जाता है। अवशोषण की मात्रा वस्तु के पदार्थ पर निर्भर करती है। विभिन्न महत्वपूर्ण भवनों में प्रतिध्वनि पर नियन्त्रण करना आवश्यक है जिससे बातचीत में व्यवधान उत्पन्न न हो अथवा मूल ध्वनि ठीक प्रकार से सुनायी दे सके।

प्रतिध्वनि की रोकथाम (Control of Echo)

भवनों में प्रतिध्वनि की रोकथाम के लिए भवनों की सतह इस प्रकार बनाई जानी चाहिए, जिससे ध्वनि तरंगें सतह से टकराकर वापस न लौटें। इसके लिए सतह के ऊपर ऐसे पदार्थ लगाये जाते हैं जिनकी ध्वनि अवशोषण क्षमता अधिक हो।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

इसके अतिरिक्त सतह ऐसे छिद्रित व असमान होनी चाहिए जिससे ध्वनि का परिवर्तन एक दिशा में न होकर विभिन्न दिशाओं में हो।

विभिन्न पदार्थों की ध्वनि अवशोषण क्षमता अलग-अलग होती है। इसे अवशोषण गुणांक द्वारा ज्ञात किया जाता है।

$$\text{अवशोषण गुणांक} = \frac{\text{तल पर अवशोषित ध्वनि ऊर्जा}}{\text{तल पर आधारित कुल ध्वनि ऊर्जा}}$$

अवशोषण गुणांक का मान पदार्थ की प्रकृति तथा ध्वनि की आवृत्ति पर निर्भर करता है।

विभिन्न पदार्थों के अवशोषण गुणांक—

पदार्थ	अवशोषण गुणांक
खुली खिड़की	1·00
ईंटों की दीवार	0·03
ईंटों की दीवार (पेन्ट सहित)	0·016
कारपेट	0·25
पर्दे, लकड़ी का फर्नीचर	0·15

ध्वनि प्रदूषण का मापन (Measurement of Sound Pollution)

ध्वनि प्रदूषण को बेल या डेसीबेल में मापा जाता है। इसे मापने के लिए सामान्यत: साउन्ड लेवल मीटर (Sound Level Meter) का प्रयोग किया जाता है जिसका विवरण निम्न है—

साउन्ड लेवल मीटर (Sound Level Meter)—यह एक साधारण उपकरण है जो ध्वनि लेवल (Sound Level) ज्ञात करने के लिये प्रयोग किया जाता है। इस उपकरण में निम्न भाग होते हैं—

(a) **माइक्रोफोन** (Microphone)—इसका कार्य Sound wave Pressure को ग्रहण करना तथा उस दाब परिवर्तन को Electrovoltage में परिवर्तित करना है।

(b) **अटेन्यूटर** (Attenuator)—इसका कार्य Electric Voltage को परिवर्धित (Amplify) करना है। Amplification उस Level को तय करता है, जिस Level पर Sound measure की जाती है।

(c) **इनपुट एम्पलीफायर** (Input Amplifier)—इसका कार्य Electrical signal को साधारण Level तक उठाना है।

(d) **वेइंग नेटवर्क** (Weighing Network)—इसका कार्य उपकरण के सन्दर्भ में ध्वनि की विद्युत आवृत्ति में संशोधन करना है।

(e) **आउटपुट एम्पलीफायर** (Output Amplifier)—इसका कार्य विद्युत के रूप में परिवर्तित ध्वनि के निकास की आवृत्ति को Amplify करना है (चित्र 5.1)।

ध्वनि लेवल मीटर के द्वारा ध्वनि प्राप्त होती है। वह ध्वनि का वर्ग माध्य मूल मान (Root Mean Square Value, RMS) होता है। आजकल I.E.C.-123 व I.E.C.-179 का प्रयोग बहुतायत से हो रहा है। I.E.C.-123 का उपयोग साधारण कार्यों में ध्वनि की तीव्रता मापने के काम आता है। यह सस्ता एवं बनावट में मजबूत होता है परन्तु I.E.C.-179 की अपेक्षा अधिक परिशुद्ध नहीं होता है। I.E.C.-179 का प्रयोग विशेष कार्यों में ध्वनि मापन में किया जाता है (चित्र 5.1 A)।

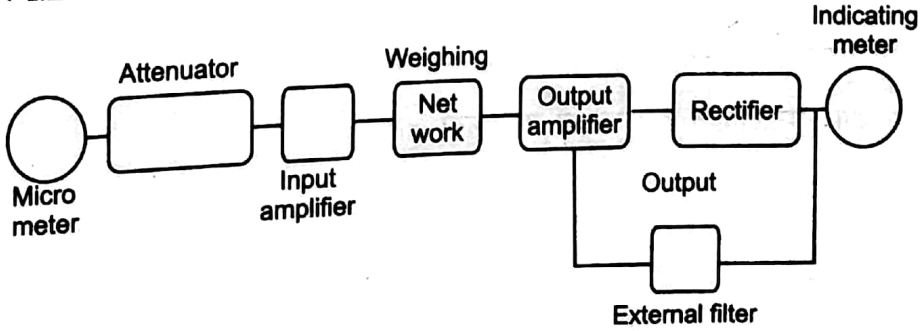

चित्र 5.1–साउन्ड लेवल मीटर

Scanned with CamScanner

AKC TECHNICAL CLASSES

ध्वनि प्रदूषण मापन हेतु ध्वनि स्तर मीटर (Sound Level Meter) के अलावा अन्य भी कई उपकरण उपयोग में लाये जाते हैं। जैसे पैन रिकॉर्डर (Pen Recorder), औसत ध्वनिमापी (Average Noise Meter), दोलन आलेखी (Oscillographs), ध्वनि विश्लेषक (Noise Analyser), स्पेक्ट्रम विश्लेषक (Spectrum Analyser), कैसिट रिकॉर्डर (Cassette Recorder) और चुम्बकीय टेप रिकॉर्डर (Magnetic Tape Recorder) आदि हैं।

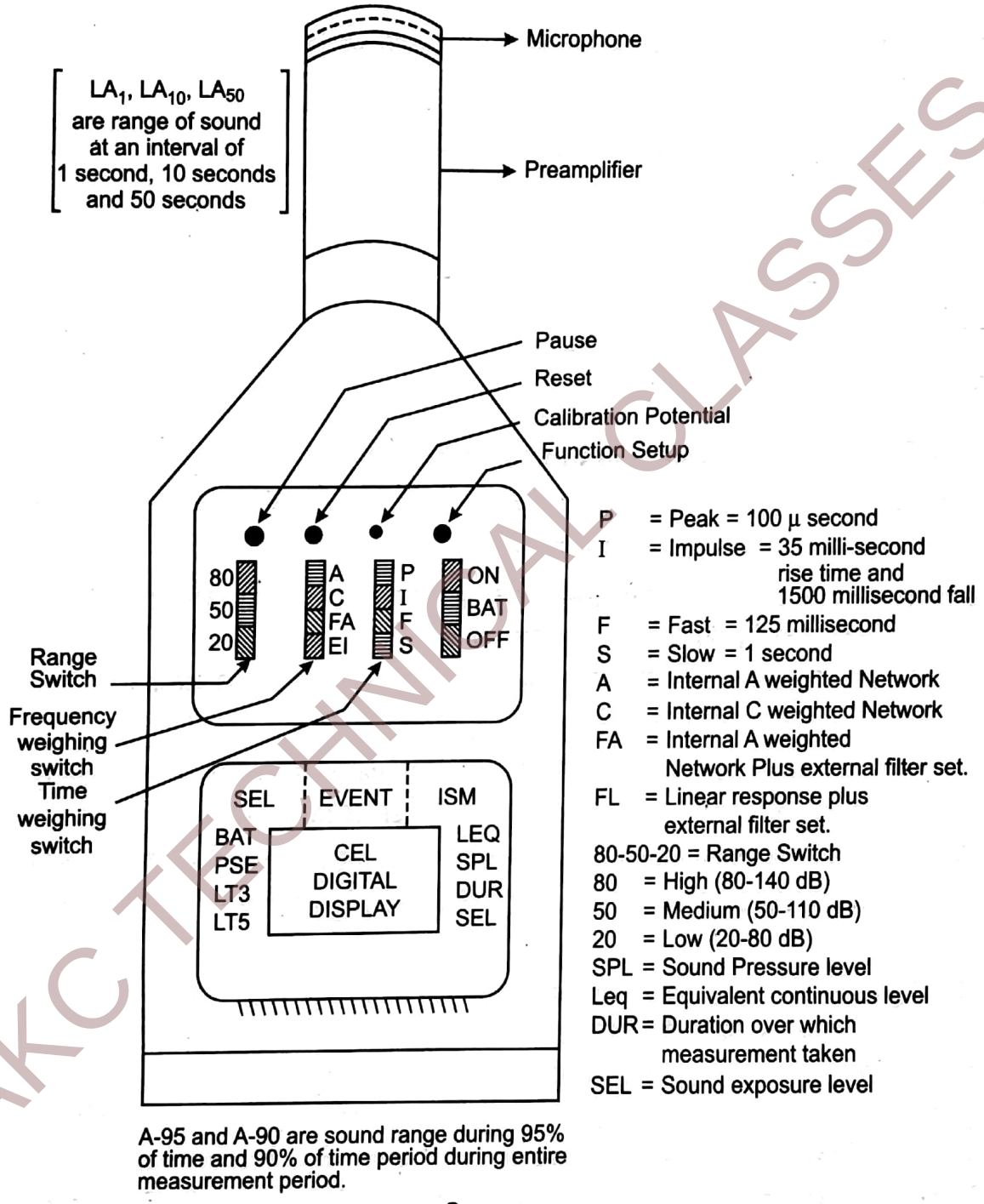

चित्र 5.2

ध्वनि प्रदूषण की रोकथाम (Control of Noise Pollution)

ध्वनि प्रदूषण नियन्त्रण निम्नलिखित तीन घटकों पर किया जाता है—

1. स्रोत पर नियन्त्रण
2. माध्यम पर नियन्त्रण
3. प्राप्तकर्त्ता पर नियन्त्रण

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

स्रोत पर नियन्त्रण (Control at Source)—यह ध्वनि प्रदूषण रोकने की उत्तम तकनीक है। इसके लिये ध्वनि उत्पन्न करने वाली मशीन की सम्पूर्ण जानकारी आवश्यक है। शोर होने के कारणों की समुचित जानकारी होनी चाहिये। आज मशीनों में उत्पन्न शोर कम करने के लिये अनेक प्रकार के साइलेंसर विकसित किये गये हैं। उद्योगों, मोटर वाहनों आदि में इनका प्रयोग किया जाता है। घर्षण से उत्पन्न शोर को उनका लुब्रीकेशन करके कम किया जा सकता है। उद्योगों में मशीनों के साथ-साथ ध्वनि शोषक पदार्थों का प्रयोग किया जाता है जिससे स्रोत से पूरी ध्वनि उत्पन्न होती है परन्तु उसे प्राप्तकर्त्ता तक पहुँचने से पहले ही ध्वनि शोषक पदार्थों द्वारा कम कर दिया जाता है जिससे ध्वनि की तीव्रता में काफी कमी हो जाती है। शोर कम करने वाले पदार्थों में राख के साँचे, शीशा, ईंटें, प्लास्टर आदि आते हैं। निम्न तालिका 5.6 में ध्वनि शोषक पदार्थों द्वारा ध्वनि संचरण में कमी दर्शायी गयी है।

तालिका—5.6
ध्वनि शोषक पदार्थ एवं ध्वनि स्तर में कमी

क्रम संख्या	ध्वनि शोषक पदार्थ	ध्वनि संचरण में कमी db में
1.	राख का ब्लॉक (10 सेमी० मोटा)	25
2.	शीशा (0·625 सेमी० मोटा)	50
3.	राख का ब्लॉक (10 सेमी० मोटा तथा एक ओर प्लास्टर)	42
4.	राख का ब्लॉक (10 सेमी० मोटा एवं दोनों ओर प्लास्टर)	45
5.	ईंटें (10 सेमी० मोटी)	45
6.	दो राख के ब्लॉक (प्रत्येक 7·5 सेमी० मोटा तथा दोनों ओर प्लास्टर एवं समान वायु अन्तराल द्वारा विभाजित)	55

माध्यम पर नियन्त्रण (Control at medium)—ध्वनि के संचरण पथ (transmission path) को बदल कर ऐसी दिशा में मोड़ दिया जाता है जिससे यह प्राप्तकर्त्ता तक न पहुँच सके। इसे निम्न विधियों द्वारा किया जाता है—

1. **स्थिति** (Location)—इसमें स्रोत और प्राप्तकर्त्ता के बीच की दूरी बढ़ा दी जाती है। चूँकि स्रोत से ध्वनि सभी दिशाओं में समान रूप से संचरित नहीं होती, अत: स्रोत एवं प्राप्तकर्त्ता के सापेक्ष विन्यास में परिवर्तन करके ध्वनि प्रबलता कम की जा सकती है।

2. **भवन विन्यास** (Building Layout)—भवन का विन्यास इस प्रकार होना चाहिये कि भवन के कमरों का शोर न तो बाहर जा सके और न ही बाहर का शोर अन्दर आ सके।

3. **दिशा में परिवर्तन** (Deflection in Direction)—स्रोत से उत्पन्न ध्वनि की दिशा परिवर्तित करने हेतु मार्ग में बड़े-बड़े अवरोध (Barriers) खड़े कर दिये जाते हैं। ध्वनि इनसे टकराकर प्राप्तकर्त्ता से विपरीत दिशा में मुड़ जाती है।

4. **अवशोषण** (Absorption)—यह एक प्रभावी तकनीक है। इसमें शोर उत्पन्न करने वाली मशीनों को एक कमरे में रखा जाता है तथा उनकी दीवारों, फर्शों एवं छतों में ध्वनि शोषक पदार्थ प्रयोग किये जाते हैं, ये ध्वनि को अवशोषित कर लेते हैं जिससे कमरे के बाहर शोर नहीं जाता है। कुछ फर्शों पर ध्वनि शोषक कालीनें बिछायी जाती हैं। ये कालीनें दीवार एवं छत पर भी लगायी जा सकती हैं।

5. **मशीनों का समायोजन** (Adjustment of Machines)—मशीनों के उचित समायोजन से भी बहुत-सा शोर कम किया जा सकता है।

6. **मफलर का प्रयोग** (Use of Mufflers)—यदि ध्वनि स्रोतों को ऊनी मफलरों से ढक दिया जाये तो स्रोत से उत्पन्न ध्वनि का काफी बड़ा भाग इनके द्वारा अवशोषित कर लिया जाता है और प्राप्तकर्त्ता तक काफी कम ध्वनि पहुँचती है। कानों को भी मफलर से ढक कर तीव्रता कम कर सकते हैं।

AKG TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

प्राप्तकर्त्ता पर नियन्त्रण (Control at Receiver)—प्राप्तकर्त्ता पर नियन्त्रण उपकरण लगाकर भी ध्वनि स्तर में कमी लायी जा सकती है। प्राप्तकर्त्ता पर नियन्त्रण की अग्र विधियाँ हैं—

1. रक्षात्मक यन्त्रों द्वारा (By Protective Equipments)—तेज शोर से बचने के लिये कानों पर प्लग, मफलर, ध्वनिरोधी हेलमेट तथा मशीन वाले कमरे में छोटा-सा आवरण बनाकर इसके दुष्प्रभावों से बचा जा सकता है। अत: उद्योगों में कार्यरत कर्मचारियों को ध्वनिरोधी यन्त्र उपलब्ध कराये जाने चाहिये।

2. अनुमन्य शोर अवधि (Permissible Noise Period)—भिन्न-भिन्न प्रबलता की ध्वनि में रहने की एक सीमा निर्धारित की गयी है। इससे अधिक समय तक उसमें रहने पर घातक प्रभाव हो सकते हैं। अत: उद्योगपतियों द्वारा श्रमिकों की कार्य अवधि भारतीय मानक संस्थान द्वारा निर्धारित समयावधि के अनुरूप ही लागू करनी चाहिये ताकि श्रमिकों पर इसका बुरा प्रभाव न पड़ सके। निम्न तालिका 5.7 में ध्वनि स्तर एवं कार्य करने की समयावधि दिखाई गई है।

तालिका—5.7
ध्वनि स्तर एवं कार्य अवधि

क्रम संख्या	ध्वनि स्तर db में	कार्य अवधि घण्टों में
1.	90	8
2.	92	6
3.	95	4
4.	97	3
5.	100	2
6.	102	1·5
7.	105	1
8.	110	0·5
9.	115	0·25

(c) लोगों को शिक्षित करके—बड़े-बड़े औद्योगिक नगरों जैसे मुंबई, कोलकाता, दिल्ली, चेन्नई, कानपुर आदि जहाँ ध्वनि प्रदूषण की समस्या काफी गम्भीर है वहाँ पर रेडियो, टी० वी०, अखबार आदि के माध्यम से शोर रोकने एवं कम उत्पन्न करने हेतु जागरूक करके ध्वनि प्रदूषण पर नियन्त्रण किया जा सकता है।

इस दिशा में निम्न कार्य किये जा सकते हैं—

(i) नगरपालिका एवं महापालिका को ये आदेश दिया जाये कि वे भारी ट्रकों एवं वाहनों को आवासीय क्षेत्रों में से होकर न गुजरने दें।

(ii) नगर एवं ग्राम नियोजन विभाग, प्रत्येक नगर में एक "मॉनीटर स्टेशन" स्थापित करें, जो ध्वनि के आँकड़े प्रतिदिन नोट करता रहे तथा ध्वनि उच्च होने पर उसे रोकने का प्रयास करें।

(iii) भवन में शौचालय, स्टोर, सीढ़ी कक्ष व स्नानागार अधिक ध्वनि वाले हिस्से की तरफ बनाये जाये।

(iv) सड़कों एवं रेलवे ट्रैकों के साथ वृक्ष लाइनों में दोनों ओर (घनी पत्तियों वाले) लगाये जाने का प्रावधान करना चाहिए।

(v) रेलवे लाइनें, राजमार्ग तथा अन्य सड़कें आवासीय एवं व्यापारिक क्षेत्रों से दूर बनाई जायें। यदि आवश्यक हो तो इन्हें लिंक रोड से जोड़ा जाये।

(vi) यदि नवीन हवाई अड्डा बनाना हो तो उसे नगर से पर्याप्त दूर बनाना चाहिए तथा आबादी युक्त क्षेत्रों से विमानों का उड़ना या उतरना बचाया जाना चाहिए।

(vii) भवन के सामने वृक्ष अवश्य लगाने का प्रावधान किया जाना चाहिये।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

भारतीय मानक संस्थान द्वारा निर्धारित मानक (I.S.I. Standards for Noise Pollution)

भारतीय मानक संस्थान ने ध्वनि प्रदूषण रोकने हेतु कुछ दिशा निर्देश दिये हैं, जो निम्न प्रकार हैं—

(a) **हवाई अड्डों एवं मार्गों की स्थिति**—यदि नया हवाई अड्डा बनाया जाये तो उसे नगर से पर्याप्त दूरी पर बनाना चाहिये तथा आबादी वाले क्षेत्रों से विमानों को उड़ाने या उतारने से बचाना चाहिये।

(b) **रेलवे स्टेशनों तथा राजमार्गों की स्थिति**—रेलवे स्टेशन नगर के बाहरी भाग में बनाया जाना चाहिए ताकि नगर का कम से कम भाग शोर से प्रभावित हो। इसी प्रकार राजमार्ग नगर के बाहर से ले जाया जाये या फिर बाईपास बनाकर यातायात नगर के बाहर से गुजारा जाये। सड़कों के किनारे वृक्षारोपण अवश्य किया जाना चाहिये।

(c) **औद्योगिक क्षेत्रों की स्थिति**—औद्योगिक क्षेत्र आवासीय एवं व्यापारिक क्षेत्रों से दूर के बाहरी भाग में विकसित किये जाने चाहिये। औद्योगिक संस्थानों की संरचना ध्वनिरोधक होनी चाहिये।

औद्योगिक क्षेत्रों की परियोजना एवं स्थापना करते समय सामान्य वायु की दिशा का ध्यान अवश्य रखना चाहिये। हवा आने की दिशा के विपरीत दिशा में स्थापित औद्योगिक क्षेत्र ध्वनि प्रदूषण को काफी सीमा तक कम कर देता है।

भारतीय दण्ड संहिता की धारा 290 के अनुसार शोर से सार्वजनिक कष्ट होने पर शोर पैदा करने वाले को 200 रुपये जुर्माने का प्रावधान है जो ध्वनि प्रदूषण रोकने हेतु पर्याप्त नहीं है। इसके लिये वर्तमान परिस्थितियों के अनुकूल एक अधिनियम बनाया जाना चाहिये। इंग्लैण्ड, हॉलैण्ड, संयुक्त राज्य अमेरिका, रूस, आस्ट्रिया, डेनमार्क आदि देशों में पहले से ही ध्वनि प्रदूषण रोकने के लिये कठोर नियम बना रखे हैं। भारत में इस दिशा में कठोर कानून बनाने एवं उसे कठोरता से लागू करने की आवश्यकता है।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

अध्याय

6

पर्यावरणीय कानून (Environmental Legislation)

परिचय (Introduction)

शहरीकरण, औद्योगीकरण एवं अन्य सामाजिक गतिविधियों के चलते पृथ्वी के नैसर्गिक सौन्दर्य आज के समय में नष्ट होते स्पष्ट दिखाई पड़ रहे हैं। ताजमहल का कान्तिहीन होते जाना, अम्ल वर्षा, मौसम चक्र परिवर्तन, ग्लोबल वार्मिंग, स्वच्छ जल अनुपलब्धता, ओजोन पर्त का क्षय होते जाना, वायुमण्डलीय घटकों में परिवर्तन हो जाना इन सबसे सभी भिज्ञ हैं। इनसे जनित बीमारियों से मानव समुदाय को दो-चार होना पड़ रहा है। इस संकट का आभास ग्लोबल स्तर पर सन् 1972 में स्वीडन के स्टॉक होम में 144 देशों ने भाग लेकर पर्यावरण में होने वाले परिवर्तन पर गहरी चिन्ता व्यक्त करते हुए एक संगोष्ठी आयोजित की। हालांकि इस मुद्दे पर उस समय एक आम सहमति को गम्भीरता से नहीं लिया गया है। लेकिन फिर भी इस पर विचार करते हुए 1989 में Pans में सात विकसित देशों ने हिस्सा लिया और इस पर्यावरण मुद्दे पर रुख थोड़ा गम्भीर हुआ ज्ञात होता है कि विकसित देशों में कम जनसंख्या होने के बावजूद उनसे उत्सर्जित व्यर्थ से असर मात्र उन्हीं देशों पर नहीं बल्कि पूरी पृथ्वी पर इसका बुरा प्रभाव पड़ा है। वे इसी ग्लोबल प्रभाव की चपेट में आ रहे हैं। ये देश आज G-8 (जी-आठ) के रूप में संयुक्त होकर भूमण्डलीय पर्यावरण में सुधार हेतु पहल कर रहे हैं। ग्लोबल स्तर से पूर्व प्रत्येक देश ने अपने-अपने कुछ नियम, कायदे, कानून विधिक रूप से पर्यावरण की सुरक्षा एवं संरक्षण हेतु बनाये ताकि पर्यावरण को दूषित होने से रोका जा सके एवं इसकी स्वच्छता बचाई व बरकरार रखी जा सके। ऐसा करने के लिये सभी देशों ने अपनी-अपनी रणनीति तैयार की। बहिस्राव उपचार संयन्त्रों हेतु आबकारी कर (Excise duty) में छूट, संसाधनों के दोहन न करने हेतु सुझाव देना आदि सब औपचारिक कानून बनाये गये।

प्रत्येक नागरिक को पृथ्वी पर संसाधनों के संरक्षण हेतु नियमों से अवगत कराया गया एवं इसकी बाध्यता पर जोर दिया गया। पर्यावरण कानून के लागू होने से स्वतन्त्र रूप से प्राकृतिक सौन्दर्य के नष्ट होने पर अंकुश जरूर लगा। परन्तु इस समस्या का तुरंत निदान का कारण न बनने से एवं सरकारी व्यवस्था के चलते सारे नियम शिथिल होते गये। इसके लिये देश के प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है कि वह पर्यावरण विनष्टि को बचाये ताकि आने वाली पीढ़ी को इस संतुलित पर्यावरण का सुखद अहसास हो सके एवं धरोहर के रूप में हम उन्हें स्वच्छ वातावरण दे सकें।

पर्यावरण विधान (Environmental Legislation)

भारत में पर्यावरण संरक्षण का इतिहास बहुत पुराना है। हडप्पा संस्कृति पर्यावरण से ओत-प्रोत थी, तो वैदिक संस्कृति पर्यावरण-संरक्षण हेतु पर्याय बनी रही। भारतीय मनीषियों ने समूची प्रकृति ही क्या, सभी प्राकृतिक शक्तियों को देवता रूवरूप माना। ऊर्जा के स्रोत सूर्य को देवता माना तथा उसको 'सूर्य देवों भव' कहकर पुकारा। भारतीय संस्कृति में जल को भी देवता माना गया है। सरिताओं को जीवन दायिनी कहा गया है, इसीलिये प्राचीन संस्कृतियाँ सरिताओं के किनारे उपजीं और पनपी। भारतीय संस्कृति में केला, पीपल, तुलसी, बरगद, आम आदि पेड़ पौधों की पूजा की जाती रही है। मध्यकालीन एवं मुगलकालीन भारत में भी पर्यावरण प्रेम बना रहा। अंग्रेजों ने भारत में अपने आर्थिक लाभ के कारण पर्यावरण को नष्ट करने का कार्य प्रारम्भ किया। विनाशकारी दोहन नीति के कारण पारिस्थितिकीय असन्तुलन भारतीय पर्यावरण में ब्रिटिश काल में ही दिखने लगा था। स्वतन्त्र भारत के लोगों में पश्चिमी प्रभाव, औद्योगीकरण तथा जनसंख्या विस्फोट के परिणामस्वरूप तृष्णा जाग गई जिसने देश में विभिन्न प्रकर के प्रदूषणों को जन्म दिया।

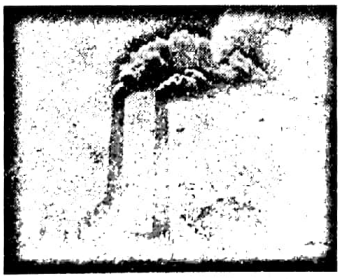

चित्र 6.1 : औद्योगिक वायु प्रदूषण द्वारा विनियमित हवा की गुणवत्ता कानून।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

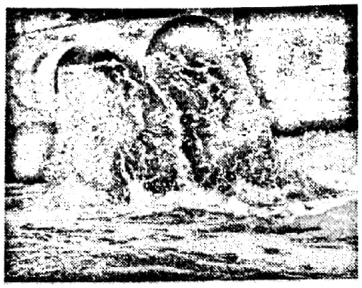

चित्र 6.2 : एक ठेठ तूफानी जल मुहाना, के अधीन पानी की गुणवत्ता कानून

चित्र 6.3 : नगर निगम के एक गड्ढे के अनुसार संचालित प्रबंधन कानून बर्बाद

स्वतन्त्र भारत में पर्यावरण नीतियाँ तथा कानून

भारतीय संविधान जिसे 1950 में लागू किया गया था परन्तु सीधे तौर पर पर्यावरण संरक्षण के प्रावधानों से नहीं जुड़ा था। सन् 1972 के स्टॉकहोम सम्मेलन ने भारत सरकार का ध्यान पर्यावरण संरक्षण की ओर खिंचा। सरकार ने 1976 में संविधान में संशोधन कर दो महत्त्वपूर्ण अनुच्छेद 48 ए तथा 51 ए (जी) जोड़ें। अनुच्छेद 48 ए राज्य सरकार को निर्देश देता है कि वह पर्यावरण की सुरक्षा और उसमें सुधार सुनिश्चित करे, तथा देश के वनों तथा वन्यजीवन की रक्षा करे। और सभी जीवधारियों के प्रति दयालु रहे। स्वतन्त्रता के पश्चात् बढ़ते औद्योगिकरण, शहरीकरण तथा जनसंख्या वृद्धि से पर्यावरण की गुणवत्ता में निरन्तर कमी आती गई। पर्यावरण की गुणवत्ता की इस कमी में प्रभावी नियन्त्रण व प्रदूषण के परिप्रेक्ष्य में सरकार ने समय-समय पर अनेक कानून व नियम बनाए। इनमें से अधिकांश का मुख्य आधार प्रदूषाण नियंत्रण व निवारण था।

पर्यावरणीय कानून व नियम निम्नलिखित है-

- जलु प्रदूषण सम्बन्धी-कानून
- रीवर बोडर्स एक्ट, 1956
- जल (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, 1977
- पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986
- वायु प्रदूषण सम्बन्धी कानून
- फैक्ट्रीज एक्ट, 1948
- इनफ्लेमेबल्स सबस्टा < सेज एक्ट, 1952
- वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, 1981
- पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986
- भूमि प्रदूषण सम्बन्धी कानून
- फैक्ट्रीज एक्ट, 1948
- इण्डस्ट्रीज (डेबलपमेंट एंड रेगुलेशन) अधिनियम, 1951
- इनसेक्टीसाइडस एक्ट, 1968
- अर्बन लैण्ड (सीलिंग एण्ड रेगयुलेशन) एक्ट, 1976
- वन तथा वन्यजीव सम्बन्धी कानून
- फोरेस्टस कंजरवेशन एक्ट, 1960

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

- वाइल्ड लाईफ प्रोटेक्शन एक्ट, 1972
- फोरेस्ट (कनजरवेशन) एक्ट, 1980
- वाइल्ड लाईफ (प्रोटेक्शन) एक्ट, 1995
- जैव-विविधता अधिनियम, 2002

भारत में पर्यावरण सम्बन्धित उपरोक्त कानूनों का निर्माण उस समय किया, गया था जब पर्यावरण प्रदूषण देश में इतना व्यापक नहीं था। अतः इनमें से अधिकांश कानून अपनी उपयोगिता खो चुके हैं। परन्तु अभी भी कुछ कानून व नियम पर्यावरण संरक्षण में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं।

प्रदूषण नियन्त्रण कानून (Pollution Control Legislation)

भारत में प्रदूषण को रोकने के लिये निम्न कानून बनाए गए हैं—

(1) जल प्रदूषण अधिनियम 1974 [The Water (Prevention and Control of Pollution) Amendment Act]

इस कानून के अन्तर्गत पेयजल की सुरक्षितता का संरक्षण तथा प्रदूषण को रोकना एवं नियन्त्रण पर विशेष रूप से बल दिया गया है। इस अधिनियम के अन्तर्गत जल स्रोतों में होने वाले प्रदूषणकारी तत्वों पर निगरानी रखना, उनको खोजना, उन्हें दूर करने के उपाय निकालना तथा उद्योगों व नगरपालिकाओं से उत्सर्जित प्रदूषित जल को छोड़ने वालों के विरुद्ध कानूनी कार्यवाही करना आदि प्रावधान वर्णित हैं। इस अधिनियम के अन्तर्गत राष्ट्रीय स्तर पर केन्द्रीय प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड का गठन किया गया।

(i) यह अधिनियम जल प्रदूषण की रोकथाम एवं नियन्त्रण के लिए बनाया गया है। इसके माध्यम से बोर्डों (Boards) का गठन किया गया है जो जल प्रदूषण की रोकथाम व नियन्त्रण करते हैं। अधिनियम द्वारा बोर्डों को अधिकार एवं कर्त्तव्य प्रदत्त किए गए हैं।

(ii) प्रदूषण से तात्पर्य जल का अशुद्धिकरण अथवा उसमें भौतिक, रासायनिक या जीवविज्ञानी परिवर्तन करना है अथवा सीवेज (Sewage) या कोई अन्य औद्योगिक उत्सर्ग, जो कि सर्वसाधारण के लिए जल को हानिकारक अथवा किसी निजी, व्यावसायिक, औद्योगिक कृषि या अन्य किसी न्याय संगत कार्य के लिए अयोग्य या पशु-पक्षी अथवा जलीय वनस्पति के लिए अयोग्य कर दे।

(iii) केन्द्रीय प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड में एक पूर्णकालिक सभापति, 5 नामित अधिकारी, 5 नामित प्रान्तीय बोर्ड अधिकारी, 3 नामित गैर सरकारी व्यक्ति, 2 नामित औद्योगिक इकाई अधिकारी तथा पूर्णकालिक सचिव होगा।

(iv) प्रान्तीय बोर्ड में एक पूर्णकालिक सभापति, 5 प्रान्तीय सरकार नामित अधिकारी, 5 प्रान्तीय सरकार की स्वायतधारी संस्थाओं से नामित व्यक्ति, 3 नामित गैर सरकारी व्यक्ति, औद्योगिक इकाईयों के नामित व्यक्ति तथा पूर्णकालिक सचिव होगा।

(v) सदस्यों का कार्यकाल 3 वर्ष का है।

(vi) बोर्ड की मीटिंग 3 महीने में कम से कम एक बार होगी।

(vii) बोर्ड विशेष कार्यों के लिए कमेटी बना सकता है जिसमें बोर्ड तथा बाह्य दोनों प्रकार के व्यक्ति सदस्य हो सकते हैं।

(viii) केन्द्रीय बोर्ड के कार्य—

(a) केन्द्रीय सरकार को जल प्रदूषण सम्बन्धी सलाह देना।

(b) जल प्रदूषण विषेषज्ञों की ट्रेनिंग।

(c) जल प्रदूषण को रोकने हेतु राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम चलाना।

(d) सम्बन्धित तकनीकी व सांख्यिकी सूचना एकत्र, एकीकृत एवं प्रकाशित करना।

(e) प्रान्तीय बोर्डों के कार्यों का एकीकरण।

(f) प्रान्तीय बोर्डों को जल-प्रदूषण जाँच और शोध कार्य में सहायता प्रदान करना।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

(g) जल प्रदूषण सम्बन्धी जानकारी संचार माध्यमों द्वारा जन-साधारण को प्रदान करना।

(h) सरकार की सहायता से जल में मानक स्थापित करना तथा समय-समय पर उन्हें फिर से पुनरीक्षित करना।

(ix) प्रान्तीय बोर्ड के कार्य—

(a) प्रान्तीय सरकार के जल प्रदूषण रोकने के कार्यक्रम चलाना।

(b) जल उपचार के कारगर व सस्ते तरीके निकालना।

(c) सीवेज तथा उत्सर्गों का उपचार की दृष्टि से निरीक्षण करना।

(d) सीवेज तथा उत्सर्ग के उपयोगी प्रयोग ज्ञात करने के साथ-साथ इन्हें हटाने के उचित तरीके खोजना।

(e) जल प्रदूषण रोकने के लिए अनुसंधान कराना।

(f) प्रान्तीय सरकार को जल प्रदूषण से सम्बन्धी सलाह देना।

(g) जल प्रदूषण सम्बन्धी राज्य स्तर की सूचनायें एकत्रित, एकीकृत एवं प्रकाशित करना।

(h) जल प्रदूषण के मानक स्थापित एवं पुनरीक्षित करना।

(i) विशेषज्ञों की ट्रेनिंग में केन्द्रीय बोर्ड की सहायता करना।

(j) उपचार के मानक स्थापित करना।

(k) सरकार को उन उद्योगों की जानकारी देना जो हानिकारक उत्सर्ग बाहर छोड़ रहे हों।

(l) बोर्ड के सदस्य, अधिकारी या अधिकृत व्यक्ति किसी भी उद्योग का निरीक्षण कर सकते हैं।

(m) बोर्ड के सदस्य, अधिकारी या अधिकृत व्यक्ति भी उद्योग से उत्सर्ग जल का नमूना ले सकते हैं।

(n) किसी व्यक्ति को जानबूझकर कोई विषाक्त, प्रदूषित, नशीला पदार्थ किसी जल धारा में निर्गत करने का अधिकार नहीं हैं।

(o) कम्पनियों तथा सरकारी संस्थानों द्वारा नियमों का उल्लंघन करने पर दण्ड का प्रावधान है।

(p) नियमों का उल्लंघन करने पर तीन मास की सजा तथा 5 हजार रुपये तक जुर्माने का प्रावधान है।

इस अधिनियम के अन्तर्गत नियमों का उल्लंघन करने पर दण्ड (तीन माह की कैद) तथा पाँच हजार रुपये तक जुर्माने का प्रावधान है।

(2) वायु प्रदूषण अधिनियम (Air Pollution Act) 1981 तथा 1987 तक संशोधित

छठी पंचवर्षीय योजना (1980-85) में पुन: पर्यावरण पर ध्यान दिया गया। इससे पहले 1972 में यूनाइटेड नेशन (United Nation) के मानव पर्यावरण पर हुए अधिवेशन में भारत ने भाग लिया था। 'वायु प्रदूषण' से तात्पर्य किसी ठोस, द्रव या गैसीय वस्तु से है जो वायुमण्डल में इतनी सान्द्रता से एकत्रित हो कि व्यक्तियों अथवा अन्य जीवित वस्तुओं के लिये हानिकारक या वनस्पति या सम्पदा या पर्यावरण के लिये हानिकारक हो।

(1) केन्द्रीय बोर्ड वायु प्रदूषण की रोकथाम के लिये जल प्रदूषण बोर्ड की रोकथाम के अनुसार ही कार्य करेगा।

(2) प्रान्तीय बोर्ड, केन्द्रीय बोर्ड के सहयोग से, औद्योगिक इकाइयाँ, मोटर गाड़ियों के लिये वांछित वायु गुणवत्ता का निर्धारण करेंगे, जो क्षेत्र आधारित होगी।

(3) प्रान्तीय सरकार प्रान्तीय बोर्ड की सलाह पर मोटर गाड़ियों के धुँए के मानक निर्धारित कर सकती है।

(4) इस अधिनियम में वायु प्रदूषण पैदा करने वाले उद्योगों को आवासीय क्षेत्र से बाहर बनाने के लिए min दूरी का निर्धारण, चिमनी की ऊँचाई का निर्धारण करना, क्षेत्रीयकरण करना, वायु प्रदूषण पैदा करने वाली औद्योगिक इकाइयों की मॉनिटरिंग करना, प्रदूषण नियन्त्रण की कारगर इकाइयों का Implementation किये जाने हेतु डिजाइन करना, पब्लिक को वायु प्रदूषण की रोकथाम हेतु टी० वी०, अखबार, आदि के माध्यम से चेतना जागृत करना है। इसके अतिरिक्त नियमों का उल्लंघन करने पर 6 वर्ष तक कैद तथा जुर्माने का प्रावधान है और कम्पनियों तथा सरकारी संस्थाओं द्वारा नियमों का उल्लंघन करने पर दण्ड का प्रावधान है।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

(5) जल प्रदूषण नियन्त्रण के केन्द्रीय तथा प्रान्तीय बोर्ड वायु प्रदूषण नियन्त्रण कार्य भी करेंगे।

(6) केन्द्रीय बोर्ड का कार्य देश में वायु की गुणवत्ता अच्छी करना तथा वायु प्रदूषण की रोकथाम व नियन्त्रण करना है।

(7) प्रान्तीय बोर्ड भी तदनुसार कार्य करेंगे।

(8) प्रान्तीय सरकार किसी क्षेत्र को वायु नियन्त्रण क्षेत्र घोषित कर सकती है व प्रान्तीय बोर्ड की सलाह से इन क्षेत्रों में परिवर्तन भी कर सकती है।

(9) प्रान्तीय सरकार प्रान्तीय बोर्ड की सलाह पर किसी पदार्थ विशेष के किसी वायु प्रदूषण नियन्त्रण क्षेत्र में ज्वलन पर रोक लगा सकती है।

(10) प्रान्तीय सरकार प्रान्तीय बोर्ड की सलाह पर किसी वायु प्रदूषण नियन्त्रण क्षेत्र में किसी उपकरण विशेष के प्रयोग पर रोक लगा सकती है।

(11) प्रान्तीय बोर्ड निर्देश निर्गत कर सकते हैं।

(12) प्रान्तीय बोर्ड किसी वायु प्रदूषणकारी क्रिया-कलाप रोकने के लिए उचित न्यायालय में आवेदन कर सकते हैं।

(13) प्रान्तीय बोर्ड के सदस्य, अधिकारी या अधिकृत व्यक्ति किसी स्थान विशेष का निरीक्षण कर सकते हैं। उपकरण विशेष की जाँच कर सकते हैं तथा सूचना प्राप्त कर सकते हैं और नमूने एकत्र कर सकते हैं।

(14) कम्पनियों तथा सरकारी संस्थाओं द्वारा नियमों का उल्लघंन करने पर दण्ड का प्रावधान है।

(15) नियमों का उल्लघंन करने पर 6 वर्ष तक की सजा तथा जुर्माने का प्रावधान है।

(3) पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1986 (Environment Protection Act 1986)

5 जून से 16 जून, 1972 के मध्य स्टॉकहोम में मानव पर्यावरण पर विश्व सम्मेलन आयोजित हुआ तथा पर्यावरण संरक्षण विश्वस्तरीय मुद्दा बना। इस समस्या पर सभी विकसित देशों ने गहरा चिन्तन व मनन किया। भारतवर्ष ने पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 को अधिनियमित किया। इस अधिनियम को 23 मई, 1986 को राष्ट्रपति द्वारा अपने हस्ताक्षर द्वारा सहमति व स्वीकृति प्रदान की गई तथा 26 मई, 1986 के राजपत्र में यह प्रकाशित किया गया। धारा 1 (3) की अपेक्षानुसार अधिसूचना के पश्चात् 19 नवम्बर, 1986 को यह प्रवृत्त हुआ और तभी से यह अधिनियम पूरे भारत में लागू है।

इस अधिनियम के प्रमुख उद्देश्य अग्रांकित हैं—

(1) 'पर्यावरण प्रदूषक' से तात्पर्य किसी ठोस द्रव अथवा गैसीय पदार्थ से है जो इतनी सान्द्रता में हो कि पर्यावरण के लिये हानिकारक सिद्ध हो।

(2) पर्यावरण का संरक्षण करना तथा उसमें आवश्यक सुधार करना।

(3) मानव प्राणियों, जीवों, पादपों एवं सम्पत्तियों को वायु प्रदूषण के परिसंकट से बचाना।

(4) मानवीय पर्यावरण सुरक्षा व स्वास्थ्य को खतरा पैदा करने वालों के लिए निरोधात्मक दण्ड की व्यवस्था करना।

(1) इस अधिनियम में वर्णित मुख्य प्रावधान निम्नांकित हैं—

(1) पर्यावरण संरक्षण कार्य में प्रान्तीय सरकारों के कार्यों को नियमित करना।

(2) पर्यावरण गुणता के मानकों को निर्धारित करना।

(3) उन क्षेत्रों का निर्धारण करना जिनमें सुरक्षा उपायों के साथ विभिन्न औद्योगिक संस्थान स्थापित किये जा सकते हैं।

(4) पर्यावरण प्रदूषण के कारण होने वाली दुर्घटनाओं से बचाव के कारगर सुरक्षात्मक तरीके निर्धारित करना।

(5) घातक (Hazardous) सामग्री को उठाने-रखने की सुरक्षात्मक कार्यविधि का निर्धारण।

(6) पर्यावरण प्रदूषण की रोकथाम के लिये शीघ्र कार्य।

(7) पर्यावरण प्रदूषण शोध प्रयोगशालाओं का स्थापन या मान्यता प्रदान करना।

(8) मैनुअल, गाइड, बुक, कोड आदि को तैयार करना।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

(9) पर्यावरण प्रदूषण सम्बन्धी सूचना एकत्र करना एवं प्रकाशित करना।

(10) पर्यावरण संरक्षण सम्बन्धी अन्य समुचित कार्य करना।

(2) अधिनियम के अनुसार पर्यावरण प्रदूषक उद्योगों को रोकने का आदेश देने के लिए सरकार सक्षम है।

(3) इस अधिनियम में केन्द्रीय सरकार को निम्नलिखित के मानक स्थापित करने का अधिकार प्रदान किया है—

(i) वायु, जल एवं मृदा के मानक।

(ii) घातक पदार्थों को उठाने, रखने के नियम।

(iii) विभिन्न स्थानों पर उद्योग-धन्धे लगाने पर रोक।

(iv) दुर्घटना की रोकथाम की कार्य-प्रणाली के मानक।

(4) अधिनियम में सरकार को संस्थानों का निरीक्षण करने, नमूने लेने तथा उद्योग कार्य रोकने का अधिकार दिया गया है।

(5) इस अधिनियम में नियमों का उल्लंघन करने पर एक लाख तक जुर्माना व 5 वर्ष की कैद का प्रावधान है और कम्पनियों तथा सरकारी संस्थानों द्वारा नियमों का उल्लंघन करने पर दण्ड का प्रावधान है।

भयावह रसायनों के निर्माण, भण्डारण एवं आयात (संशोधन) नियम 2000
(Manufacture, Storage and Import of Hazardous Chemical Amendment Rules 2000)

यह नियम केन्द्र सरकार के गजट सं० S.O. 966 (E) दिनांक 27 नवम्बर, 1989 में प्रकाशित होने के दिन से ही पूरे देश में लागू हुआ। इस नियम का संशोधन (Amendment) vide S.O. 57 (E) दिनांक 19 नवम्बर, 2000 में किया गया। सबसे पहले यह नियम पर्यावरण संरक्षण अधिनियम (Environment Protection Act, E.P.A. 1986) के खण्ड 6, 8 व 25 के द्वारा जारी किया गया है। भयावह रसायनों का उपयोग करने वालों को संभावित दुर्घटनाओं की पहचान कर लेनी चाहिये और पर्याप्त सुरक्षा उपाय भी अपनाने चाहिये तथा इन रसायनों से प्रभावित होने वाले व्यक्तियों को समुचित जानकारी देनी चाहिये और भयावह रसायनों के पात्रों पर विशिष्ट सूचनाओं के लेबल लगा देने चाहिये। उद्योग में कार्य प्रारम्भ करने से पहले सुरक्षा रिपोर्ट प्रस्तुत करनी चाहिये। कार्य स्थल पर आकस्मिक योजनायें हमेशा तैयार तथा कार्यशील अवस्था में रखना और भयावह रसायनों के आयात के सभी अभिलेख तैयार रखने चाहिये।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

पर्यावरणीय प्रभाव का मूल्यांकन
(ENVIRONMENTAL IMPACT ASSESSMENT, E.I.A.)

परिचय (Introduction)

सम्पूर्ण विश्व के किसी भी क्षेत्र का पर्यावरण एक गतिशील सत्ता है जो उस क्षेत्र के वायुमण्डल, स्थलमण्डल, जीवमण्डल एवं जलमण्डल के मध्य जटिल पारस्परिक अन्तर्सम्बन्ध के समुच्चय को प्रदर्शित करता है। यह सदैव सतत् परिवर्तन की स्थिति में रहता है। प्रकृति में ये परिवर्तन काफी धीरे-धीरे होते हैं। प्रकृति में ये परिवर्तन पर्यावरण के लिये अहितकर दृष्टिगोचर हो रहा है। वर्ष 1960 के बाद ऐसा अनुभव किया गया कि तीव्र विकास, खेती का विकास, औद्योगीकरण, संसाधनों का दोहन इत्यादि का पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। आर्थिक उन्नति एवं विकास जीवन की गुणवत्ता में सुधार लाते हैं। परन्तु साथ ही ये पर्यावरण की गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं जो कि लम्बे समय में जीवन की गुणवत्ता पर अपना विपरीत प्रभाव डाल सकते हैं जिससे सभी विकास कार्यों का मूल उद्देश्य ही पूर्ण नहीं होगा। अत: विकास कार्यों की योजनाओं में पर्यावरण के विषय में समुचित विचार करने की परम आवश्यकता है। विकास कार्यों एवं पर्यावरण संरक्षण में संतुलन बनाये रखने की अत्यधिक आवश्यकता है। भारत सरकार ने संसाधनों की सुरक्षा एवं सामाजिक उत्थान को दृष्टिगत रखते हुए पर्यावरण एवं वन मन्त्रालय की स्थापना की जिसके अन्तर्गत विभिन्न विकास परियोजनाओं एवं उद्योगों का पर्यावरण प्रभाव के मूल्यांकन का शुभारम्भ किया गया। पर्यावरण प्रभाव के मूल्यांकन हेतु उद्योगों के लिये स्थान का चयन, प्रयुक्त प्रौद्योगिकी तथा उत्सर्जन से निकलने वाले पदार्थों के उपचार की विधि इत्यादि का अध्ययन किया जाता है।

परिभाषा (Definition)

स्वच्छ एवं शुद्ध वातावरण सम्पूर्ण मानव एवं जीव-जन्तुओं के लिये अति आवश्यक है। पूर्व में जनसंख्या कम होने के कारण पदार्थ कम व्यर्थ होता था तथा जो कुछ पदार्थ अपशिष्ट हो जाता था, वह प्राकृतिक कारकों से उदासीन हो जाया करता था जिस कारण मानव अन्य बीमारियों एवं परेशानियों से काफी दूर था। परन्तु आज पर्यावरण, जनसंख्या वृद्धि, वाहनों एवं उद्योगों से निकले जहरीले धुएँ, तीव्र ध्वनि, वनों की कटाई आदि से प्रदूषित होता जा रहा है। विकासात्मक गतिविधियों का पर्यावरण तत्वों के साथ सामंजस्य स्थापित करने की परम आवश्यकता है। अत: इन लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतु पर्यावरणीय मूल्यांकन (Environmental Impact Assessment or E.I.A.) योजनाकारों के लिये उपलब्ध एक कारगर उपाय है। इसे निम्न प्रकार से परिभाषित किया जा सकता है—

"किसी विकास योजना के बारे में कोई बड़ा निर्णय लेने अथवा कोई आश्वासन देने से पूर्व उसके जैव भौतिक, सामाजिक एवं अन्य प्रासंगिक प्रभावों को पहचानने, भविष्यवाणी करने, आकलन करने तथा शमन करने की प्रक्रिया पर्यावरणीय प्रभाव का मूल्यांकन कहलाती है।"

"The Process of indentifying, predicting, evaluating and mitigating the biophysical, social and other relevant effects of development proposals prior to major decisions being taken and commitment made is called as Environmental Impact Assessment (E.I.A.)."

भारत में पर्यावरणीय प्रभाव का मूल्यांकन
(Environmental Impact Assessment in India)

भारत में पर्यावरणीय प्रभाव के मूल्यांकन का शुभारम्भ 1976-77 में तब हुआ था जब योजना आयोग ने विज्ञान एवं तकनीकी विभाग से नदी घाटी परियोजनाओं को पर्यावरणीय दृष्टिकोण से दृष्टिपात करने के लिए कहा गया। भारत सरकार ने

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

23 मई, 1986 को पर्यावरण सुरक्षा कानून लागू किया। कानूनी प्रक्रिया अपनाने के पश्चात 27 जनवरी, 1994 को एक अधिसूचना जारी की गई और इसके बाद 4 मई 1994, 10 अप्रैल 1997 एवं 27 जनवरी 2000 में इस कानून में संशोधन किये गये, जिसमें 30 गतिविधियों के लिए पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन को प्रभावी एवं वैज्ञानिक बनाया गया। पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन (E.I.A.) को नियन्त्रित करने वाला यह प्रमुख कानून है।

पर्यावरणीय प्रभाव के मूल्यांकन के उद्देश्य
(Objectives of E.I.A.)

पर्यावरणीय प्रभाव के मूल्यांकन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं—

(1) विकास योजनाओं के प्रतिकूल सार्थक जैव भौतिक, सामाजिक एवं अन्य प्रासंगिक प्रभावों का पूर्व ज्ञान प्राप्त करना, उनसे बचना, उन्हें कम करना अथवा उनकी क्षतिपूर्ति करना।

(2) पर्यावरणीय विचार विमर्श का स्पष्ट रूप से उल्लेख करना एवं उसे विकास योजनाओं में सम्मिलित करना।

(3) प्रकृति के नियमों एवं पारिस्थितिक प्रक्रियाओं, जो प्राकृतिक क्रियाओं का निष्पादन करती हैं, की क्षमता एवं उत्पादकता को सुरक्षा प्रदान करना।

(4) ऐसे विकास कार्यों को बढ़ावा देना जो स्थायी हों तथा प्रबन्धीय अवसरों एवं संसाधनों का सर्वश्रेष्ठ उपभोग करते हों।

पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन की विधियाँ
(Environmental Impact Assessment Methods)

(1) प्रारम्भिक छानबीन (Initial Screening)—लागू की जाने वाली विकास परियोजना के बारे में सर्वप्रथम यह तय करने की आवश्यकता होती है कि क्या वास्तव में इस परियोजना के पर्यावरण पर प्रभावों के मूल्यांकन की आवश्यकता है अथवा नहीं। इस प्रकार प्रारम्भिक छानबीन से हमें ऐसी परियोजनाओं की जानकारी मिल जाती है जो पर्यावरणीय गंभीर प्रभाव उत्पन्न नहीं करती है।

(2) तीव्र पर्यावरण प्रभाव मूल्यांकन (Rapid Environmental Impact Assessment)—किसी परियोजना से पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने का आभास होने पर तीव्र पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन किया जाता है। यह कार्य निम्नलिखित चरणों में किया जाता है—

(i) परियोजना के पर्यावरण पर मुख्य प्रभावों की पहचान करना।

(ii) स्थानीय क्षेत्र अथवा सम्पूर्ण क्षेत्र पर परियोजना के प्रभावों का मूल्यांकन करना।

(iii) मूल्य लाभ का विश्लेषण (Cost Benefit Analysis) शीघ्रता से करना।

(iv) ऐसे विवादित विषयों की सूची तैयार करना जिनका समाधान नहीं हो सका है एवं जिनका विस्तार से परीक्षण करना आवश्यक है।

अत: तीव्र पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन किसी परियोजना के केवल उन प्रमुख विषयों की पहचान करता है जिन पर उपलब्ध संसाधनों के अनियन्त्रित व्यय से पर्यावरण प्रभावित हो रहा है जिससे इन पर समुचित ध्यान दिया जा सके। अनुपयोगी विषयों को, जिन पर और अध्ययन की आवश्यकता नहीं है, को छोड़ दिया जाता है। इस प्रकार संसाधनों का सर्वोत्तम उपभोग करने में मदद मिलती है। इस प्रकार के मूल्यांकन में जनता, निजी संगठन एवं विशेषज्ञों से विचार-विमर्श करके अन्तिम निर्णय लिये जाते हैं तथा कभी-कभी मूल्यांकन हेतु वैज्ञानिक परीक्षण भी करने पड़ते हैं।

(3) विस्तृत, पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन (Comprehensive Environmental Impact Assessment)—इस मूल्यांकन के अन्तर्गत निम्न प्रकार की सूचनाएँ आकलित एवं संग्रहित की जाती हैं—

(i) बेस लाइन डाटा (Base Line Data)

(ii) प्रभावों की पहचान (Impact Identification)

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

(iii) प्रभावों की भविष्यवाणी (Impact Prediction)

(iv) प्रभावों का मूल्यांकन (Evaluation of Impact)

(v) योजनाओं का प्रबोधन एवं न्यूनीकरण उपाय (Mitigative measures and monitoring plans)

(vi) निर्णायकों एवं समाज को सूचित करना (Informing the society and decision makers)

(i) बेस लाइन डाटा (Base Line Data)—परियोजना की विवेचना, प्रकृति तथा क्षेत्र में होने वाले क्रियाकलापों की तीव्रता की जानकारी एकत्रित करना ही मूल सूचनाएँ कहलाती हैं। बेस लाइन डाटा के अन्तर्गत वायुमण्डल, जलमण्डल, स्थलमण्डल एवं जीवमण्डल की समुचित जानकारी भी सम्मिलित होती है। जनसंख्या घनत्व, उम्र एवं लिंग वितरण, जातीय समूह, बीमारी एवं मृत्यु दर, शिक्षा का स्तर आदि की सूचना विकास कार्यों के समाज पर प्रभावों के मूल्यांकन के लिये बहुत महत्वपूर्ण हैं।

(ii) प्रभावों की भविष्यवाणी (Impact Prediction)—इस स्तर पर परियोजना के चालू होने पर उस क्षेत्र पर पड़ने वाले प्रभावों एवं द्वितीयक प्रभावों का परीक्षण किया जाता है। जैसे—परियोजना के निस्राव (Effluent) को किसी समीपस्थ जल धारा में मिश्रित करने से पेयजल की गुणवत्ता यदि खराब हो जाए तो इसका द्वितीयक प्रभाव यह होगा कि इस दूषित जल में मछलियों का उत्पादन घट जायेगा जो उस क्षेत्र के मछुआरों को आर्थिक हानि पहुँचायेगा। इसका परिणाम यह होगा कि उस क्षेत्र के मछुआरे किसी दूसरे स्थान को पलायन कर जायेंगे या अपनी जीविका के किसी अन्य साधन को अपना लेंगे जिससे उस क्षेत्र में अपराधों की संख्या बढ़ सकती है।

(iii) प्रभावों की पहचान (Impact Identification)—इस स्तर पर विश्लेषण किया जाता है कि क्या होगा जब परियोजना क्रियान्वयन की स्थिति में पहुँच जायेगी? ऐसे प्रश्नों का उत्तर प्रभावों की पहचान से प्राप्त होता है। परियोजना चालू हो जाने पर सम्भावित परिवर्तनों की सूची पहले से ही तैयार कर ली जाती है। जैसे आस-पास की वायु की गुणवत्ता में परिवर्तन, जल एवं मृदा गुणों में परिवर्तन, ध्वनिस्तर, जीव-जन्तुओं की प्रजातियाँ, जंगली जानवर, सामाजिक एवं सांस्कृतिक पद्धतियाँ, रोजगार का स्तर आदि। इसके अतिरिक्त धुएँ के उत्सर्जन, जल की खपत तथा निस्राव के विसर्जन के स्रोतों की भी पहचान करना जरूरी होता है।

(iv) प्रभावों का मूल्यांकन (Impact Evaluation)—इससे हमें सम्भावित परिवर्तनों की वास्तविकता के विषय का बोध होता है अर्थात् "क्या परिवर्तन वास्तव में होंगे?" यदि परियोजना को ऐसे स्थान पर क्रियान्वित किया जाए जिसके आस-पास का क्षेत्र बहुत ही कम जैविक बस्ती वाला है तथा जहाँ पर बहुत कम आबादी निवास करती हो, तो ऐसे क्षेत्र में परिवर्तन में होने वाले थोड़े परिवर्तनों को छोड़ा जा सकता है; यद्यपि सघन आबादी वाले क्षेत्र में यदि परियोजना क्रियान्वित हो तो क्षेत्र में होने वाले अल्प प्रभावों को नगण्य नहीं माना जा सकता है। बल्कि इनको कम करने के समुचित उपाय करने चाहिये अथवा परियोजना को किसी अन्य उचित स्थान पर स्थानान्तरित कर दिया जाना चाहिए।

(v) योजनाओं का प्रबोधन एवं न्यूनीकरण उपाय (Mitigative Measures and Monitoring Plans)—यदि विकास कार्यों के सार्थक अथवा प्रभावी परिवर्तन हैं तब प्रभावों को कम करने के उपायों (mitigating measures) का परीक्षण करना पड़ता है। अत: सार्थक प्रतिकूल प्रभावों को रोकने, कम करने, छुटकारा पाने अथवा प्रतिपूर्ति करने के उपाय प्रस्तावित किये जा सकते हैं। शमन अथवा न्यूनीकरण के संभावित उपाय निम्न प्रकार हो सकते हैं—

(i) क्षतिग्रस्त संसाधनों को पुन: स्थापित करना, प्रभावितों को आर्थिक सहायता देना, अन्य विषयों में छूट प्रदान करना एवं सामाजिक जीवन शैली में सुधार करना।

(ii) प्रदूषण नियन्त्रण के उपाय, अपशिष्ट जल उपचार (waste treatment) एवं प्रबोधन (monitoring)।

(iii) परियोजना स्थल, मार्ग, कच्चा माल, संचालन विधि, प्रक्रम, निस्तारण मार्ग (disposal routes) एवं अभियांत्रिकी अभिकल्पना में परिवर्तन करना।

उपरोक्त किये गये उपायों की एक कीमत होती है। इस कीमत (मूल्य) को उत्पाद की कीमत (Cost) में सम्मिलित कर दिया जाता है। विभिन्न उपायों को अपनाकर प्रोजेक्ट की पृथक-पृथक लागत की गणना कर ली जाती है। इससे निर्णायकों को परियोजना के विषय में अन्तिम निर्णय लेने में काफी आसानी होती है।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

पर्यावरण प्रबन्ध (Environmental Management)

पर्यावरण एक जटिल प्रक्रिया है। पर्यावरण प्रबन्ध द्वारा मुख्यत: पर्यावरणीय प्रक्रियाओं एवं जैव प्रणालियों का अनुरक्षण, जैव विविधता की रक्षा, पर्यावरणीय प्रदूषण का नियन्त्रण, जनसंख्या स्थिरीकरण, व्यर्थ पदार्थों का पुन:उपयोग, भूमि अपघटन का नियन्त्रण तथा जैव प्रजातियों एवं पर्यावरणीय तन्त्रों का सतत् उपयोग इत्यादि कार्य सम्पन्न होते हैं। प्रबन्ध का अर्थ है विविध वैकल्पिक सुझावों में से जागरूकता, पूर्ण चयन जिसमें मान्य एवं वांछित लक्ष्यों के प्रति वचनबद्धता हो प्रबन्ध के अन्तर्गत वास्तविक अल्पकालिक उद्देश्यों की पूर्ति हेतु निर्मित रणनीति या रणनीतियों की सुविचारित स्वीकृति को सम्मिलित किया जाता है। इसमें दीर्घकालीन चयनों के संरक्षण के लिये पर्याप्त लचीलापन होना चाहिये।

पर्यावरण प्रबन्ध के उद्देश्य (Objectives of Environmental Management)

व्यक्ति अथवा समाज की वरीयताओं तथा आवश्यकताओं के अनुसार पर्यावरण प्रबन्ध के अनेक प्रकार के उद्देश्य होते हैं। सामान्यत: पर्यावरण प्रबन्ध का मुख्य उद्देश्य पर्यावरण की गुणवत्ता को बनाये रखना है। पर्यावरण गुणवत्ता का विश्लेषण भिन्न-भिन्न व्यक्ति भिन्न-भिन्न प्रकार से करते हैं। पर्यावरण प्रबन्ध के मुख्य उद्देश्यों को निम्न प्रकार से व्यक्त किया जा सकता है—

(1) सौन्दर्य प्रसाधनों, मनोरंजन तथा आवश्यकताओं की पूर्ति सुनिश्चित करने हेतु पर्यावरण की गुणवत्ता का संरक्षण करना।

(2) उत्पादन और नवीनीकरण के संतुलित चक्र के माध्यम से उपयोगी वनस्पतियों, पदार्थों के अनवरत उत्पादन को सुनिश्चित करना।

पर्यावरणीय प्रबन्ध के महत्वपूर्ण पहलू (Important Aspects of Environmental Management)

पर्यावरण प्रबन्ध के अन्तर्गत निम्नलिखित प्रकार के कार्य आते हैं—

1. पर्यावरण प्रदूषण पर नियन्त्रण।
2. पर्यावरणीय प्रक्रियाओं एवं जैव प्रणालियों का अनुरक्षण।
3. भूमि अपघटन का नियन्त्रण।
4. समन्वित भूमि उपयोग।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

5. व्यर्थ पदार्थों का पुनः उपयोग।
6. जैव विविधता की रक्षा।
7. जनसंख्या स्थिरीकरण।
8. वनों के विनाश एवं रेगिस्तान की वृद्धि की रोकथाम।
9. जैव प्रजातियों तथा पर्यावरणीय तन्त्रों का सतत् उपयोग।
10. पर्यावरण संगत मानव बस्तियों का निर्माण।
11. पर्यावरण शिक्षा, जागरूकता व अधिनियम।

पर्यावरण प्रबन्ध के अंग
(Parts of Environmental Management)

पर्यावरण प्रबन्ध को निम्न वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—

(i) पर्यावरणीय नियोजन (Environmental Planning)

(ii) पर्यावरणीय स्थिति का आकलन (Environmental status evaluation)

(iii) पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन (Environmental impact assessment)

(iv) पर्यावरणीय अधिनियम एवं प्रशासन (Environmental acts and administration)

पर्यावरण प्रबन्ध पद्धति
(Environmental Management System) (E.M.S.) (ISO-14000)

यद्यपि संस्थायें पर्यावरण का ही अंग होती हैं फिर भी वे पर्यावरण पर प्रभाव छोड़ती हैं। प्रत्येक व्यवसाय अपने-अपने प्रकार से पर्यावरण को प्रभावित करता है। पर्यावरण प्रबन्ध पद्धति का मुख्य उद्देश्य संस्थानों को पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों को नियंत्रित करने तथा कम करने के लिये मार्गदर्शन देना है।

पर्यावरण प्रबन्ध पद्धति का विकास
(Evolution of E.M.S.)

विश्व के विभिन्न भागों में हुई दुर्घटनाओं एवं पर्यावरण जागरूकता के कारण विश्व स्तर पर प्रदूषण कम करने की आवश्यकता अनुभव की गयी। वर्ष 1993 में मान्ट्रियल कान्फ्रेंस (Montreal Conference) आयोजित की गयी जिसमें वर्ष 2000 तक क्लोरो फ्लोरो कार्बन (CFC) गैस की मात्रा को कम करने का निर्णय लिया गया।

विभिन्न प्रकार के प्रदूषकों का मुख्य प्रभाव निम्न प्रकार है—

1. जंगलों की समाप्ति
2. ओजोन पर्त का नष्ट होना
3. अम्ल वर्षा एवं बंजर भूमि का बढ़ना
4. पादप गृह प्रभाव

प्रदूषण नियन्त्रण के उद्देश्य से बहुत से अधिनियम समय-समय पर बनाये गये हैं। अन्तर्राष्ट्रीय मानक संस्थान (International Standard Organisation – ISO) ने एक नीतिगत सलाहकार समिति (Strategic Advisory Group on Environment – 'SAGE') स्थापित की। इसे समिति ने वर्ष 1995 में प्रकाशित किया।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

प्रश्न 5. ग्रीन ट्रिब्यूनल (National Green Tribunal-NGT) से आप क्या समझते हैं? विस्तार में समझाइए।

उत्तर: ग्रीन ट्रिब्यूनल (National Green Tribunal-NGT): नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल एक्ट 2010 में भारतीय संसद में पेश हुआ। जिसमें एक ऐसे ट्रिब्यूनल के बनने की बात कही गई जो पर्यावरण के मुद्दों पर फैसला दे। यह एक्ट और इसके अंतर्गत बना ट्रिब्यूनल भारतीय नागरिकों के स्वस्थ पर्यावरण मिलने के अधिकार की बात करता है।

नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल का गठन 18 अक्टूबर 2010 में किया गया। यह पर्यावरण से जुड़े मुद्दों के प्रभावी और जल्दी निराकरण के लिए बनाया गया था। ये मुद्दें खासतौर पर पर्यावरण के अंतर्गत जंगलों की सुरक्षा और संरक्षण सुनिश्चित करने, अन्य प्राकृतिक स्त्रोतों का संरक्षण, पर्यावरण से जुड़े कानूनी अधिकारों की रक्षा और किसी नागरिक के अधिकारों के हनन पर उन्हें आर्थिक सहायता मुहैया कराने से जुड़े थे।

नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल को खासतौर पर ऐसे अधिकार दिए गए जिनके इस्तेमाल से पर्यावरण से जुड़े विवाद सुलझाए जा सकें। इस संस्था के द्वारा पर्यावरण से जुड़े विवादों को जल्दी सुलझाना और बड़े अदालतों पर से इस तरह के विवादों का भार कम कर संभव बनाना खास उद्देश्य था। इस ट्रिब्यूनल मे किसी भी विवाद को 6 महीने के भीतर सुलझानें की कोशिश की जाती है। प्रारंभ में, एनजीटी के पांच जगह ऑफिस खोलने की योजना थी। नई दिल्ली में इस ट्रिब्यूनल का मुख्य ऑफिस है। इसके अलावा ट्रिब्यूनल के ऑफिस भोपाल, पुणे, कोलकाता और चेन्नई में भी खोले जाएंगे।

इसमें पर्यावरण संरक्षण, वनों तथा अन्य प्राकृतिक संसाधनों से सम्बन्धित मामलों के प्रभावी और त्वरित निपटारे भी किए जाते हैं। यह ट्रिब्यूनल सिविल प्रोसीजर कोड 1908 के अन्तर्गत तय प्रक्रिया द्वारा बाधित नहीं है, बल्कि यह नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों द्वारा निर्देशित है। इसका मुख्य केन्द्र, दिल्ली में है। एनजीटी के चेयरमैन सुप्रीम कोर्ट के सेवानिवृत्त जज होते हैं। उनके साथ न्यायिक सदस्य के रूप में हाइकोर्ट के सेवानिवृत्त जज होते हैं। एनजीटी में सिर्फ इन कानून से जुड़ी बातों को चुनौती दी जा सकती है जो निम्न है:

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

जल (रोक और प्रदूषण नियन्त्रण अधिनियम, 1974)

वन संरक्षण कानून 1980

जल (रोक और प्रदूषण नियंत्रण) उपकर कानून, 1977

वायु (रोक और प्रदूषण नियंत्रण)अधिनियम, 1981

पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986

पब्लिक लायबिलिटी इन्श्योरेंस कानून, 1991

जैव विविधता कानून, 2002

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

प्रश्न 12. केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड को विस्तार से समझाइए।

उत्तर: केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (Central Pollution Control Board- CPCB): केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड देश में प्रदूषण नियंत्रण के कार्यान्वयन की सर्वोच्च संस्था है। इसकी स्थापना जल (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम, 1974 में अधीन सितम्बर, 1974 में की गई थी। प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिये भारत सरकार द्वारा उठाया गया यह कदम इस सन्दर्भ में सरकार की दृढ़ इच्छाशक्ति और निष्ठा का परिचायक

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

है। मौलिक रूप से जल प्रदूषण के नियंत्रण के लिये बनाई गई यह संस्था आज प्रत्येक प्रकार के प्रदूषण को नियंत्रित करने वाली शीर्ष संस्था है। वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधि नियिम, 1981 तथा पर्यावरण (सुरक्षा) अधिनियम, 1986 ने मिलकर केन्द्रीय बोर्ड के कार्यक्षेत्र को व्यापक बना दिया।

भारत सरकार ने प्रदूषण के निवारण एवं नियंत्रण के लिये जो कदम उठाए, उनमें प्रदूषण नियंत्रण से सम्बन्धित अधिनियम अत्यन्त महत्वपूर्ण तथ्य है कि वर्ष 1974 से पहले प्रदूषण नियंत्रण से सम्बन्धित कोई नियमित अधिनियम नहीं था। अप्रत्यक्ष रूप से फैक्ट्री एक्ट, 1948, बायलर एक्ट, 1923, रिवार बोर्ड एक्ट, 1956, इंडियन फिशरीज एक्ट, 187 तथा एटोमिक एनर्जी एक्ट, 1962 इत्यादि में अन्य प्रावधानों के साथ प्रदूषण नियंत्रण से सम्बन्धित प्रावधान भी थे। इन संक्षिप्त प्रावधानों में उद्देश्य पूरे नहीं हो पा रहे थे, इसलिये वर्ष 1962 में केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय ने घरेलू और औद्योगिक बहि:स्रावों से उत्पन्न प्रदूषण की समस्या से निपटने के लिये समिति का गठन किया। इस समिति का विचार था कि सरकार केन्द्र तथा राज्य स्तर पर इससे सम्बन्धित अलग से काननू बनाये। इस अनुशंसा के आधार पर सरकार ने केन्द्रीय स्तर पर कानून बनाने का निर्णय लिया।

23 मार्च 1974 को राष्ट्रपति से स्वीकृति मिलने के बाद जल (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम 1974 लागू हुआ। इस अधिनियम के प्रावधानों के अतंर्गत प्रत्येक राज्य में राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड तथा केन्द्रीय स्तर पर केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड की स्थापना की गई।

राज्य बोर्ड द्वारा अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों के कार्यान्वयन हेतु आर्थिक आवश्यकताओं को ध्यान रखते हुये वर्ष 1977 में जल (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) उपकरण अधिनियम 1977 पारित किया गया। वायु प्रदूषण नियंत्रण के लिये वर्ष 1981 में वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण), अधिनियम 1981पारित हुआ। उपरोक्त प्रावधानों को वृहत स्वरूप देने तथा खतरनाक रसायनों तथा अपशिष्टों को ध्यान में रखते हुये सरकार ने पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 लागू किया।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

प्रश्न 14. केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (सी.पी.सी.वी) के दायित्व एवं कार्य बताइये।

उत्तर: केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (सी.पी.सी.वी) के दायित्व एवं कार्य:

- भारत सरकार को जल एवं वायु प्रदूषण के निवारण एवं नियंत्रण तथा वायु गुणवत्ता में सुधार से सम्बन्धित किसी भी विषय में परामर्श देना।
- जल तथा वायु प्रदूषण की रोकथाम अथवा निवारण एवं नियंत्रण के लिए एक राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम की योजना तैयार कर उसे निष्पादित करना।
- राज्य बोर्डों की गतिविधियों का समन्वयन करना तथा उनके बीच उत्पन्न विवादों को सुलझाना।
- राज्य बोर्डों की तकनीकी सहायता व मार्गदर्शन उपलब्ध कराना, वायुप्रदूषण से सम्बन्धित समस्याओं तथा उसके निवारण, नियंत्रण अथवा उपशमन के लिए अनुसंधान और उसके उत्तरदायी कारणों की खोज करना।
- जल तथा वायु प्रदूषण के निवारण तथा नियंत्रण उपशमन के कार्यक्रमों में संलग्न व्यक्तियों के लिए प्रशिक्षण आयोजित करना तथा योजनाएं तैयार करना।
- जल तथा वायु प्रदूषण की रोकथाम अथवा नियंत्रण, निवारण पर एक विस्तृत जन-जागरूकता कार्यक्रम, मास मीडिया के माध्यम से आयोजित करना।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

- जल तथा वायु प्रदूषण और उसके प्रभावी निवारण, नियंत्रण अथवा रोकथाम के लिए किये गये उपायों के सम्बन्ध में तकनीकी तथा सांख्यिकीय आंकड़ों को संग्रहीत कर प्रकाशित करना।
- स्टेक गैस क्लीनिंग डिवाइसेस, स्टैक्स और डक्टस सहित मल-जल तथा व्यावसायिक बहि:स्रावों के विसर्जन तथा शोधन के सम्बन्ध में नियमावली, आचार संहिता और दिशा-निर्देश तैयार करना।
- जल तथा वायु प्रदूषण तथा उनके निवारण तथा नियंत्रण से सम्बन्धित मामलों में सूचना का प्रसार करना।
- सम्बन्धित राज्य सरकारों के परामर्श से नदियों अथवा कुओं के लिए मानकों को निर्धारित करना तथा वायुगुणवत्ता के लिए मानक तैयार करना, निर्धारित करना, संशोधित करना अथवा रद्द करना।
- भारत सरकार द्वारा निर्धारित किये गये अन्य कार्य निष्पादित करना।

प्रश्न 15. संघ शासित प्रदेशों के लिए राज्य बोर्ड के रूप में केन्द्रीय बोर्ड के कार्य क्या हैं? बताइये।

उत्तर: संघ शासित प्रदेशों के लिए राज्य बोर्ड के रूप में केन्द्रीय बोर्ड के कार्य:

- किसी परिसर की उपयुक्तता अथवा किसी उद्योग की अवस्थिति जिससे किसी नदी अथवा कुएं प्रदूषित हो रहे हैं, अथवा उनसे वायु प्रदूषण की सम्भावना हो, के विषय में संघ शासित प्रदेश की सरकारों को सलाह देना।
- सीवेज के शोधन तथा व्यावसायिक बहि:स्रावों तथा ऑटोमोबाइल्स के उत्सर्जनों, औद्योगिक संयन्त्र तथा अन्य किसी प्रदूषणकारी स्रोतों के लिए मानकों का निर्धारण करना।
- सीवेज और व्यावसायिक बहि:स्रावों का भूमि पर विसर्जन।
- सीवेज और व्यावसायिक बहि:स्राव तथा वायु प्रदूषण नियंत्रण उपस्करों हेतु विश्वसनीय और किफायती विधियों का उपयुक्त विकास वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम 1981 के अंतर्गत अधिसूचित क्षेत्रों अथवा केंद्र शासित प्रदेशों के क्षेत्रों में वायु प्रदूषण नियंत्रण क्षेत्र के रूप में अथवा किसी क्षेत्र का पता लगाना।
- परिवेशी जल तथा वायु की गुणवत्ता का मूल्यांकन करना, तथा अपशिष्ट जल शोधन स्थापनाओं, वायु प्रदूषण नियंत्रण उपकरणों, औद्योगिक संयन्त्रों अथवा विनिर्माण प्रक्रियाओं का निरीक्षण करना तथा जल तथा वायु प्रदूषण की रोकथाम तथा निवारण व नियंत्रण के लिए उठाये गये कदमों तथा उनकी निष्पादन क्षमता का मूल्यांकन करना।
- भारत सरकार की निर्धारित नीति के अनुसार केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने जल (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम, 1974, जल (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) उपस्कर अधिनियम, 1977 तथा वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम, 1981 के अंतर्गत संघ शासित प्रदेशों के विषय में अपनी शक्तियां तथा कार्य सम्बन्धित स्थानीय प्रशासनों को प्रत्यायोजित कर दी हैं। केंद्रीय बोर्ड अपने प्रतिपक्षों राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्डों के साथ पर्यावरणीय प्रदूषण के नियंत्रण तथा निवारण से सम्बन्धित विधानों के कार्यान्वयन के लिए उत्तरदायी है।

❑❑❑

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

अध्याय 7

ऊर्जा के उपयोग का पर्यावरण पर प्रभाव (Impact of Energy Usage on Environment)

भूमण्डलीय तापन (Global Warming)

वायु में कार्बन डाईऑक्साइड (CO_2) की मात्रा बढ़ने और हरित गृह प्रभाव (Green House Effect) के कारण पृथ्वी का तापमान लगातार बढ़ता जा रहा है जिसके फलस्वरूप ध्रुवों पर जमी बर्फ पिघलने लगेगी तथा उससे निकले पानी से समुद्र का तल बढ़ने लगेगा। इससे समुद्र तटीय नगर पानी में डूब जायेंगे, ध्रुव प्रदेशों पर बर्फ पिघलने लगेगी। तापमान बढ़ने से अनेक स्थान रहने योग्य नहीं रह जायेंगे। नई-नई बीमारियाँ उत्पन्न होंगी। ऐसी क्रियायें की जानी चाहिए, जिनसे तापक्रम घटे तथा वनों का प्रतिशत भी बढ़ाया जाना चाहिये। ग्रीन हाउस में काँच की दीवारों एवं छत से बना एक मकान होता है। इसके अन्दर पेड़-पौधों पर विभिन्न प्रयोग किये जाते हैं। इसी को ग्रीन हाउस कहते हैं। इस ग्रीन हाउस के अन्दर का तापमान काफी समय तक स्थिर रखा जा सकता है। पौधों के वातावरण का ताप ठण्डी हवाओं से कम नहीं हो पाता है। सूर्य से आने वाली सम्पूर्ण विकिरण अन्दर नहीं पहुँच पाती हैं और न ही अन्दर से विकिरण बाहर जाने पाता है। काँच का कार्य CO_2 एवं जल वाष्प के मिश्रण की ही भाँति होता है। CO_2 के ग्रीन हाउस की भाँति व्यवहार करने को ग्रीन हाउस प्रभाव कहते हैं।

कुछ अन्य गैसें भी ग्रीन हाउस प्रभाव उत्पन्न करती हैं। इसमें मुख्यत: कार्बन डाई ऑक्साइड (CO_2), मीथेन (CH_4), नाइट्रस ऑक्साइड (N_2O), क्लोरोफ्लोरो कार्बन (CFC) तथा हाइड्रोफ्लोरोकार्बन (HCF) गैसें होती हैं।

वर्ष 1850 में वायुमण्डल में उपरोक्त गैसों के सान्द्रण तथा वर्ष 2030 में सम्भावित सान्द्रण के कारण वायुमण्डलीय औसत तापमान में वृद्धि निम्नानुसार होने की सम्भावना है।

→ CO_2 के कारण 71% (लगभग)

→ CH_4 के कारण 13% (लगभग)

→ N_2O के कारण 5·5% (लगभग)

→ CFC तथा HFC के कारण 10·5% (लगभग)

भूमण्डलीय तापन के प्रभाव (Effects of Global Warming)

भूमण्डलीय औसत ताप के बढ़ने अर्थात् ग्लोबल वार्मिंग के प्रभाव निम्नलिखित हैं—

1. ध्रुवीय बर्फ का पिघलना—ध्रुवों पर जमी हुई बर्फ के रूप में लगभग 7 मिलियन घन मीटर पानी है। यदि सम्पूर्ण बर्फ पिघल जाये तो समुद्र का तल 7-8 मीटर तक ऊँचा उठ जायेगा जिससे कई द्वीप समूचे ही जल मग्न हो जायेंगे।

2. तापमान में वृद्धि—CO_2 की सान्द्रता इस समय 340 PPm है और सन् 2030 के लगभग इसके 640 PPm तक पहुँच जाने की सम्भावना है। यदि ऐसा हुआ तो भूमण्डल का औसत तापमान 1·5–4·5°C तक बढ़ जायेगा।

3. समुद्र तल का बढ़ना—भूमण्डल के औसत तापमान में 1·5 – 5·5°C की वृद्धि से समुद्र का तल 25 cm से 165 cm तक बढ़ जाने की सम्भावना है। पहला समुद्री जल का ऊष्मीय प्रसार एवं दूसरा ध्रुवीय बर्फ का पिघलना, अगर उपरोक्त कारणों से समुद्र तल बढ़ जाये तो खाड़ी के किनारे के क्षेत्र जैसे बांग्लादेश, अमेरिका का बोस्टन शहर, कोलकाता शहर आदि निचले शहरों के पूर्ण रूप से डूब जाने का खतरा उत्पन्न हो जायेगा।

4. प्रजातियों पर प्रभाव (Effects on Species)—प्रत्येक पादप एवं जन्तु एक विशेष तापक्रम सीमा में जीवित रहते हैं। ताप वृद्धि होने पर बहुत-सी प्रजातियाँ ध्रुवों की ओर स्थानान्तरित हो सकती हैं तथा कई प्रजातियाँ जल्द स्थानान्तरित न होने के कारण मर भी सकती हैं। बहुत से पेड़-पौधे विलुप्त हो सकते हैं।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

5. मौसम परिवर्तन—भूमण्डल के औसत तापमान में 3°C की वृद्धि से उच्च अक्षांश पर औसतन ताप 10°C तक बढ़ जायेगा। ग्रीन हाउस प्रभाव के कारण सर्दी की ऋतु छोटी एवं आर्द्र हो जायेगी तथा गर्मी की ऋतु लम्बी शुष्क हो जायेगी। ताप वृद्धि से वाष्पीकरण अधिक होगा एवं 7% से 11% तक वर्षा अधिक होने लगेगी।

6. अन्न उत्पादन (Food Production)—भूमण्डलीय ताप वृद्धि बीमारियों के अधिक बढ़ जाने, घास के अधिक उगने व पौधों की श्वसन क्रिया के तेज हो जाने के कारण फसलों की पैदावार घटा देती है। एक अनुमान के अनुसार दक्षिण पूर्व एशिया में चावल का उत्पादन प्रति 1°C ताप वृद्धि में 5% कम हो जायेगा यद्यपि वायुमण्डल में CO_2 सान्द्रण में वृद्धि फसलों की उपज बढ़ाने में सहायक होती है परन्तु विश्व का कुल अनाज उत्पादन भूमण्डलीय ताप बढ़ने पर घट जायेगा।

भूमण्डलीय तापन से बचाव के उपाय
(Remedial Measures with Global Warming)

भूमण्डलीय तापन से बचने के निम्नलिखित उपाय हैं—

1. जमीन के अधिक से अधिक भाग पर वृक्षारोपण करके वायुमण्डल में उपस्थित CO_2 का प्रकाश संश्लेषण कराके CO_2 का सान्द्रण कम कर सकते हैं।

2. भूगर्भीय ईंधन का प्रयोग कम करके तथा ऊर्जा के अन्य स्रोतों जैसे सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा आदि का विकास करके ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन कम किया जा सकता है।

3. क्लोरो फ्लोरो कार्बन (CFC) के स्थानापन्न का विकास करके भूमण्डलीय तापन कम किया जा सकता है।

ग्रीन हाउस गैसें (Green House Gases)

जलवायु परिवर्तन व तापमान वृद्धि का अध्ययन संयुक्त राष्ट्र की संस्था Intergovernmental Panel on Climate Change (IPCC) द्वारा किया जाता है। इसने अपनी चौथी समीक्षा रिपोर्ट वर्ष 2007 में प्रस्तुत की थी। इस रिपोर्ट के अनुसार यदि पर्यावरण में कार्बन की मात्रा 400 भाग प्रति मिलियन से अधिक हो जाती है, तो विश्व का तापमान 2°C की सीमा पार कर जायेगा। वर्तमान में पर्यावरण में कार्बन की मात्रा 380 प्रति मिलियन है। रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2100 तक विश्व तापमान में परिस्थितियों के अनुसार 1·1°C से 4·6°C तक वृद्धि हो सकती है। अत: वर्तमान में विश्व के तापमान में वृद्धि 2°C से कम होते हुए भी उसके आस-पास होगी।

विश्व तापमान में वृद्धि का प्रमुख कारण ग्रीन हाउस गैसों जैसे—कार्बन डाई-ऑक्साइड, मीथेन, नाइट्रियस ऑक्साइड, हाइड्रोफ्लोरो कार्बन, सल्फर डाई-ऑक्साइड आदि की मात्रा में वृद्धि होना है। इनकी मात्रा में वृद्धि का मुख्य कारण विकास कार्य, यातायात, औद्योगीकरण एवं वनों की कमी होना है। जब पर्यावरण में इन गैसों की मात्रा अधिक होती है तो ये गैसें सूर्य से आने वाली ऊष्मा को वापस आकाश में नहीं जाने देती जिससे पृथ्वी के तापमान में वृद्धि हो जाती है। इस घटना को ग्रीन हाउस प्रभाव भी कहते हैं।

अमेरिका सहित अन्य विकसित देश ग्रीन हाउस गैसों में कटौती के लिए किसी बाध्यकारी लक्ष्य को स्वीकार करने के लिए तब तक तैयार नहीं हैं, जब तक बड़े विकासशील देश जैसे भारत, चीन भी बाध्यकारी कटौती के लक्ष्य को स्वीकार नहीं करते। दूसरी तरफ विकासशील देशों का यह तर्क है कि अभी तक तापमान वृद्धि व कार्बन उत्सर्जन में सबसे अधिक योगदान विकसित देशों का है। अत: सबसे पहले विकसित देशों को कटौती करनी चाहिए। कार्बन वृद्धि में उनकी ऐतिहासिक जिम्मेदारी है दूसरी तरफ विकासशील देश अभी विकास के-लक्ष्य से दूर हैं। अत: कार्बन कटौती की बाध्यता बाद में थोपी जानी चाहिए। इन चारों देशों ने कोपेनहेगन सम्मेलन के दौरान जिस समूह का निर्माण किया था उसे BASIC समूह (Brazil, India, South Africa, China) के नाम से जाना जाता है।

ओजोन (Ozone O_3)

स्ट्रैटोस्फियर (Stratosphere) के ऊपरी भाग में कुल O_2 का 90% भाग मौजूद है। यह मानव जाति एवं जीव-जन्तुओं के लिये एक सुरक्षा कवच का कार्य करती है। सूर्य से आने वाली पराबैंगनी किरणों को रोकती है। लेकिन पृथ्वी पर इस गैस का

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

उपयोग संक्रामक, दोषनाशक (Disinfectant) के रूप में कपड़ों का रंग उड़ाने आदि में किया जाता है। ओजोन की हाइड्रोकार्बन से क्रिया बड़ी खतरनाक हो जाती है। इससे पैदा होने वाली गैसें धूम्र-कुहासे को जानलेवा बना देती हैं। सौर विकिरण के कारण ही ओजोन स्ट्रैटोस्फियर के ऊपरी भाग में बनती है। यह गैस खाँसी, दमा, सिर दर्द, आँख, नाक एवं गले की बीमारियाँ उत्पन्न करती हैं। ओजोन गैस पेड़-पौधों की पत्तियों में प्रवेश करके कोशिकाओं को नष्ट कर देती है और यह पेन्ट, रबर, बुनाई के धागे एवं रंगों को शीघ्र ही ऑक्सीकृत कर देती है।

भूतल पर ओजोन की उपस्थिति प्राणिजगत के लिये अत्यन्त ही हानिकारक है जबकि ऊपरी वायुमण्डल में यह गैस प्राणिजगत के लिये सुरक्षा कवच का कार्य करती है। गैस की पूर्ति सूर्य से निकलने वाली पराबैंगनी किरणों को अवशोषित कर लेती हैं जिससे मनुष्य इन हानिकारक विकिरणों के प्रभाव से सुरक्षित रहता है। पराबैंगनी किरणों को अवशोषित करके ओजोन गैस O_2 तथा O में बदल जाती है। दुबारा ये दोनों गैसें संयुक्त होकर O_3 बना देती हैं और साथ ही ऊष्मा का भी उत्सर्जन करती हैं।

$$O_3 \xrightarrow{\text{पराबैंगनी विकिरण}} O_2 + O$$

$$O_2 + O \longrightarrow O_3 + \text{ऊष्मा}$$

दोनों क्रियाओं में सन्तुलन बना रहता है। यह गैस स्ट्रैटोस्फियर में समुद्र तल से 20 से 26 किमी० की ऊँचाई के मध्य स्थित रहती है और यदि इस गैस को ऊर्ध्वाधरत: मानक ताप एवं दाब (0° सेल्सियस एवं 760 mm पारे का दाब) तक संपीडित किया जाये तो भूमध्य रेखा के ऊपर इसकी मोटाई 0·29 सेमी० (290 DU) तथा ध्रुवों के ऊपर इस पर्त की मोटाई 0·40 सेमी० (400 DU) पायी जाती है। ओजोन पर्त की मोटाई Dabson Unit (DU) में ज्ञात की जाती है।

1 DU = 0·01 mm संपीडित गैस (मानक ताप एवं दाब पर)

= 1 PPb (Part per billions)

पराबैंगनी विकिरण तीन प्रकार का होता है—

1. UV-A (320-400 nm)
2. UV-B (280-320 nm)
3. UV-C (200-280 nm)

UV-B तथा UV-C विकिरण काफी खतरनाक है जबकि UV-A खतरनाक नहीं है। सौभाग्य से UV-C ऊपरी वायुमण्डल में स्थित O_2 तथा O_3 के द्वारा अवशोषित कर ली जाती है। UV-B भी स्ट्रेटोस्फियर में O_3 द्वारा अवशोषित कर ली जाती है। इसका केवल 2 से 3 प्रतिशत भाग ही जमीन पर पहुँच पाता है।

ओजोन छिद्र या ओजोन रिक्तीकरण
(Ozone Hole or Ozone Depletion)

ओजोन परत के किसी स्थान पर पतले हो जाने को ही ओजोन छिद्र या ओजोन रिक्तीकरण कहते हैं। वर्ष 1956-1970 तक बसन्त ऋतु (फरवरी-अप्रैल) में एण्टर्टिका के ऊपर ओजोन पर्त की मोटाई 325 DU से 280 DU तक बदल गयी। वर्ष 1979 में यह तेजी से घटकर 225 DU रह गयी तथा वर्ष 1985 में यह मात्र 136 DU रह गयी, इसी कमी को ओजोन छिद्र कहा गया। 200 DU से अधिक मोटी पर्त सामान्य पर्त कहलाती है तथा इससे कम मोटाई की पर्त को ओजोन छिद्र की श्रेणी में माना जाता है।

कई प्रदूषक स्ट्रेट्रोस्फियर में पहुँचकर ओजोन पर्त को नष्ट करते हैं। जैसे क्लोरो फ्लोरो कार्बन (CFC_5), मीथेन (CH_4) तथा नाइट्रोजन के ऑक्साइड (NOx) इनमें से CFC_5 बहुत अधिक घातक हैं। CFC की ओजोन से क्रिया निम्न प्रकार है—

$$CFC_5 \xrightarrow{UV} Cl$$

Scanned with CamScanner

AKC TECHNICAL CLASSES

$$\text{Halons} \xrightarrow{UV} Br$$

$$Cl + O_3 \longrightarrow ClO + O_2$$

$$ClO + O_3 \longrightarrow Cl + 2\,O_2$$

वायुमण्डल में CFC विघटन पराबैंगनी किरणों द्वारा होता है तथा इससे क्लोरीन मुक्त होती है। यह क्लोरीन फिर O_3 से क्रिया करके क्लोरीन ऑक्साइड (ClO) बनाती है तुरन्त ही क्लोरीन ऑक्साइड विघटित होकर आक्सीजन परमाणु (O) मुक्त कर देती है जो कि अणुओं में परिवर्तित हो जाती है। इस प्रकार पुन: मुक्त हुई क्लोरीन फिर ओजोन से क्रिया करती है। क्लोरीन बिना नष्ट हुए ओजोन गैस को आक्सीजन में बदलती रहती है। यह क्लोरीन 100 वर्षों तक सक्रिय रहती है और HCl में परिवर्तित होने से पूर्व एक क्लोरीन परमाणु (Cl) एक लाख ओजोन अणुओं को नष्ट कर सकता है।

क्लोरो फ्लोरो कार्बन (CFC) का प्रयोग रेफ्रीजरेटर, वातानुकूल यंत्र, परफ्यूम, शेविंग फोम, पफ (PUF), अग्निशमन यंत्र, माइक्रोचिप्स धोने का घोल एवं कम्प्यूटर में इलेक्ट्रोनिक परिपथ बोर्ड बनाने में किया जाता है। CFC का जीवन काल (10-100) वर्ष का होता है। CFC का 90% वायुमण्डल में चला जाता है।

पराबैंगनी विकिरणों से कई तरह की बीमारियाँ उत्पन्न हो जाती हैं, जैसे—त्वचा रोग, त्वचा कैंसर, अंधापन एवं मोतिया बिन्द आदि। पराबैंगनी किरणें पौधों की बाढ़ प्रकाश संश्लेषण एवं फुलवाड़ी को काफी नुकसान पहुँचाती हैं। बहुत से पदार्थ जैसे लकड़ी, प्लास्टिक, रबड़ आदि भी क्षतिग्रस्त हो जाते हैं।

अम्ल वर्षा (Acid Rain)

सल्फर डाईऑक्साइड (SO_2) सल्फ्यूरस अम्ल H_2SO_3 बनाती हैं।

$$SO_2 + H_2O \longrightarrow H_2SO_3$$

अम्ल वर्षा जल के pH मान को कम कर देते हैं। जब वर्षा जल का pH मान 5·7 से कम हो जाता है तब यह अम्ल वर्षा कहलाती है। वायुमण्डल में उपस्थित नाइट्रोजन ऑक्साइड गैसें भी वर्षा जल से मिलकर नाइट्रिक अम्ल (HNO_3) बनाती हैं। अम्ल वर्षा कुल 60 से 70% सल्फर डाईऑक्साइड के कारण होती है। कार्बन मोनोऑक्साइड (CO) एवं कार्बन डाईऑक्साइड (CO_2) भी वर्षा जल के साथ कार्बोनिक अम्ल बनाते हैं जोकि जल को अम्लीय बना देते हैं। कुछ स्थानों पर अम्ल वर्षा का pH मान 2·8 तक पाया गया है। अम्ल वर्षा से होने वाले प्रभाव निम्नलिखित हैं—

1. पेड़ पौधों पर प्रभाव (Effect on Plants)—अम्ल वर्षा से पौधे नष्ट हो जाते हैं तथा पत्तों का रंग भी उड़ने लगता है एव पत्तों के क्लोरोफिल की कमी के कारण फसल की बढ़त भी रुक जाती है।

2. जीव-जन्तुओं पर प्रभाव (Effect on Animals)—जल में रहने वाले सभी जीव 4 से कम pH मान की वर्षा की एक बूँद भी सहन नहीं कर सकते हैं। सामान्यत: 6 से कम pH पर कई अल्गाई (algae) जैसी कोमल वनस्पतियाँ भी नष्ट हो जाती हैं।

3. पदार्थों पर प्रभाव (Effect on Materials)—सल्फ्यूरिक अम्ल एक तीव्र क्रियाशील एवं क्षयकारी (Corrosive) है। इसके प्रभाव से लोहे की सतह पर नीला $FeSO_4$, कॉपर की सतह पर हरा $CuSO_4$ एवं ऐलुमिनियम की सतह पर सफेद $Al_2(SO_4)_3$ जम जाता है। यह कपड़े, कागज तथा चर्म उत्पादों का रंग उड़ा देता है और उनकी सामर्थ्य भी नष्ट कर देता है।

अम्ल वर्षा से विशेषकर क्षारीय भवन निर्माण सामग्री जैसे चूना पत्थर, डोलोमाइट स्लेट एवं संगमरमर आदि खराब हो जाते हैं। इनकी सतह खुरदरी एवं कमजोर हो जाती है। $CaCO_3$ को यह $CaSO_4$ में बदल देता है जो जल में घुलनशील होता है।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

प्रकृति संरक्षण के अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास
(International Efforts for Conservation of Nature)

प्रकृति के संरक्षण हेतु किये गये कुछ अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास निम्नलिखित हैं—

1. वर्ष 1977 में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (UNEP) के सहयोग से ओजोन पर्त की सुरक्षा पर एक विश्वव्यापी योजना हेतु वाशिंगटन में 32 देशों की एक बैठक बुलायी गयी।

2. माँट्रियल प्रोटोकॉल (Montreal Protocol)—वर्ष 1987 में विश्व के 27 औद्योगिक देशों ने स्ट्रैटोस्फियर में स्थित ओजोन पर्त की सुरक्षा हेतु एक अन्तर्राष्ट्रीय सहमति पत्र पर हस्ताक्षर किये। इसी सहमति पत्र को माँट्रियल प्रोटोकॉल कहते हैं। इस प्रोटोकॉल के मुख्य बिन्दु निम्नलिखित हैं—

(i) ओज़ोन नष्ट करने वाले पदार्थों को बदल देना।

(ii) CFC के स्थान पर अन्य पदार्थों के प्रयोग में विकासशील देशों की सहायता करना।

(iii) ओजोन पर्त को नष्ट करने वाले पदार्थों का उत्पादन कम करना।

अब तक कुल 175 से अधिक देश इस सहमति पत्र पर हस्ताक्षर कर चुके हैं। भारत ने 17 सितम्बर 1992 को इस पर हस्ताक्षर किये थे। वर्ष 1987 से प्रत्येक वर्ष 5 जून को विश्व पर्यावरण दिवस के रूप में मनाया जाता है।

3. टोरन्टो सम्मेलन (Toronto Conference)—कनाडा के टोरन्टो सिटी में जून 1988 में एक विश्व सम्मेलन का आयोजन किया गया था जिसमें 2005 तक कार्बन डाईऑक्साइड (CO_2) के उत्सर्जन में 20% तक की कमी करने का निर्णय लिया गया था परन्तु इसके अनुपालन में अनेकों व्यावहारिक समस्याएँ थीं।

4. भू-शिखर सम्मेलन (Earth Summit)—संयुक्त राष्ट्र शिखर सम्मेलन (UNCED) वर्ष 1992 में पर्यावरण पर ब्राजील के रियोडी जैनेरो में आयोजित किया गया था। इसे ही भू-शिखर सम्मेलन कहते हैं। इस सम्मेलन में ग्रीन हाउस गैसों को कम करने पर विचार किया गया।

5. क्योटो प्रोटोकॉल (Kyoto Protocol)—दिसम्बर 1997 में जापान के क्योटो शहर में एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन किया गया। इसमें सभी देशों द्वारा तय किया गया कि वर्ष 2008 से 2012 तक ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में 1990 के स्तर से 5% की कमी अवश्य की जाये।

6. जून 1997 में न्यूयार्क में पृथ्वी सम्मेलन समीक्षा सम्मेलन आयोजित किया गया। इसमें 170 देशों से अधिक ने भाग लिया। इसमें ग्रीन हाउस प्रभाव तथा ओजोन छिद्र के खतरों पर चर्चा की गयी।

7. मराकस सम्मेलन—मोरक्को के मराकस शहर में वैश्विक ताप वृद्धि रोकने के लिये वर्ष 2001 में बनायी गयी आचार संहिता पर 165 देशों ने हस्ताक्षर किये।

8. सितम्बर 1998 में माँट्रियल (कनाडा) में 47 देशों की एक बैठक बुलायी गयी, जिसमें CFC तथा हैलन्स के उत्पादन पर 15 वर्ष में पूर्ण प्रतिबन्ध का निर्णय लिया गया।

ग्रीन बिल्डिंग (Green Buildings)

पिछले तीन से चार दशकों में, कई क्षेत्रों में जिनमें मानव सक्रियता से सक्रिय है, Cure की अवधारणा को निवारण की अवधारणा में बदलना शुरु हो गया है। समानान्तर में निर्माण उद्योग के भीतर, ग्रीन बिल्डिंग कॉन्सेप्ट अपने एक या दूसरे रूप में अस्तित्व में आया और यह अब दुनिया भर में अपनी गति प्राप्त कर रहा है।

ग्रीन बिल्डिंग कॉन्सेप्ट (Green Building Concept)

ग्रीन बिल्डिंग अवधारणा व्यापक शब्दों में, एक इमारत शामिल है, जो कि स्थायी स्वास्थ्य, सुधारकारी उत्पादउकता की रक्षा करने, बुद्धिमानी से प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करने और पर्यावरणीय प्रभाव को कम करने के उद्देश्य से डिजाइन, निर्मित, संचालित,रखरखाव या पुनः उपयोग की जाती है। दूसरे शब्दों में ग्रीन बिल्डिंग प्रक्रिया भवन निर्माण के पर्यावरणीय

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

चरण में पर्यावरण वम्बन्धी विचारों को शामिल करता है। यह प्रक्रिया डिजाइन, निर्माण, संचालन और रखरखाव चरणों पर केन्द्रित है और बहुत डिजाइन और विकास-मेंटल दक्षता, ऊर्जा और जल दक्षता, संसाधन दक्षता, इनडोर पर्यावरणीयता, भवन-मालिक रखरखाव और पर्यावरण पर भवन के समग्र प्रभाव को ध्यान में रखती है। ग्रीन बिल्डिंग अवधारणा के कुछ पहलुओं को नीचे उल्लिखित किया गया है।

प्लॉट डिजाइन, तैयारी और विकास (Plot design, Preparation and Development)

विचारशील और कुशल साइट डिजाइन, विकास प्रभाओं से पर्यावरणीसय प्रभावों को कम करने में मदद मिलती है और नए निर्माण ऊर्जाप्रक्रिया में सुधार होता है। पेड़ों को बचाने पर ध्यान देने के साथ डिजाइन तूफानी जल, प्रतिधारण/घुसपैट सुविधाओं का निर्माण और सौर ऊर्जा को अधिकतम करने के लिए घर को उन्मुख करना एक हरे रंग की इमारत में बुनियादी पहलू हैं।

संसाधन क्षमता (Resource Efficiency)

यह एक तथ्य है कि हरे रंग की इमारत सबसे सफल होती है, जब डिजाइन चरण में संकल्पना शामिल और कार्यान्वित किए जाते हैं और उसे समय पर जो सामग्री/उत्पाद/प्रणाली चयन होता है। प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग को अनुकूलित करते हुए संसाधन कुशल डिजाइन और उपयोग करने वाले कुशल सामग्री का उपयोग करके कार्य को अधिकतम किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, इंजीनियर लकड़ी के उत्पाद संसाधनों का उपयोग पारंपरिक टिम्बर की तुलना में ५० प्रतिशत से अर्धा संरचनात्मक लकड़ी का उपयोग करके संसासधनों को अनुकूलित करने में मदद कर सकते हैं लेकिन हमें इस तरक के उत्पादों के लाभ की तुलना प्रक्रिया के दौरान खपत होने वाली ऊर्जा से करनी आवश्यक है। इसे ध्यान में रखकर ही हमें चयन करना चाहिये। संसाधन कुशल निर्माण का उद्देश्य नौकरी-स्थल की बर्बादी को कम करना है। वास्तव में इस प्रकार की निर्माण प्रक्रिया से निर्माण सामग्री बचती है। एक निर्माण अपशिष्ट मानव-आयु योजना का पालन करने में मदद मिलती है। यह रिसाइकिल करने योग्य सामग्री के लिए उपलब्ध रीसाइक्लिंग सुविधाओं और बाजारों का लाभ उठाते हुए हासिल किया जा सकता है। यह निर्माण कचरे को कम से कम दो-तिहाई कम करने, बिल्डरों के लिए लागत बचत बनाने और लैंडफिल स्पेस पर बोझ को कम करने में मदद करेगा।

Green Building

Over the last three to four decades, in many fields in which human beings are activelyinvolved in, the concept of 'Cure' has begun to be transformed into the concept of Preven-tion, In parallel, within the construction industry, the Green Building Concept evolved andcame into existence in its one form or another and it has now been gaining its momentumrapidly across the world.

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

Resource efficiency

It is a fact that a green building is most successful when theconcepts are incorporated and implemented at the design phase - the time at whichmaterial/product/system selection occurs. Creating resource efficient designs and using iesource efficient materials can maximize function while optimizing tne usr: ct natural resources. For instance, engineered wood products can help optimize resources by using materials in which more than 50% more of the log is converted into structural timber than conventiona! dimensional timber. But we reed to weigh the benefit of such products against the amount of energy consumed during the process and accordingly make our selection.One aim of resource efficient construction is to reduce job-site waste. Invariably, there are leftover materials from the construction process. Adhering to a construction waste man-agernent plan helps reducing the quantity of landfill material. This can be achieved through taking advantage of available recycling facilities and markets for recyclable mate-rials, This will help reducing the construction waste by at least two-thirds, creating poten-tial cost savings for builders and reducing the burden on landfill space.

विपत्ति (Hazard)

परिभाषा (Definition)—ऐसी कोई भी खतरनाक घटना अथवा परिस्थिति, जिसमें घायल करने, जीवन समाप्त करने अथवा सम्पत्ति, प्राणी जगत एवं पर्यावरण को क्षति पहुँचाने की क्षमता हो या स्वास्थ्य बिगाड़ने का बड़े पैमाने पर कारण बने, इसे हम विपत्ति कहते हैं।

विपत्ति के प्रकार (Types of Hazard)

विपत्ति का वर्गीकरण उसके स्रोत के अनुसार कई प्रकार से किया जा सकता है, परन्तु मुख्य रूप से विपत्तियाँ दो प्रकार की होती हैं।

1. **प्राकृतिक विपत्तियाँ** (Natural hazards)—इसके अन्तर्गत प्राकृतिक रूप से उत्पन्न की गयी विपत्तियाँ सम्मिलित हैं, जैसे—भूकम्प, ज्वालामुखी विस्फोट, सुनामी, भूस्खलन, बाढ़, सूखा, प्रचण्डवात (hurricane), चक्रवात (cyclone), आग आदि।

2. **अप्राकृतिक विपत्तियाँ** (Unnatural hazards)—इसके अन्तर्गत मनुष्यों के द्वारा स्वयं उत्पन्न की गयी विपत्तियाँ सम्मिलित हैं, जैसे—विस्फोटक, जहरीली गैसों का रिसाव, रेडियोधर्मी विकिरण का रिसाव, बाँध फटना, वाहन दुर्घटनायें (विमान, ट्रेन, बस एवं कार दुर्घटना आदि), युद्ध, गृहयुद्ध, प्रदूषण आदि।

आपदा की परिभाषा (Definition of Disaster)

ऐसी कोई भी प्राकृतिक घटनायें, जिनके कारण सर्वव्यापी मानव हानि (Human loss), प्राणी जगत (Livelihood) एवं सम्पत्ति की हानि तथा मानवी पीड़ा (Human Suffering) होती है, आपदा कहलाती है।

दूसरे शब्दों में, प्राकृतिक अथवा मानव-जनित उन चरम घटनाओं को आपदा की संज्ञा दी जाती है, जो प्राकृतिक पारिस्थितिक तन्त्र के अजैविक तथा जैविक संघटकों की सहन-शक्ति की पराकाष्ठा या चरमसीमा हो जाती है। उनके द्वारा

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

उत्पन्न परिवर्तनों के साथ समायोजन करना दुष्कर हो जाता है, धन व जन की अपार क्षति होती है। प्रलयकारी स्थिति पैदा हो जाती है तथा ये चरम घटनाएँ विश्व स्तर पर समाचार पत्रों, रेडियो व दूरदर्शन इत्यादि विभिन्न समाचार माध्यमों की प्रमुख सुर्खियाँ बन जाती हैं। वास्तव में देखा जाए तो आपदायें (Disasters) उपलब्ध संसाधनों (Existing Infrastructure) का भारी विनाश करती हैं तथा भविष्य में होने वाले विकास का मार्ग अवरुद्ध करती हैं।

आपदा के प्रभाव (Effects of Disaster)

(i) समाज के सामान्य क्रिया-कलापों में गम्भीर अवरोध
(Serious disruption of normal functioning of Society)

(ii) प्राणियों एवं सम्पत्तियों की बड़े पैमाने पर हानि
(Large Scale loss to life and property)

(iii) आपदा में हुई क्षति का सामना करने के लिए बाहरी सहायता की आवश्यकता
(Need of external aid to cope with the losses)

आपदा का वर्गीकरण (Classification of Disaster)

स्रोत के आधार पर आपदा का वर्गीकरण अग्र प्रकार से किया जाता है—

1. **माप सम्बन्धी** (Meterological)—प्रचण्डवात (Hurricane), चक्रवात (Cyclone), बाढ़ (Flood), सूखा (Draught) आदि।

2. **स्थलाकृति सम्बन्धी** (Topographical)—भूस्खलन, बर्फ, वोल्डर एवं कीचड़ का प्रवाह (Avalanches)

3. **टेक्टॉनिक प्लेटों से सम्बन्धित** (Tectonic)—भूकम्प, ज्वालामुखी आदि।

4. **संक्रमण सम्बन्धी** (Infestic)—टिड्डी दल का फसलों पर आक्रमण, रोगाणु सम्बन्धी आपदायें (Epidemic), प्लेग, हैजा आदि।

5. **मानवी** (Human)—औद्योगिक दुर्घटनायें (जैसे भोपाल गैस काण्ड, चेरनोबेल दुर्घटना आदि) परमाणु बम आदि।

विपत्ति एवं आपदा में अन्तर (Difference between Hazard and Disaster)

आपदा विपत्ति का ही उत्पाद है। विपत्ति (Hazard) और असुरक्षा (Vulnerability) जब आपस में मिलते हैं, तब आपदा उत्पन्न होती है। बिना विपत्ति के अथवा बिना असुरक्षा के आपदा उत्पन्न नहीं हो सकती है। जैसे भूकम्प का आना एक विपत्ति है, जिसमें मानवीय, पर्यावरणीय एवं सम्पत्ति सम्बन्धी भारी क्षति पहुँचाने की क्षमता है। यदि उस क्षेत्र के लोगों में भूकम्प से असुरक्षा के प्रति पर्याप्त जागरूकता नहीं है। उनके आवास मिट्टी के घास-फूस की छत डालकर बनाये गये हैं अथवा साधारण ईंट चिनाई के बिना अभिकल्पन कराये बना लिये गये हैं तो भूकम्प के उस क्षेत्र में भारी जन-धन की हानि निश्चित है। परन्तु उस क्षेत्र में पहले से लोग भूकम्प के प्रति सचेत हैं। उनके मकानों में पर्याप्त भूकम्परोधी उपाय किये गये हैं तो वहाँ न्यूनतम क्षति होगी। दूसरी स्थिति में यह भूकम्प आपदा नहीं कहलायेगा जबकि प्रथम स्थिति में यह एक आपदा है। एक अन्य उदाहरण में यदि किसी परिवार के एकमात्र पैसा कमाने वाले व्यक्ति की किसी कार दुर्घटना में मृत्यु हो जाती है तो यह घटना उस परिवार के लिए एक आपदा है और उस समाज के लिए, जिसमें वह रहता था, मात्र एक दुर्घटना है।

भेद्यता या असुरक्षा (Vulnerability)

किसी विपत्ति के फलस्वरूप, जिस सीमा तक समाज के प्रभावित होने की सम्भावना है, उसे उस समाज की असुरक्षा कहते हैं। समाज में असुरक्षा, गरीबी, सूचना की कमी, दयनीय रहन-सहन, अपर्याप्त सुरक्षा उपाय आदि के कारण उत्पन्न होती है।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

असुरक्षा को प्रभावित करने वाले कारक (Factors affecting Vulnerability)

1. भौतिक कारण (Physical Factors)—समुद्र तटीय क्षेत्र में घास-फूस से बने मकान चक्रवात आने पर पूर्णत: असुरक्षित हैं, जबकि ईंट से बने मकानों पर चक्रवात का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। दूसरी ओर भूकम्प के समय ईंट का मकान पूरी तरह से धराशायी हो जाता है अर्थात् भूकम्प में ईंट के मकान भेद्य या असुरक्षित (Vulnerable) हैं जबकि घास-फूस के मकान भूकम्प के समय सुरक्षित रहते हैं। अत: किसी संरचना को सभी आपदाओं में भौतिक रूप से सुदृढ़ होना चाहिए।

2. आर्थिक एवं सामाजिक कारक (Economical and Social Factors)—आर्थिक एवं सामाजिक रूप से कमजोर तथा पिछड़े लोग (downtroden people) आपदाओं के प्रति ज्यादा असुरक्षित होते हैं, क्योंकि वे गाँवों के निचले इलाकों में रहने के लिए बाध्य होते हैं, जहाँ बाढ़ आने की हमेशा सम्भावना होती है। उनके मकान पक्के नहीं होते हैं, उनके पास असुरक्षित शरणस्थली (Shelter), शिक्षा, जागरूकता एवं संसाधन जुटाने की क्षमता नहीं होती है। उनके पास सीमित संसाधन होने के कारण आपदा का सामना (Cope) करने की क्षमता नहीं होती है। इसी कारण भारत जैसे विकासशील देश में आपदा के कारण व्यापक विनाश होता है, जबकि विकसित देशों में आपदा का सामना करने की क्षमता काफी अधिक पाई जाती है।

3. उम्र एवं लिंग (Age and Sex)—किसी भी आपदा के समय हुई विनाशलीला में यह देखा गया है कि गर्भवती एवं दूध पिलाने वाली महिलायें, बच्चे, वृद्ध पुरुष किसी आपदा के समय स्वस्थ पुरुषों की तुलना में अधिक असुरक्षित होते हैं। भूकम्प एवं चक्रवात के समय मरने वालों में महिलाओं, बच्चों एवं वृद्ध पुरुषों की संख्या काफी अधिक होती है।

4. जनसंख्या वृद्धि (Population Growth)—जनसंख्या वृद्धि से ही गरीबी बढ़ती है। गरीबी बढ़ने से लोग रोजगार प्राप्त करने हेतु शहरों की ओर भागते हैं और ऐसे इलाकों में रहने के लिए बाध्य हो जाते हैं, जिनमें आपदा (जैसे बाढ़, भूस्खलन आदि) आने की सम्भावना होती है।

5. असुरक्षित क्षेत्र में बस्ती (Settlement in unsafe area)—पहाड़ी क्षेत्र भूकम्प एवं भूस्खलन से पूर्णत: असुरक्षित होते हैं। निचले इलाकों में बाढ़ की हमेशा सम्भावना बनी रहती है।

आक्रमण की गति (Speed of Onset)

आक्रमण की गति के आधार पर आपदा दो प्रकार की होती है—

1. तीव्र (Quick)
2. धीमी (Slow)

1. तीव्र (Quick)—कुछ आपदायें बिना किसी पूर्व चेतावनी के बहुत जल्दी आ जाती हैं। अत्यन्त सूक्ष्म समय में विनाश ही विनाश दिखाई देता है। ऐसी आपदाओं में जीवन और सम्पत्ति बचाने के लिए कोई समय नहीं होता है, जैसे—भूकम्प, सुनामी, भूस्खलन आदि।

2. धीमी (Slow)—कुछ आपदायें धीरे-धीरे आती हैं। ऐसी आपदाओं के आने पर जीवन एवं सम्पत्ति दोनों को बचाने का पर्याप्त अवसर रहता है। हम सुरक्षा उपाय अपनाकर आपदा के प्रभाव को कम कर सकते हैं।

खतरा (Risk)

किसी क्षेत्र में विशिष्ट तीव्रता की आपदा के कारण सम्भावित हानियों, जैसे—मृत्यु, घायल, सम्पत्ति, आर्थिक कार्य-कलाप आदि की माप को खतरा (Risk) कहते हैं।

जब विपत्ति की तीव्रता उच्च हो तथा क्षेत्र की भेद्यता भी अधिक हो, तब उस क्षेत्र में आपदा का खतरा (Disaster Risk) भी काफी अधिक होता है। इसके विपरीत हल्की विपत्ति एवं कम भेद्यता की स्थिति में आपदा का खतरा भी कम रहता है। आपदा के खतरे को निम्न सूत्र से ज्ञात करते हैं—

$$\text{आपदा का खतरा} = \frac{\text{विपत्ति} \times \text{भेद्यता}}{\text{क्षमता}}$$

AYC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

$$\text{Disaster Risk} = \frac{\text{Hazard} \times \text{Vulnerability}}{\text{Capacity}}$$

क्षमता (Capacity)—किसी समाज द्वारा किसी विपत्ति के प्रभाव को कम करने के लिए किये गये उपायों एवं व्यवस्थाओं की सामर्थ्य को ही समाज की क्षमता कहते हैं।

कुछ उदाहरण (Some Examples)

1. भारत में 70% से अधिक कृषि योग्य भूमि सूखाग्रस्त है।
2. कृषि योग्य भूमि का 12% भाग बाढ़ग्रस्त रहता है।
3. कृषि योग्य भूमि का लगभग 8% भाग चक्रवात से प्रभावित रहता है।
4. भारत की कुल भूमि का 60% भाग भूकम्प सम्भावित क्षेत्र में आता है।
5. कश्मीर एवं उत्तर पूर्व का क्षेत्र आतंकवाद एवं युद्ध की सम्भावनाओं से ग्रसित है।

खतरा उत्पन्न करने वाले कारक (Factors Responsible for Risk)

(a) क्षेत्रीय पर्यावरण को खतरा उत्पन्न करने वाले कारक निम्न हैं—
- (i) कूड़े करकट का ढेर।
- (ii) अनाधिकृत पेट्रोल, डीजल एवं अन्य ज्वलनशील पदार्थ बेचने वाली दुकानें।
- (iii) रसायन उत्पादक कारखाने।
- (iv) अनाधिकृत पटाखों की दुकानें।
- (v) नंगे बिजली के तार।
- (vi) संकरी गलियाँ।
- (vii) नाभिकीय रिएक्शन।

(b) घरों के लिए खतरनाक कारक निम्न हैं—
- (i) ज्वलनशील पदार्थ, मिट्टी का तेल आदि।
- (ii) बन्द घर।
- (iii) पेट्रोल एवं डीजल का घर में अनाधिकृत भण्डार।
- (iv) गैस सिलिण्डर।
- (v) पुरानी विद्युत फिटिंग एवं खुले तार।
- (vi) लकड़ी का फर्नीचर।
- (vii) प्लास्टिक के दरवाजे, फिटिंग एवं अन्य सामान।
- (viii) अव्यवस्थित कपड़ों का ढेर।

(c) कार्यालय/विद्यालय को निम्न कारक खतरनाक बनाते हैं—
- (i) फाइलों का ढेर।
- (ii) भण्डार की सामग्री।
- (iii) टूटा हुआ फर्नीचर।
- (iv) अग्निशमन उपकरण का न होना।
- (v) भण्डार कक्ष।
- (vi) पुरानी विद्युत फिटिंग के कारण शॉर्ट सर्किट।
- (vii) पुरानी जर्जर इमारतें।

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

प्रश्न 10. फ्रेंडली बिल्डिंग मेटीरियल से आप क्या समझते है?

अथवा

अनुकूल निर्माण सामग्री को समझाइये।

उत्तर: फ्रेंडली बिल्डिंग मैटीरियल:

1. मिट्टी: भारत में हमेशा से निर्माण के रूप में मिट्टी (मिट्टी) का सबसे अधिक प्रयोग होता रहा है। यह भारतीय संस्कृति का हिस्सा है। परम्परागत रूप से विभिन्न क्षेत्रों की स्थलाकृति, जलवायु एवं आवश्यकताओं के आधार पर मिट्टी (कच्ची मिट्टी) के घर बनाये जाते थे। भारत वर्ष में लगभग गांव में अभी भी 25 से 30% कच्ची मिट्टी के मकान बनाये जाते हैं। जोकि सभी प्रकार से अनुकूल होते हैं

2. लकड़ी: भारत वर्ष में लकड़ी को निर्माण सामग्री के रूप में अधिक बल दिया जाता है। जिससे भवनों एवं इमारतों में सुन्दरता एवं मजबूती आती है तथा जंगलों से आसानी से प्राप्त की जाती है।

लकड़ी का प्रयोग अधिकतर पहाड़ी क्षेत्रों में घर बनाने एवं फर्नीचर आदि के रूप में किया जाता है।

3. प्लास्टिक: आज कल प्लास्टिक का भी प्रयोग फर्नीचर के रूप में होने लगा है तथा मकानों में डेकोरेशन बिल्डिंग, खिड़की आदि में प्रयोग किया जाता है।

फ्रेंडली बिल्डिंग मेटेरियल सस्ते एवं मजबूत तथा टिकाऊ एवं वातावरण के अनुसार अनुकूल भी होते हैं।

प्रश्न 11. रिसाइकल सामग्री (Recycling material) या पुन: सक्रित करना सामग्री से आप क्या समझते हैं?

उत्तर: रिसाइकल सामग्री (Recycling materials): हमारा प्राथमिक उद्देश्य यह होना चाहिए कि प्रयोग की गयी सामग्री का पुन: उपयोग करें, गंदगी कम फैलायें और इस प्रकार अभी तक हम अपने पर्यावरण को जितनी क्षति पहुंचा चुके हैं उसका परिहार करें।

आर्थिक कम्पनियों के उभरते सितारे एयरोस्पेस ऑप्टिकल इंजीनियरिंग सभी प्रकार के कम्प्यूटर एवं इलेक्ट्रॉनिक उपकरण जलपोत उद्योग तथा पुनर्नवीनीकृत ऊर्जा स्रोत तथा शक्ति-उद्योग यहां अपना अलग स्थान रखते हैं।

रीसाइक्लिंग या पुनर्चक्रण का अर्थ है कि कचरे या पुराने ठोस पदार्थ को कुछ नये रूप की सामग्री में बदलना रीसाइक्लिंग

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

कहलाता है जैसे-पेपर, प्लास्टिक, ग्लास और धातु जैसे एल्यूमीनियम और स्टील सभी का आमतौर पर पुनर्नवीनीकरण किया जाता है।

आजकल लोग पुनर्चक्रण होने वाले उत्पादन के बारे में नहीं जानते हैं। इस प्रकार के उत्पाद से पुरानी सामग्री या बेकार की वस्तुओं को वातावरण में फेंकने से वातावरण को सुरक्षित रखा जा सकता है। और पुनर्चक्रण अपने कच्चे माल के घटकों को नई सामग्री में परिवर्तन कर रहा है और फिर नए उत्पादों के निर्माण में नई सामग्री को प्रतिस्थापित करने के लिए इन्हें फिर से उपयोग किया जाता है।

प्रश्न 12. ग्रीन बिल्डिंग कंसेप्ट (Concept of green building) पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

उत्तर: ग्रीन बिल्डिंग कंसेप्ट: इसकी स्थापना 2001 में कनफेडरेशन ऑफ इंडियन इंडस्ट्री (CII) के द्वारा की गई थी।

- अर्थव्यवस्था में भवन क्षेत्र (Building sector) के तेजी से उभरने के कारण इस क्षेत्र में हरित अवधारणा (Green concept) एवं प्रौद्योगिकी के विकास की आवश्यकता महसूस की गई, ताकि इस क्षेत्र के उभरने के क्रम में यह संपोषणीय तरीके से वृद्धि करे।
- बिल्डिंग सेक्टर में हरित अवधारणा एवं प्रौद्योगिकी का विकास कई राष्ट्रीय मुद्दों को सुलझाने में मदद कर सकता है। जैसे-जल सक्षमता, ऊर्जा सक्षमता, जीवाश्म ईंधन प्रयोगों में कमी, उपभोक्ता अपशिष्टों का निपटारा, प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण आदि।

इस अवधारणा के द्वारा न सिर्फ पर्यावरण हितैषी कार्यों का बल मिलता है बल्कि ये भवन धारक (Building occupant) के स्वास्थ्य के भी अनुकूल होते हैं। इस कारण राष्ट्रीय प्राथमिकताओं की पूर्ति हेतु IGBC (Indian Green Building Council) द्वारा Green New Building Rating System लाया गया।

❑❑❑

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner

AKC TECHNICAL CLASSES

Scanned with CamScanner